ISBN: 978-81-951800-9-7

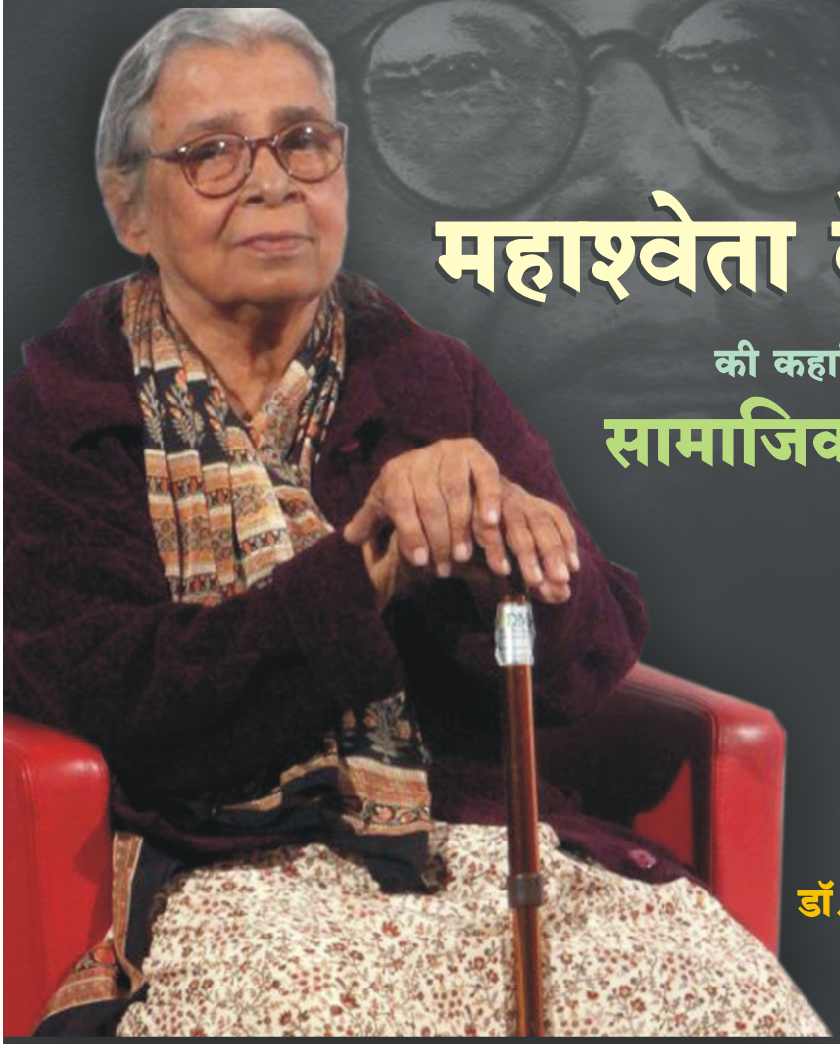

महाश्वेता देवी

की कहानियों में

सामाजिक चेतना

लेखिका
डॉ. सुरेखा जवादे

Aditi Publication
Raipur, Chhattisgarh, India

महाश्वेता देवी की कहानियों में सामाजिक चेतना

लेखिका
डॉ. सुरेखा जवादे
भिलाई, जिला–दूर्ग, छत्तीसगढ़, भारत

Publisher
Aditi Publication, Raipur, Chhattisgarh, INDIA

महाश्वेता देवी की कहानियों में सामाजिक चेतना

2021
Edition - **01**
Date of Publication : 23/06/2021

लेखिका
डॉ. सुरेखा जवादे
भिलाई, जिला–दूर्ग, छत्तीसगढ़, भारत

ISBN : **978-81-951800-9-7**

Copyright© All Rights Reserved
No parts of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted, in any form or by any means, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without prior written permission of original publisher.

Price : Rs. **350/-**

Printed by
Yash Offest,
Lily Chowk, Purani Basti Raipur
Tahasil & District Raipur Chhattisgarh, India

Publisher :
Aditi Publication,
Near Ice factory, Opp Sakti Sound Service Gali,
Kushalpur, Raipur, Chhattisgarh, INDIA
+91 9425210308

प्राक्कथन

प्रस्तुत पुस्तक सात अध्याय में विभक्त है। इसका प्रारम्भ प्राक्कथन या भूमिका है जो विषय प्रवेश है। हिन्दी कहानियों की शिष्ट अर्थात् लिखित परंपरा भारतेंदु युग से प्रारम्भ होकर विभिन्न पड़ावों से गुजरती आज की लोकप्रिय विधा बनी हुई है। इसमें समाज व साहित्य का संबंध व साहित्य के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए उसका संबंध सामाजिक चेतना से जोड़कर देखा गया है। सन् 1984 में प्रकाशित श्रेष्ठ कहानियों में महाश्वेता देवी ने लिखा है कि साहित्य को केवल भाषा शैली और शिल्प की कसौटी पर रखकर देखने के मापदण्ड गलत है। साहित्य का मूल्यांकन इतिहास के परिप्रेक्ष्य में होना चाहिए। किसी लेखक के लेखन को उसके समय और इतिहास के परिप्रेक्ष्य में रखकर न देखने से उसका वास्तविक मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है। इस बहुप्रतीक्षित कार्य का शोध का विषय बनाकर मैनें नवीन उद्‌भावना देने का विनम्र प्रयास किया है।

महाश्वेता देवी के शब्दों में 'मैं पुराकथा या पौराणिक चरित्र और घटनाओं को वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में फिर से यह बताने के लिए लिखती हूँ कि वास्तव में लोक–कथाओं में अतीत और वर्तमान एक अविच्छिन्न धारा के रूप में प्रवाहित होते हैं। यह अविच्छिन्न धारा भी वायवीय नहीं हैं बल्कि जांत–पांत खेल और जंगल पर अधिकार, खेत और सबसे ऊपर सत्ताधारी वर्ग की, सत्ता के विस्तार तथा उसके कायम रखने की पद्धति को केंद्र में रखकर निम्न वर्ग के मनुष्य के शोषण का क्रमिक इतिहास है।'

'मूर्ति'और उसके बाद की कहानियाँ भी सताये हुए लोगों

की संघर्ष की कहानियाँ है। जिससे लेखिका का बहुत ही गहरा सम्बंध है। कहानियों में चित्रित शोषित वर्ग के संघर्ष का कहीं मार्मिक चित्रण है तो कहीं कठोर। महाश्वेता देवी की कहानियों में सामंती ताकतो के शोषण एवं उत्पीड़न का संघर्ष अनवरत जारी है।

पीड़ित वर्ग हमेशा से ही धुतकारा जाता है। उसे इतनी उलाहना दी जाती है कि वह कभी भी सामंती ताकतों के समक्ष खड़ा न हो सके, केवल जिंदा लाश बनकर उनकी सेवा करता रहे और शोषण का शिकार होता रहे। सामंती ताकतो की क्रूरता एवं बर्बरता के सामने वह हमेशा ही कमजोर बना रहे है। महाश्वेता देवी की कहानियों मे भूख, गरीबी, अज्ञानता, सामाजिक कुरीतियों, महिला उत्पीड़न एवं बाहुबलियों के अत्याचार, मजदूरों का शोषण और किसानों की बदहाली को दर्शाया गया है।

पश्चिम बंगाल की इस प्रख्यात लेखिका द्वारा बीसवी सदी में लिखा गया साहित्य इक्कीसवी सदी की समस्याओं से मेल खाता है। लेखिका द्वारा रचित कहानियों में बाढ़ में भूखमरी और गरीबी की समस्या को दर्शाया गया है। कहानी 'मूर्ति' में विधवा की दुर्दशा को उल्लेखित करते हुए विधवा विवाह प्रथा के प्रचलन के लिए सामाजिक चेतना जागृत की गई है। 'बांयेन' कहानी में डायन प्रथा की समाप्ति के प्रति समाज को जागृत करने का प्रयास है। कहानी 'शनीचरी' पूर्णतः महिलाओं के शोषण एवं उत्पीड़न को अभिव्यक्त करती है। इक्कीसवी सदी के भारत में महिलाओं पर बर्बरता पूर्वक अत्याचार आज भी जारी है। विश्व की इस आधी आबादी अपने आप को आज भी सुरक्षित महसूस नहीं करती हँ। खाप पंचायत के रूढ़िवादी आदेशों ने महिलाओं की स्वतन्त्रता पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है।

महाश्वेता देवी का साहित्य देश के गरीब आदिवासी लोगों के खिलाफ सामाजिक भेदभाव, छुआछूत, शोषण पर केंद्रित हैं। उन्होंनें अपनी सशक्त कलम से समाज में हो रहे इस अन्याय के खिलाफ आवाज उठाई ताकि समाज की इस अनीतिगत व्यवस्था में सुधार लाया जा सके। उनकी सभी रचनाएं सामाजिक असमानता के आस–पास ही है। महाश्वेता देवी ने लेखन कार्य के अलावा सशक्त सामाजिक कार्यकर्ता की भूमिका अदा करते हुए आदिवासियों के उत्पीड़न, अन्याय एवं भारतीय समाज के सबसे निचले दलित वर्गो की मुक्ति के लिए विरोध प्रदर्शन करते हुए, उन्हें न्याय दिलाने के लिए अभियान चलाया और समाज इस अव्यवस्थित व्यवस्था के खिलाफ लेखनी के माध्यम से चोट करना चाहती है।

उन्होंने प्रतिभाशाली और एक प्रख्यात कार्यकर्त्ता के रूप में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति भी प्राप्त की। महाश्वेता देवी ने अपने कथा–साहित्य मे कहानियों और उपन्यासों में अभिव्यक्ति का जो रूप चुना है, उसमें जिस प्रकार यथार्थ की उपस्थिति परिलक्षित होती हैं, उसी प्रकार उस यथार्थ को इतिहास के क्रमशः परिवर्तनीय रूपों को दिखाने की भिन्न–भिन्न पद्धतियां भी है। यहां इतिहास का अर्थ केवल अतीत के उत्तराधिकार की उद्‌भावना नहीं है, वरन् अतीत से भविष्य की ओर जाने वाले पथ का इंगित भी है।

उसमें आशावादी भविष्य के बीच के उद्‌गम का पुराकथा जैसा उदभास है। वास्तव में शायद ऐसा नहीं होता, या नहीं हुआ, या हुआ भी हो तो अचानक किसी स्थान पर हो गया होगा। महाश्वेता देवी उसी 'संभाव्य' अथवा 'संभावना' को एक पुराकथात्मक विस्तार तथा काल्पनिक स्वरूप देती हैं, जो यथार्थ

में से निकलकर भी, यथार्थ का अतिक्रमण करता है।

वे उस यथार्थ को खींच कर फैला देती हैं और उसके बीच सामाजिक–आर्थिक–राजनीतिक यथार्थ के एकाधिक स्तरों को उनके निरतंर खीचंतान में रूपायित करके, भाषा के एक विन्यास की रचना करती हैं कि इसमें से आकार लेता नाटकीय, काल्पनिक क्षण कभी रूपकथा का स्वरूप नहीं लेता, वरन् यथार्थ की ही अनिवार्य परिणति लगता है। दोप्दी मेझेन, दूलन गंजू, चण्डी बांयेन, श्रीपद, माल, जटी ठकुरानी.... ये सब याथार्थपरक होते हुए भी यथार्थ का विस्तार करने वाले चरित्र हैं।

महाश्वेता देवी की कहानियों द्वारा 20 वीं सदी में महिला अस्मिता की रक्षा के लिए 'द्रौपदी' जैसी कहानियों में महिला अस्मिता के मुद्दों को उठाया गया। यह कहानी महिला के साथ होने वाले शारीरिक शोषण पर आधारित है। जिसमें कहानी के नायक द्रोपदी द्वारा अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए स्वयं आगे आकर सेना नायक का मुकाबला किया जाता है। उसी प्रकार कहानी 'ईंट के ऊपर ईंट' में अकाल ग्रस्त इलाकों से दीन–हीन गरीब तबके के अशिक्षित वर्ग से लायी गई बेटियों से पेट की खातिर दिनभर कड़ा परिश्रम करवाते हुए आधी मजदूरी में काम लिया जाता है।

महाश्वेता देवी ने आदिम जनजातियों के अतिरिक्त समाज के अन्य ज्वलंत मुद्दो में अपना लेखन कार्य किया है। साथ ही उन्होनें युवा वर्ग की अश्लीलता एवं नशाखोरी जैसे मुद्दों पर भी अपनी लेखनी के माध्यम से संदेश दिया है। महिलाओं की अस्मिता और आत्मरक्षा के मुद्दों पर भी अपनें विचार लेखनी के माध्यम से व्यक्त करती रही है। महाश्वेता देवी हमेशा से ही

अपनी लेखनी को लेकर सचेत रही है और उनका लक्ष्य हमेशा ही यह रहा है कि उनकी लेखनी के माध्यम से किसी का अहित न हो।

महाश्वेता देवी के विषय में सामग्रियों को सहेजने–समेटने अर्थात् संकलन–संपादन में समय लगा। इसके बाद व्यवस्थित रूप से कार्यारंभ हुआ। कथाकारों से संपर्क, संवाद तथा समीक्षकों से दिशा–निर्देश ने इस कार्य को प्रामाणिक बनाने में महती भूमिका का निर्वाह किया।

इस पुस्तक को भूमिका के अतिरिक्त सात अध्यायों में बाँटा है। भूमिका–बतौर महाश्वेता देवी की हिन्दी में अनुदित कहानियों में सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति को विवेचित करने के पश्चात् अध्यायों का क्रम आता है। प्रथम अध्याय इस अध्याय में इस शोध प्रबंध के मूल विषय महाश्वेता देवी की हिन्दी में अनुदित कहानियों में सामाजिक चेतना की व्याख्या और उसके स्वरुप पर विचार किया गया है। इसके अन्तर्गत् चेतना शब्द की व्युत्पत्ति, सामाजिक चेतना से आशय, सामाजिक चेतना की परिभाषा, सामाजिक चेतना के प्रकारों की व्याख्या की गई है।

द्वितीय अध्याय में महाश्वेता देवी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को दर्शाया गया है और हिन्दी में अनुदित कहानियों के मूल स्वर पर प्रकाश डाला गया है। तृतीय अध्याय में महाश्वेता देवी की कहानी विधा का विकास जिसके अतंर्गत प्रारभिक कहानियों विकास कालीन कहानियों और उत्कर्ष कालीन कहानियों की व्याख्या की गई है। चतृर्थ अध्याय में कहानियों का वर्गीकरण किया गया है। जिसमें विषय वस्तु के आधार पर एवं प्रवृत्तियों के आधार पर कहानियों का वर्गीकरण किया गया है। पंचम अध्याय में सामाजिक चेतना का विश्लेषण किया गया हैं। जिसमें सकारात्मक

चेतना पर आधारित कहानियां एवं नकारात्मक चेतना पर आध ाारित कहानियां सम्मिलित हैं। षष्ठम अध्याय में महाश्वेता देवी की हिन्दी में अनुदित कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना के वैशिष्ट का अध्ययन किया गया है।

सप्तम अध्याय समकालीन कथालेखन में महाश्वेता देवी का महत्व और उनके अवदान को दर्शाया गया है। साथ ही पुस्तक का निष्कर्ष है जिसे सार–रूप में प्रस्तुत किया गया है। "महाश्वेता देवी की हिन्दी में अनुदित कहानियों में सामाजिक चेतना" इस आशा के साथ प्रस्तुत की जा रही है जिससे, आज की रचना प्रक्रिया को भी नया आधार मिल सकेगा।

शुभकामनाओं सहित.....

22 जून

भूमिका

महाश्वेता देवी का रचना संसार साहित्य क्षेत्र का वह उदिप्तमान सितारा है जिसका आकाश सदैव ही दमकता रहेगा। उनके द्वारा चयनित विषयों पर लिखित साहित्य विगत छह दशक से मानवीय समाज के लिए प्रेरणा दायक है। उनके साहित्य का अध्ययन करने वाला या पढ़ने वाला व्यक्ति उसमें निहित शाशवत सत्य से इतना अधिक प्रभावित होता है कि पाठक होने के बावजूद वह पात्र बन जाता है। उनके कहानी उपन्यास या लेख पाठक वर्ग को स्वयं के साथ घटित प्रतीत होते है। न सिर्फ पाठक वर्ग बल्कि उनके रचना संसार से हमारे देश के लोकतन्त्र के सारे स्तंभ कार्यपालिका, न्यायपालिका, विधायिका एवं मीडिया भी लगातार प्रभावित होते रहे हैं।

इसके साक्षात उदाहरण उनके रचना संसार में मौजूद है। चाहे वह पश्चिम बंगाल का बुद्धन शवर का प्रकरण क्यों न हो? जिसे पुलिस द्वारा आत्महत्या मान कर फाईल को बंद कर दिया गया था परन्तु महाश्वेता देवी का सफल प्रयास था कि उस पूरे प्रकरण को वह न्यायालय ले गई। न्यायालय में जीत प्राप्त कर बुद्धन शवर को न्याय दिला सकी। उनके उपन्यास **'अरण्येर अधिकार'** से संपूर्ण प्रशासन जगत प्रभावित होकर आदिवासी समुदाय को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए प्रेरित हुआ। उनके विचारों, आन्दोलन और समाज के प्रति समपर्ण को ध्यान मे रखते हुए पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा बंगला साहित्य के अध्यक्ष पद पर उन्हें पदासीन किया गया। जबकि मीडिया जगत पिछले साठ वर्षो से समय–समय पर प्राथमिकता के आधार पर उनके लेखों को प्रकाशित करता रहा है। ताकि आमजनों के लिए वह प्रेरणा दायक बन सके। साहित्यकारों में

कबीर प्रेमचंद, जयशकंर प्रसाद और यशपाल आदि को समाज के प्रति समर्पित समपर्ण की भूमिका अदा करने वाले रचनाकारों की श्रेणी में रखा जाता रहा है।

उसी प्रकार से महाश्वेता देवी भी इन्हीं साहित्यकार कवियों तथा उनके भी ऊपर अपने आपको लिखित रचनाओं के स्तर पर स्थापित कर पाई है। उनकी कहानियों की नींव भी सामाजिक अव्यवस्थाओं पर रखी गई है। उनके पात्र के माध्यम से निराकरण करती हुई नजर आती है। पात्र द्वारा शोषण के खिलाफ किये गये संघर्ष शोषित वर्ग के लिए उनके जीवन काल के आधार साबित हो सकते है। महाश्वेता देवी दशकों से सामाजिक खामियों को उजागर करती आ रही है। ताकि व्यापक पैमाने पर सुधार किया जा सके। महाश्वेता देवी की कहानियों में 'बाढ़' कहानी पूर्णतः भूख विषय पर आधारित है। तीन दशक पूर्व लिखी गई यह कहानी आज भी भारत सरकार ही नहीं सम्पूर्ण विश्व के लिए कार्य करने का विषय है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा जारी रिपोर्ट में उल्लेखित किया गया है कि संपूर्ण विश्व में 80 करोड़ लोगो को एक जून की रोटी तक नसीब नहीं होती परन्तु भारत में भूख को लेकर विकराल परस्थितियाँ है। रोजाना 20 करोड़ लोग भूखे सोते है। लेखिका ने कहानियों में 'बांयेन' कहानी के माध्यम से बताने का प्रयास किया है कि यह मानवीय समाज अंधविश्वास रूप परम्पराओं के माध्यम से किसी भी एक पारिवारिक महिला का जीवन उजाड़ देती है। एक पालन हार महिला को आरोपित कर समाज में उसे यमराज की संज्ञा दे दी जाती है। इसके बावजूद उसके हृदय में छिपी ममता को विलुप्त नहीं कर पाते। समाज द्वारा दी गई पीड़ा, प्रताड़ना से ऊपर उठकर एक माँ निर्दोष लोगों की जान स्वयं के प्राण त्याग कर बचा लेती है। अंत में इस महान कार्य के लिए द्वारा उन्हें मृत्यु

उपरान्त चण्डी को सम्मानित किया जाता है। यह कहा जा सकता है कि लेखिका ने समाज द्वारा स्थापित अंधविश्वास एवं रूढ़ीवादी परम्पराओं को झूठा प्रमाणित किया है। आज भी इसी अंधविश्वास से परिपूर्ण रूढ़िवादी परम्परा के कारण हमारे देश में हजारों महिलाओं को इन आरोपो का सामना करना पड़ता है। अपमानित होकर चण्डी की तरह प्राण त्यागने पड़ते है। मानव समाज का निर्माण व्यक्तियों के पारस्परिक सहयोग व सम्बन्ध तथा उसके व्यवहारों से हुआ है। इसलिये यह कहा जा सकता है कि मनुष्य विशाल समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई है। समाज में मानव रूपी इसी इकाई द्वारा किये जाने वाले क्रियाकलाप का सीधा सम्बंध सामाजिक चेतना से होता है। सामाजिक चेतना समाज–जीवन के साथ आरै उसके अभिन्न अंग जैसे राजनीति, अर्थशास्त्र, अर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों के साथ परस्पर संबंध स्थापित करना है। इसी को ध्यान में रखते हुए महाश्वेता देवी ने अपनी रचनाएं सामाजिक चेतना के ईद–गिर्द ही रखी है। महाश्वेता देवी की रचनाओं से स्पष्ट होता है कि आजादी के 68 वर्ष बाद भी आदिवासी वर्ग मूलभूत सुविध ाएं पाने में आज भी वंचित है। यही पीड़ा महाश्वेता देवी की चिंता का कारण बनी। महाश्वेता देवी ने अपना अधिकतम समय आदिवासियों के बीच रहकर व्यतीत किया। अर्थात् जीवन के तीन दशकों का समय उनके द्वारा जल, जंगल और जमीन की लड़ाई के संघर्ष में खर्च कर दिया। उन्होंने पश्चिम बंगाल की दो जनजातियों लोधान और शबर पर विशेष कार्य किया है। इन संघर्षो के दौरान पीड़ा के स्वर को महाश्वेता ने बहुत करीब से सुना और महसूस किया है। इन्होंने अपना सारा जीवन साहित्य, आदिवासी और भारतीय जनजातीय समाज को समर्पित कर दिया हैं। उनके नौ कहानियों के संग्रह में से आठ कहानियों के

केन्द्र में आदिवासी जाति केन्द्रित है ये आदिवासी वर्ग आज भी समाज की मुख्यधारा से कटकर जी रहा है। आदिवासी वर्ग की पीड़ा के वे स्वर उनकी रचनाओं में साफ–साफ सुनाई पड़ते है।

महाश्वेता देवी ने उपन्यास की तरह ही अपनी कहानियों में मुख्य धारा से बाहर रखे गये आदिवासी वर्ग की अस्मिता के सवाल को सशक्तता के साथ उठाया हैं उनकी कई कहानियाँ आदिवासियों की सच्ची संघर्ष गाथाएं है। इन महागाथाओं में समाज की चिंता का बेचेनी के साथ सामने आने का पहला अवसर है। सामाजिक कार्यकर्ता रहते हुए सामाजिक भेदभाव को समाप्त करने का प्रयास आन्दोलन एवं लेखन दोनों ही माध्यम से किया। भारत की जनजाति लोगों के अधिकार को दिलाने के लिए उनके द्वारा किये गये अथक कार्य उनके जीवन का एक हिस्सा है।

महाश्वेता देवी की रचना 'हजार चौरासी की मां' नक्सली समस्या पर लिखी गई है। जो देश की इक्कीसवी सदी की सबसे बडी समस्या है। आज राष्ट्र के छत्तीसगढ़, ओडिशा, मध्यप्रदेश, बिहार, झारखण्ड, आंध्रप्रदेश और पश्चिम बंगाल राज्य इससे जूझ रहे है। महाश्वेता देवी ने अपने लेखन के इन छह दशक में मानवीय पीड़ा से उत्पन्न अनुभूति को उपन्यास एवं कहानियों के जरिये समाज के समक्ष प्रस्तुत करती है। एक तरह से उनकी लेखन शैली मानवीय पीड़ा पर की गई खोज के समान है। फिर वह 'बाढ़' में बागदी, 'बांयेन' में चण्डी डोम, 'शाम सवेरे की माँ' में पाखमारा, 'शिकार' में ओराव, 'बीज' में गंजू, 'मूल अधिकारी और दूसाध' में दुसाध, 'बेहुला' में माल या ओसा, 'द्रोपदी' में दोपदी संथाल के रूप में सहज ही के पात्र स्वयं पर हुए शोषण को व्यक्त करना चाहते है। ये सभी पात्र

ऐसा वर्ग है जिनके दैनिक कार्यो के कारण समाज तिरस्कार के रूप में देखता है, मृत मवेशियों की खाल को निकालना या शमशान में शवों को गाड़ना, आदिवासियों के ये सभी अनुवांशिक कार्य है और इन्ही कार्यो के कारण उन्हें पीढ़ी दर पीढ़ी समाज अदिवासी बनाये रखता है। इनमें से कुछ लोग कुछ आगे पीछे कर आगे बढ़ जाते है और दिगर कार्य प्राप्त कर लेते है ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम है। कहानियां अथवा संकलन में अनुपस्थित उन्हीं दिनों लिखी अन्य कहानियां किसी प्रकार का व्यतिक्रम उपस्थित नहीं करतीं।

'बीज' कहानी में दूलन गंजू को लगता है, जिंदा रहने की चतुराई के बारे में सोचते–सोचते उसे अपने बेटों और पोतों के साथ बात करने का भी समय न मिला। जिंदा रहने के दबाव में, मेहनत कर के नहीं, बल्कि चालाकी करके उसने हमेशा, हर परिस्थिति से फायदा उठाया, "किन्तु घटनाक्रम तथा इतिहास दूलन को इस अवस्था में रहने नहीं देते। स्मृति, संस्कार, अक्षमता बोध और भय न केवल आदिवासियों को दमित करके रखते हैं, बल्कि उनके मन और चरित्र पर भी गहरा असर डालते हैं। यह असर शुरू में उनकी जिंदा रहने की पद्धति और कौशल के आविष्कार तथा उद्‌भावना में प्रकट होता है (जैसे जटी का ठकुरानी हो जाना), तो कभी एक शुद्ध मानवीय आवेग में उत्तीर्ण होकर उसे मुक्ति देता है (जैसे बांयेन की रेल रोकने की अतिमानवीय भूमिका)। सत्तर के दशक के आरम्भिक वर्षो तक इसी दिशा ने महाश्वेता देवी को अधिक आकर्षित किया था। यह भय आदिवासियों के मन में ही सीमित नहीं है। मध्यवित्त नागरिक श्रेणी में इस भय की तस्वीर **'रांग नम्बर'** कहानी में देखने को मिलती है। सन् 1972 में लिखी इस कहानी में एक विशेष कोण से देखने पर एक सूक्ष्म सीमारेखा दिखाई देती है,

जो महाश्वेता देवी की कहानियों के बीच की विभाजन रेखा कही जा सकती है। यह कोई विभाजन नहीं है, फिर भी एक विभाजन है। "द्रौपदी" (1976), "बीज" (1977) और "शिकार" (1978) कहानियों में एक प्रबल प्रतिवादी चेतना प्रतिरोध के लिए उद्यत होती है। आदिवासी अब लड़ाई के मैदान में उतर गये हैं। "द्रौपदी" में वह प्रतिरोध संगठित आंदोलन का रास्ता पकड़ता है, मगर शेष दो कहानियों में प्रतिरोध अथवा प्रतयाक्रमण स्वतः स्फूर्त है और वह आदिवासियों के जीवनयापन तथा बहुत कुछ स्वीकार करके जिंदा रहने के जानलेवा अभियान के बीच से उभरता है, बाहर से किसी राजनीतिक बोध या चेतना के परिणामस्वरुप नहीं। महाश्वेता देवी कहती है कि इस संकलन की भूमिका लिखते हुए कई–कई बातें याद आ रही है। सन् 1998 की फरवरी का महीना। पुरूलिया जिला में बूधन शवर की मौत हो गई। उस मौत को आत्महत्या कहा गया, लेकिन विमुक्त या डी–नोटिफाइड जातियां, किसी जमाने में अंग्रेज हुक्मरानों द्वारा अपराधप्रवण के नाम से, दागी घोषित लोगों की तरह बूधन की मौत का इतिहास भी अतिशय खौफनाक था। पश्चिम बंगाल खेडिया–शवर कल्याण समिति की तरफ से 23.2.99 को मैंने हाईकोर्ट में जनहित मुकदमा दायर किया। 6.7.99 को फैसला सुनाया गया। शवर समिति ने वह मामला जीत लिया और सरकार हार गई। यह फैसला हर मायने में ऐतिहासिक था, क्योंकि भारत देश में सन् 1871 में अपराधप्रवण घोषित और सन् 1952 में विमुक्त यानी नियंत्रणहीन रूप में प्रचारित जातियों की संख्या लगभग 191 थी और जनसंख्या लगभग 6 करोड़ थी। समूचे भारत में ये जातियां, पुलिस के हाथों या जन–पिटाई में अपनी जाने गंवाती रहीं। सन् 1977–82 के दौरान लोधा जाति के कम से कम 42 लोग, जन–आक्रोश के शिकार होकर मारे

गये। एक बार भी, कभी पुलिस–जांच नहीं बिठायी गई। सरकारी हस्तक्षेप ही किया गया। सन् 1997–99 के दौरान पुरूलिया के अनगिनत खेडिया–शवर लोग मारे गये। विमुक्त जाति के लोगों की मौत का यह पहला केस था। इसलिये इनकी जीत भी ऐतिहासिक थी, जिसका पूरा–पूरा श्रेय पुरूलिया की शवर समिति को जाता है। इसमें मेरी कोई भूमिका नहीं थी। मैंने तो सिर्फ यह मुकदमा दायर किया था।

दुष्यंत कुमार ने जिंदगी की बारीकियों को बड़े ही रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। उन्होंने लिखा हैः

'खेत सारे बीज बिन–पानी बिना रोते रहे हैं,
हम हथेली पर गुलाबों का शहर बोते रहे हैं।'

महाश्वेता देवी इतिहास के इस आत्मसात्काण को अपने कथा–शिल्प में विविध प्रकार से पुराण अथवा मिथक का स्वरूप दे देती हैं–कभी किसी नये गाने के रूप में, जैसे धतुआ का वह गाना, "कोई उनकी खोज दे क्यों न, पुलिस के खातों में खो गये हैं। "अथवा पुराण–प्रकृति के उस पारस्परिक बंधन में, जिससे मृतकों के शरीर और अस्थियां प्रकृति में प्राणों का संचार करते हैं, फूलने–फलने का कारण बनते हैं। दूलन कहता है, "ध ातुआ,तुम लोगों को हमने बीज बना दिया।" जन्म और मृत्यु की अविभाज्य द्वंद्वात्मकता नवपुराण का स्वरूप ग्रहण करती है, तभी संस्कारों की दासता टूटती है और नया युग आता है। महाश्वेता देवी के शब्दों में 'एक लम्बे अरसे से मेरे भीतर जनजाति समाज के लिए दर्द की जो ज्वाला धधक रही है। वह मेरी चिता के साथ ही शांत होगी।' अर्थात् लेखिका द्वारा तीस वर्षो तक आदिवासियों के मध्य रहकर उनकी दिनचर्या को समझा एवं जाना है। इनकी कई कहानियों के केंद्र में आदिवासी समाज

है जो समाज की मुख्यधारा से अलग होकर अपना जीवन यापन कर रहा है। वह स्वयं भी कहती है कि मानवीय पीढ़ा ही उनके लिखने का विषय है। उनकी रचनाओं से यह महसूस भी किया जा सकता है कि उनके सम्पूर्ण विषय सामाजिक अव्यवस्थाओं पर पूर्ण रूप से आधारित होते है। जिसके कारण पाठक स्वयं को पात्र महसूस करता ही है। साथ ही दूसरा पक्ष शोषण वर्ग भी लगातार की जा रही भूल को महसूस करने के लिए बाध्य हो जाता है। उनके सभी साहित्य के विषय सत्यता के आस पास ही होते है। काल्पनिक पात्रों के आधार पर वे अपनी रचनाओं को गढ़ती है और उनके इसी वृहद व्यक्तित्व एवं कृतित्व के कारण इसी बंगला साहित्य से प्रभावित होकर इस विषय का चयन किया ताकि उनकी रचनाओं की सत्यता एवं वास्तविकता को और अधिक लोगों तक पहुंचाया जा सके।

''**महाश्वेता देवी की हिन्दी में अनुदित कहानियों में सामाजिक चेतना**'' पुस्तक को लिखने हेतु मेरे द्वारा निम्नलिखित लेखको की पुस्तकों, प्रकाशकों की सहायता ली गई है, उनका बहुत बहुत आभार :

देवी महाश्वेता – *सालगिरह की पुकार पर,* दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन 1998

देवी महाश्वेता – *कृष्ण द्वादशी,* दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2000

देवी महाश्वेता – स्त्री पर्व, वाणी प्रकाशन, 2003

देवी महाश्वेता – *ईट के ऊपर ईट,* दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2008

देवी महाश्वेता – *मूर्ति,* दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन

देवी महाश्वेता – *घहराती घटाएं,* दिल्ली राधाकृष्ण प्रकाशन

देवी महाश्वेता – *भारत वर्ष की अन्य कहानियाँ,* कोलकाता

देवी महाश्वेता – *महाश्वेता देवी की श्रेष्ठ कहानियां,* भारतीय ग्रंथ अकादमी

देवी महाश्वेता – *बनिया बहू,* दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2004

देवी महाश्वेता – *अक्लातं कौरव,* दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2008

देवी महाश्वेता – *नील छवि,* दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2008

देवी महाश्वेता – *लालगढ़ की माँ, दिल्ली,* राधाकृष्ण प्रकाशन, 2010

देवी महाश्वेता — *रजिस्टर्ड न.1038,* दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2010

देवी महाश्वेता — *1084 वें की माँ,* दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2008

सिन्हा, प्रमोदकुमार — *ईंट के ऊपर ईंट,* राधकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2008

गुप्ता, सुशील — *स्त्री–पर्व,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005

माहेश्वर — *कृष्ण द्वादशी,* राधकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2000

अवस्थी, देवी शंकर — *नई कहानियाः संदर्भ और प्रकृति,* दिल्ली, राजकमल, प्रकाशन, 1973

कपूर, श्यामचन्द्र — *हिन्दी साहित्य का इतिहास,* दिल्ली ग्रंथ अकादमी, 1991

कुमार, राजेन्द्र — *प्रेमचन्द की कहानियाँः परिदृश्य और परिप्रेक्ष्य*, इलाहाबाद, अभिव्यक्ति प्रकाशन, 1993

कुमार, श्रवण — *ली तथा अन्य कहानियाँ,* दिल्ली, ज्ञान गंगा, प्रथम, 2004

कृष्ण कुमार — *कहानी के नए प्रतिमान,* दिल्ली,वाणी प्रकाशन, 2007

खण्डेलवाल, प्रसाद — *हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ,* आगरा, विनोद पुस्तक मदिर, जयकिशन, 1949

चतुर्वेदी, रामस्वरुप — *समकालीन हिन्दी साहित्य विविध परिदृश्य,* नई दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन, 1995

जोशी,एमसी – *कहानीकार प्रेमचन्द एवं पुनर्मूल्यांकन,* इलाहाबाद, अभिव्यक्ति प्रकाशन, 1996

बाजपेयी, नन्ददुलारे – *हिन्दी साहित्य,* बीसवी शताब्दी, इलाहाबाद, लोक भारती प्रकाशन, 1995

शर्मा, रामविलास – *भरतीय साहित्य की भूमिका,* नईदिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 1996

शरतचन्द – *नवविधान,* दिल्ली, मनोज पब्लिकेशन, 2005

जगदीश्वर चतुर्वेदी, सुधा सिंह – *स्त्री अस्मिता साहित्य और विचारधारा,* आनन्द प्रकाशन, कोलकाता (प्रथम संस्करण), 2004

वाल्मीकि, ओमप्रकाश – *दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र,* राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, (प्रथम संस्करण), 2001

डॉ. शत्रुघ्न कुमार – *दलित आन्दोलन के विविध पक्ष,* आकाश पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर, गाजियाबाद, 2004

डॉ विश्वम्भर नाथ उपाध्याय – *समकालीन साहित्य की भूमिका,* रचना प्रकाशन, जयपुर, (प्रथम संस्करण), 2005

रमणिका गुप्ता – *दलित हस्तक्षेप,* ओमप्रकाश वाल्मीकि शिल्पायन, दिल्ली, 2004

डॉ.नगेन्द्र – *हिन्दी साहित्य का इतिहास,* मयूर पेपर बैक्स, दिल्ली, (प्रथम संस्करण), 1973

डॉ. श्रीमती रतन कुमारी वर्मा – *महिला साहित्यकारों का नारी चित्रण, (हिन्दी कहानियों के सदर्भ में) अध्ययन,* पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नयी दिल्ली, 2009

सूरज पालीवाल – *इक्कीसवीं सदी का पहला दशक और हिन्दी कहानी,* वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली (प्रथम संस्करण), 2012

उर्मिला गुप्ता – *हिन्दी कथा साहित्य के विकास मे महिलाओं का योग,* दिल्ली इन्दु

श्रीवास्तव – *समाजशास्त्र का परिचय समाज शास्त्र,* सेन्ट्रल लॉ ऐजेन्सी, इलाहाबाद, 2010

एम.एल.गुप्ता एवं डी.डी.शर्मा – *समाज शास्त्र,* साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2003

ब्रह्मदत्त शर्मा – *हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन,* सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा, 1958

देवी शंकर अवस्थी – *नयी कहानीः संदर्भ और प्रकृति,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1973

रामचन्द्र तिवारी – *आधुनिक हिन्दी साहित्य विविध आयाम,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी 2007

चतुर्वेदी, रामस्वरूप – *समकालीन हिन्दी साहित्य विविध परिदृश्य,* राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995

माता प्रसाद — *दलित साहित्य में प्रमुख विधाएं,* आकाशा पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, गाजियाबाद, 2004

द्विवेदी, रामस्वरूप — *समकालीन हिन्दी साहित्य,* अर्चना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1992

शिवदानसिंह चौहान — *हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष,* राजकमल प्रकाशन, देहली, 1954

जगदीश्वर चतुर्वेदी, सुधा सिंह — *स्त्री अस्मिता साहित्य और विचारधारा,* आनन्द प्रकाशन, कोलकाता 2004

विनोद जैन — *स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी महिला नाटककारों के नाटकों मे सामाजिक चेतना,* के.के. पलिकेशन्स, नई दिल्ली, 2007

शरतचद्रं — *शरतचद्रं की लोकप्रिय कहानियाँ,* प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013

रवींद्रनाथ टैगोर — *रवींद्रनाथ टैगोर की लोकप्रिय कहानियाँ,* प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013

मुंशी प्रेमचंद — *कफन,* डायमंड पाकेट बुक्स (प्रा) लि., नई दिल्ली, 2013

पृथ्वीनाथ शास्त्री — *बंगला की प्रतिनिधि हास्य कहानियाँ,*

अनुक्रमणिका

CH.	Title	Page
01.	**सामाजिक चेतना की व्याख्या और उसका स्वरुप**	**01–21**
	1.1 चेतना शब्द की व्युत्पत्ति	02
	1.2 सामाजिक चेतना से आशय	06
	1.3 सामाजिक चेतना की परिभाषा	10
	1.4 सामाजिक चेतना के प्रकार	14
02.	**महाश्वेता देवी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व**	**22–65**
	2.1 महाश्वेता देवी का व्यक्तित्व	22
	2.2 महाश्वेता देवी का कृतित्व	31
	2.3 हिन्दी में अनुदित कहानियों के मूल स्वर	40
03.	**महाश्वेता देवी की कहानी विधा का विकास**	**66–106**
	3.1 प्रारंभिक कहानियाँ	68
	3.2 विकास कालीन कहानियाँ	77
	3.3 उत्कर्ष कालीन कहानियाँ	96
04.	**कहानियों का वर्गीकरण**	**107–140**
	4.1 विषय वस्तु के आधार पर	116
	4.2 प्रवृत्ति के आधार पर	126
05.	**महाश्वेता देवी की हिन्दी में अनुदित कहानियों में सामाजिक चेतना का विश्लेषण**	**141–172**
	5.1 सकारात्मक चेतना पर आधारित कहानियाँ	148
	5.2 नकारात्मक चेतना पर आधारित कहानियाँ	162

06.	महाश्वेता देवी की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना का वैशिष्ट	173–193
07.	समकालीन कथालेखन में महाश्वेता देवी का महत्व और अवदान	194–209
	उपसंहार	210–214

अध्याय 01 सामाजिक चेतना की व्याख्या और उसका स्वरुप

समाज एक अमूर्त व्यवस्था है अर्थात् सामाजिक संबंधो का जाल। वास्तव में व्यक्ति एक दूसरे के साथ सामाजिक संबंध स्थापित करते हुए जीवन निर्वाह करते है समाज को अलग–अलग दृष्टिकोण से अनेक विद्वानों द्वारा परिभाषित किया गया है। "मानव के बिना समाज और समाज के बिना मानव अस्तित्व विहीन है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है इसलिए समाज से पृथक वह अपना जीवन सुचारू रूप से संचालित कर पाने में अपने आपको असमर्थ पाता है। अनेक विद्वानों ने यहाँ तक कहा है कि मानव समाज से अलग रहकर जीवित भी नहीं रह सकता।"

"समाज" एवं "एक समाज"–सामान्य शब्दों में लोग "समाज" एवं "एक समाज" दोनों शब्दों का प्रयोग एक ही अर्थ में करते हैं, किन्तु समाजशास्त्र में इन दोनों शब्दों का प्रयोग विशिष्ट अर्थ में किया जाता है। ये दोनों शब्द पर्यायवाची नहीं हैं अपितु दोनों में पर्याप्त अन्तर होता है समाज तो सामाजिक सम्बन्धों का ताना बाना या जाल है, क्योंकि सामाजिक सम्बन्ध अमूर्त है अतः इस सम्बन्धों के जाल द्वारा निर्मित समाज भी अमूर्त है। "समाज" शब्द का प्रयोग सामान्य अर्थ में किया जाता है जबकि "एक समाज" शब्द का प्रयोग किसी विशिष्ट समाज के लिये किया जाता है, जिसकी निश्चित भौगोलिक सीमायें है, तथा जो अन्य समाजों से भिन्न है। उदाहरण के लिये–भारतीय समाज, अमेरिकी समाज, आदि।

अनेक विद्वानों ने अलग–अलग रूप में समाज को परिभाषित किया है जिन्सबर्ग के अनुसार "समाज ऐसे व्यक्तियों का संग्रह है जो कुछ सम्बंधों अथवा व्यवहार की विधियों द्वारा संगठित है तथा उन व्यक्तियों से भिन्न है जो इस प्रकार के प्रकार के सम्बंधों द्वारा बंधे हुये नहीं हैं अथवा जिनके व्यवहार उनसे भिन्न है।"

पारसन्स के अनुसार "समाज को उन मानक सम्बंधों के रूप में क्रियाओं के करने से उत्पन्न हुये हैं, चाहे वे यथार्थ हों या प्रतीकात्मक।"

लेपियर के अनुसार "समाज मनुष्यों के समूह का नाम नहीं है वरन् यहऐसी जटिल अन्तर्क्रियाओं का प्रतिमान है जो मनुष्य के बीच उत्पन्न होता।"

मैकाइवर एवं पेज के अनुसार "समाज रीतियों, कार्य प्रणालियों, अधिकार व पारस्परिक सहयोग अनेक समूहों तथा उनके विभागों मानव व्यवहार पर नियंत्रणों एवं स्वतंत्रताओं की व्यवस्था है। इस सदैव परिवर्तित होने वाली जटिल व्यवस्था को ही हम समाज कहते है। ये सामाजिक संबंधो का जाल है तथा सदैव परिवर्तित होता रहता है।"

'चेतना का सुन्दर इतिहास
अखिल मानव भावों का सत्य
विश्व के हृदय पटल पर दिव्य
अक्षरों से अंकित दो नित्य।'

———प्रसाद

उपरोक्त समाजशास्त्रियों एवं विचारकों द्वारा दी गई परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि समाज सम्बंधों के आधार पर गतिशील है। समाज से ही मानव की पहचान है। मानव समाज से अलग रहकर जीवित नहीं रह सकता। मानव द्वारा समाज में रहकर की जाने वाली क्रियाएं ही सामाजिक चेतना का निर्माण करती है।

1.1 चेतना शब्द की व्युत्पत्ति

चेतना शब्द की उत्पत्ति चित् धातु में ल्युट (अन.) प्रत्यय के योग से हुई है, जिसका आशय परिवेशगत तथा स्वयंगत तत्वों का ज्ञान है। मनोवृत्ति, ज्ञानात्मक, बुद्धि, स्मृति, जागृति, सुधि आदि इसके पयार्य तथा अर्थ हिन्दी शब्द कोष में समाहित है। मनोविज्ञान की दृष्टि से चेतना शब्द का अर्थ Conscious से है अंग्रेजी शब्द का पर्याय भी है, जिसका अर्थ है जगृति। मनुष्य के प्रमुख गुणों में से एक

गुण जागरुकता भी है। आधुनिक विद्वानों ने जागरुकता उसे कहा है जिससे बाह्म व्यवहारों का ज्ञान होता है।

चेतना एक अमूर्त तत्व है। वह मानव की आंतरिक शक्ति है। चेतना के महत्व को समझते हुए चेतना के स्वरुप का विश्लेषण करने का तथा उसे परिभाषित करने का प्रयास विभिन्न विद्वानों ने किया है। दर्शन, मनोविज्ञान, विज्ञान, समाज शास्त्र एवं साहित्य शास्त्र में चेतना को पूर्णतः परिभाषित करने का प्रयास किया गया है।

दर्शन ने चित्त तत्व को बाहरी तत्व माना है। दार्शनिक विचारको के अनुसार चित्त की भिन्न–भिन्न व्याख्याएँ की गयी है। अद्वैत चिंतन में यह सत्+चित्+आनंद ब्रह्म का रुप है। चौतन्य को विश्व की स्पन्दन शक्ति, प्राण को चित्त शक्ति एवं ब्रह्म माना गया है। कोशकार अग्निहोत्री के अनुसार चेतना जीवन, शक्तिपौरुष आंकलन शक्ति, ज्ञानशक्ति है। चिंतक वाड़ेकर के अनुसार विश्व में ओतप्रोत चौतन्य प्राणशक्ति एवं मानसिक शक्ति अर्थात् दोनों के सामंजस्य को चेतना कहते हैं। यह चेतना विश्व को नियंत्रित करने वाली आत्मिक शक्ति की आंशिक पुनर्निर्मिति है। उसे विकास वादियों ने सृष्टि उद्भावित नया गुण माना है।

इस प्रकार दर्शन में चेतना एक मानसिक, बौद्धिक उच्चशक्ति है। व्यावहारिक रुप में चेतना, व्यवहार के मर्म की खोज है, जिसके माध्यम से विशुद्ध मानव वृत्तियों एवं गुणों का ज्ञान होता है। चेतना प्राणियों में स्वयं एवं वातावरण में होने वाले परिवर्तन का बोध कराता है। एक प्रकार से उसे समझने एवं मूल्यांकन करने का माध्यम है। विज्ञान के अनुसार – चेतना वह अनुभूति है जो मस्तिष्क में पहुँचने वाले अभिगामी आवेगों से उत्पन्न होती है। इन आवेगों का अर्थ तुरंत अथवा बाद मे लगाया जाता है। चेतना के कारण ही मनुष्य अपने मन को नियंत्रित रख पाता है। जिसके कारण मनुष्य एवं पशु में हम अन्तर कर पाते हैं पशुओं से अपने मन को नियंत्रित करने की क्षमता नहीं होती जबकि मनुष्य चेतना युक्त प्राणी है। अतएव कोई भी क्रिया करने के पहले वह उसके परिणाम के विषय में सोचता है।

मनोविज्ञान की दृष्टि से चेतना के कारण ही मनुष्य को सभी प्रकार का अनुभव प्राप्त होता है। चेतना के कारण ही हम देखते, सुनते, समझते और प्रत्येक परिस्थितियों पर चिंतन करते है। चेतना के कारण ही हम सुख एवं दुख का अनुभव करते है। मानव चेतना की तीन विशेताएँ बताई गई है–ज्ञानात्मक, भावात्मक एवं क्रियात्मक। आधुनिक मनोविज्ञान के विचारको के अनुसार–चेतना वह तत्व है। जिसमें ज्ञान की, भाव की और व्यक्ति अर्थात् क्रियाशीलता की अनुभूति है।

मेगइगल के अनुसार – जिस प्रकार भौतिक विज्ञान की अपनी ही सोचने की विधियाँ और विशेष प्रकार के प्रदत्त है उसी प्रकार चेतना के विषय में चिंतन करने की अपनी ही विधियाँ और प्रदत्त है।

चेतना के तीन स्तर माने गये है–चेतन, अवचेतन और अचेतन। इन तीनों ही चेतना के स्तर के आधार पर हम सोचते और कार्य करते है। चेतना में ही मनुष्य का अहंभाव रहता है और यही विचारों का संगठन होता है। अवचेतन जिसका ज्ञान हमें तुरन्त नहीं रहता परन्त समय पर याद आ सकता है। अचेतन स्तर जिसे हम भूला चुके होते है। याद करने पर भी याद नहीं आता। परन्तु विशेष प्रक्रिया से जिसे याद कराया जाता है। चेतना का विकास सामाजिक वातावरण में ही होता है और समाज के प्रभाव से ही मनुष्य नैतिकता, औचित्य और व्यवहार कुशलता प्राप्त करता है। चेतना सामाजिक बातों को प्रभावित कर सकता है और उससे प्रभावित भी होता है।

व्यक्ति का सामाजिक जीवन एक सूत्र से बंधा है, जिसको चेतना कहते हैं। चेतना एक सजीव शक्ति, स्थिति, दशा एवं क्षमता हैं। उसका स्थान मन या मस्तिष्क है। चेतना का संबंध विचारों, अनुभूतियों, संकल्पों एवं प्रभावों से है। चेतना के तत्व परिवर्तित होते ही उनकी अभिव्यक्ति प्रभाव एवं संकल्प भी परिवर्तित हो जाते हैं। चेतना के विकास के अपने गति और नियम है जो सापेक्ष रुप से स्वतंत्र है। उनकी स्वतंत्रता की सापेक्षता का बिलकुल सीधा निर्णयकारी नियंत्रण संबंध वास्तविक मानव संबंधों से है। चेतना के संबंध में कहा जा

सकता है कि चेतना का संबंध अनुभूति के स्तर पर मस्तिष्क से है। चेतना की अपनी एक अलग विशिष्टता एवं अलग अस्तित्व है। चेतना में परिवर्तनशीलता एवं गौरवमयता का गुण विद्यमान होता है। मनुष्य कभी भी चेतना को अपनी कृति का विषय बना लेता है।

चेतना व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों प्रकार की हो सकती है। प्रसिद्ध मनौवैज्ञानिक सी.जी.युंग सामूहिक चेतना के बारे में लिखते है–"सारी चेतना जो व्यक्ति की न होकर एक ही काल में अनेकानेक व्यक्तियों अथवा समुदाय–समाज, राष्ट्र अथवा सम्पूर्ण मानवजाति की सम्पत्ति हो, सामूहिक चेतना है।" राज्य, धर्म, विज्ञान आदि विषयक व्यापक धारणाएं भी सामूहिक चेतना के अन्तर्गत आती है। समाज में नए मूल्यों की स्थापना के समस्त प्रयासों को सामूहिक चेतना से टकराना पड़ता है। प्रायः यह देखा जाता है कि समाज विशेष की दार्शनिक, राजनीतिक, साहित्यिक मान्यताएं तो परिवर्तित हो जाती हैं परन्तु सामाजिक चेतना स्थाई बनी रहती है।

चेतना के द्वारा ही मनुष्य स्वयं का अन्वेषण कर ज्ञानात्मक जागृति करता है। ज्ञानात्मक जागृति का संबंध समाज के सामाजिक पक्ष से भी है।

संक्षिप्त में चेतना के संबंध में यह कहा जा सकता है किः

1. चेतना की व्युत्पत्ति चित् धातु से हुई है। जिसका अर्थ जागृति से है।
2. चेतना की निश्चित परिभाषा देना कठिन है, लेकिन चेतना के स्वरुप को बाह्म क्रिया–प्रतिक्रियाओं के द्वारा कुछ मात्रा में ज्ञात किया जा सकता है।
3. मानव चेतना प्राणी मात्र की चेतना से अलग है।
4. चेतना मे प्रवाहमयता, निरंतर परिवर्तनशीलता, गौरवमयता आदि के गुणों का समावेश है।
5. चेतना, ब्रह्मशक्ति, प्राणशक्ति, विश्व की स्पंदन शक्ति है।
6. चेतना सामाजिक जीवन के उत्पत्ति है।

आज के सामाजिक परिवेश यदि हम बात करे तो, अपनी निजी पहचान बनाये रखने, अपने स्वाभिमान एवं पुरूषों की दासता से मुक्त होने के लिए संघर्षरत नारी–जीवन पर भी अनेक लेख लिखे गये है।

1.2 सामाजिक चेतना से आशय

सामाजिक चेतना दो शब्दों से मिलकर बना शब्द है। समाज व चेतना। सामाजिक चेतना को विस्तार पूर्वक समझने के लिए सर्वप्रथम समाज को परिभाषित करना होगा। समाज का निर्माण मानवीय संबंधो के आधार पर हुआ है। इसलिए मनुष्य विशाल समाज की महत्वपूर्ण इकाई है। समाज की स्थापना को सृष्टि की स्थापना के साथ माना गया है। अर्थात् यह माना गया है कि जितनी प्राचीन सृष्टि है उतना प्राचीन समाज भी हैं। मानव समाज का निर्माण व्यक्तियों के पारस्परिक सहयोग व सम्बन्ध तथा उसके व्यवहारों से हुआ है।

अरस्तु के अनुसार 'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है मनुष्य का अस्तित्व व उसका सामाजिक जीवन बगैर समाज के संभव नहीं है।'

सामाजिक चेतना मनोविज्ञान से लिया गया शब्द है। मनोविज्ञान विषय में चेतना को विस्तृत रूप से परिभाषित किया गया है। चेतना का सीधा संबंध मानवीय ज्ञान से है। चेतना मानव जाति की प्रमुख विशेषता है। जिसका अर्थ है वस्तुओं, विषयों, व्यवहारों का विस्तृत ज्ञान। चेतना शब्द का वर्णन करना संभव है लेकिन इसको परिभाषित करना अत्यन्त कठिन है। यदि हम चेतना की विशेषताओं की व्याख्या करे तो उसमें निरंतर परिवर्तनशीलता अथवा प्रवाह देखा जा सकता है। सामान्यतः सामाजिक चेतना से हम किसी देश एवं काल विशेष से सम्बन्धित मानव समाज में अभिव्यक्त परिवर्तनशील जागृति समझते है। जनजीवन में लक्षित यह जागृति या सामाजिक चेतना तत्कालीन जीवन में उत्पन्न अप्रत्याशित गतिरोध एवं गतिशीलता से उत्पन्न हो सकती है।

सामाजिक चेतना समाज–जीवन के साथ और उसके अभिन्न अंग

जैसे राजनीति, अर्थशास्त्र, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों के साथ परस्पर सम्बंध स्थापित है। लेकिन विश्व स्तर की यदि हम बात करे तो समाज का स्वरूप एक समान नहीं है। इसका मुख्य कारण यह है कि प्रत्येक देश के विकास का क्रम समान नहीं रहा हैं। यही कारण है कि पृथक–पृथक देशों की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक परिस्थितियाँ भी भिन्न भिन्न रही हैं। इन परिस्थितियों ने ही प्रत्येक देश के समाज को एक विशिष्टता प्रदान की है।

सामाजिक चेतना की आधार भूमि सत्य, परोपकार, कर्तव्य व सेवा पर आधारित है। लोकमंगल की कामना, जनकल्याण, सामाजिक विसंगतियों पर साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से प्रगार करना ताकि समाज की विभिन्न समस्याओं से अवगत होकर सचेत हो सके। सामाजिक चेतना स्थाई बने रहने के कारण तथा इसके परिणामस्वरुप कालान्तर में नई मान्यताएं या तो अत्यन्त निर्बल होकर नष्ट हो जाती है या उनका क्रान्तिकारी रुप लुप्त हो जाता है और वे सामूहिक चेतना द्वारा ग्राह्मा रुप में परिणत हो जाती है। सामान्यतः सामाजिक चेतना से हम किसी देश एवं काल विशेष से सम्बद्ध, मानव–समाज में अभिव्यक्त परिवर्तनशील जागृति समझते हैं जो प्रतिक्रियात्मक भी हो सकती हैं। जन–जीवन में लक्षित यह जागृति या सामाजिक चेतना तत्कालीन जीवन में पैदा हुए गतिरोध और गतिशीलता से जन्म ले सकती है। इसकी पृष्ठभूमि में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियां हो सकती है।

सामाजिक चेतना समाजगत् होने के कारण समाज के साथ और उसके अभिन्नांग राजनीति, अर्थशास्त्र, धर्म, संस्कृति आदि के परस्पर सम्बंधो का अध्ययन करना आवश्यक है। जब हम सामाजिक चेतना के विषय क्षेत्र पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि इसका फलक विविध व बहु आयामी है। सामाजिक जीवन का ऐसा कोई भी पहलू नहीं है, जो इससे अछूता हो। सामाजिक चेतना के साथ आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय व सांस्कृतिक चेतना अनुशंगिक होते हैं, क्योंकि इन सबके विषय वस्तु के केन्द्र में व्यक्ति होता है। यदि व्यक्ति

है तो समाज है, व्यक्तिगत चेतना व सामाजिक चेतना दोनो एक दूसरे के पूरक होते हैं, व्यक्ति के अंतर्गत नारी और पुरूष दोनों आते है। आज समाज के अन्तर्गत नारी सबसे ज्यादा प्रताड़ित व पिछड़ी है। कदम–कदम पर उसे ठोकरों, अपमान, जिल्लत का सामना करना पड़ता है। आज कहने को तो नारी को पुरूष के बराबर समान अधिकारी का दर्जा प्राप्त है, किन्तु क्या उसे उसका सही हक मिलता है? आज भी वह घर की चहारदीवारी में कैद होकर कराहती रहती है। उसकी भी आशायें हैं, उसका भी जीवन है, उसके भी सपने हैं, उसका भी भविष्य है, वह भी पुरूषों के समान जीवन पथ पर आगे बढ़ते हुए आसमान की बुलंदियों को छूना चाहती है, किन्तु ये सब बातें सिर्फ दिवास्वप्न की तरह है।

सामाजिक चेतना दो शब्दो से मिल कर बना है समाजिक व चेतना। सामाजिक शब्द का संबंध सीधे समाज से है, जिसका अर्थ है समाज की चेतना अर्थात् जागृरूकता अथवा जागरण। समाज किसी एक व्यक्ति का प्रतिनिधित्व नहीं करता है, बल्कि व्यक्तियों के समूह को दर्शाता है। इससे स्पष्ट होता है कि सामाजिक चेतना अर्थात् किसी समाज या समूह विशेष में जागरूकता। यह जागरण किस बात का ? साहित्य अपने सही अर्थो में यही ध्वनित करता है सत्हित। सबका हित, सच्चा हित। समाज में जो पाखण्ड़, विसंगतियां, रुढ़िवाद, कुप्रथा, कुरीतियां, झूठ, फरेब, शोषण, महिला प्रताड़ना, छुआछुत, अस्पृश्यता, बुराई, दोष, मैल है, उसका खुलासा किया जाता है, ताकि समाज के प्रत्येक सदस्य इसमें बदलाव, सुधार, परिवर्तन के लिए जागृत हो जाये। समाज को बदल डालो का प्रमुख नारा सामाजिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में गूँजता रहता है। सामाजिक चेतना का विषय क्षेत्र बहु आयाम है, जिसमें परिवार, विवाह, परम्परा के प्रति विद्रोह, विभिन्न सामाजिक समस्याओं का दिग्दर्शन, संस्कृति एवं सभ्यता की अभिव्यंजना कर समाज के आदर्श स्थिति, रुप की परिकल्पना की जाती है। सामाजिक चेतना के विशिष्ट पहलुओं में अर्थ व वर्ग संघर्ष अपनी अहं भूमिका अदा करतें हैं। यही वे तत्व है

जो किसी भी समाज पर गहरा प्रभाव डालते हैं। समाज एवं चेतना भिन्न संकल्पनाएं होने पर भी सामाजिक चेतना में दोनों का विशिष्ट अर्थ है। सामाजिक चेतना का संबंध समाज के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक, राष्ट्रीय, सांस्कृतिक इत्यादि सभी परिवेशों से रहता है।

यदि व्यक्ति है तो समाज है, यदि समाज है तो व्यक्ति है। व्यक्तियों का समूह है। समाज है तो राज्य है। यदि राज्य है तो राष्ट्र है और राष्ट्र के अर्न्तगत जो लोग हैं, उनका जीवन है, उनकी संस्कृति है, उनमें जीवन को जीने का तरीका है, स्पंदन है, सामाजिक गतिविधियाँ है। सामाजिक चेतना सर्वप्रथम व्यक्तिवादी चेतना से बलवती होती है। कहा भी गया है–पहले खुद जागो तभी दूसरों को जगााओ, पहले खुद सुधरो, तभी दूसरों से हम सुधार की आशा कर सकते हैं। यदि व्यक्ति चेतना गोमुखी गंगा है तो समाजिक चेतना भागीरथी है। सामाजिक चेतना व्यक्तिगत चेतना का ही विशाल रुप है। व्यक्तिगत चेतना को यदि हम कली कहें तो समाजिक चेतना के अस्तित्व सुमन है। व्यक्तिगत चेतना के बिना सामाजिक चेतना के अस्तित्व का होना असंभव है। अर्थात् व्यक्तिगत चेतना ही सामाजिक चेतना की शुरूआत है। या इसे पहली सिढ़ी माना गया है।

जब यह विचारधारा व्यक्तिगत सोच से ऊपर उठकर सर्वकल्याण की भावना में बदल जाती है तभी सामाजिक चेतना का जन्म होता है। तब संस्कृत की से उक्तियाँ चरितार्थ होने लगती हैं।

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः"

"बहुजन सुखाय, बहुजन हिताय"

व्यक्तिगत चेतना की ऊर्ध्व मुखी पृष्ठभूमि पर ही सामाजिक चेतना की नींव स्थापित होती है। सामाजिक चेतना व्यक्तिगत चेतना का व्यापक रूपान्तरण है। संक्षेप में यह कहना अधिक सत्य प्रतीत होता है कि सामाजिक चेतना, व्यक्तिगत चेतना का ऐसा विकसित रूप है जो समाज के कल्याण हेतु सतत् क्रियाशील रहती है। वर्तमान में

चेतना गलत दिशा की ओर भी मुड़ रही है। जिससे समाज विघटित हो रहा है। समाज में रहकर अपने को समाज का यंत्र समझना समाज के उत्थान–पतन, सुख–दुख, गति, अगति, में सम्मिलित होना। पूरे समाज के उत्थान के बारे में सोचना और मानना की समाज के उत्थान से व्यक्ति का उत्थान है और व्यक्ति के उत्थान से समाज का उत्थान सुनिश्चित है। समाज की समस्याओं और संघर्षो को समझना तथा उनमें सहभागी होना ये सब सामाजिक चेतना स्थापित करने के करगार कदम है।

1.3 सामाजिक चेतना की परिभाषा

समष्टि अर्थात् समूह समाज का आधार है। समूह के विचारों और क्रियाकलापों का प्रत्यक्ष प्रभाव समाज पर पड़ता है। परिष्कृत विचार और उत्कृष्ट क्रियाकलाप मनुष्य और समाज के उत्थान में सहायक होते हैं। जब मानव समष्टि रुप में अपने संकीर्ण स्वार्थो को त्यागकर एकता, सहयोग और मातृत्व की भावना से परिपूर्ण होकर समाज के लिए कार्य करें, तो इस प्रकार की चेतना को सामाजिक चेतना कहते हैं। सामाजिक चेतना रूढ़िवादी विचारों, कुरीतियों और पारम्परिक दृष्टिकोणों का निषेध कर तार्किक दृष्टि से वैज्ञानिक और बौद्धिक विचारों को प्रश्रय देती है। सामाजिक चेतनामय समाज बौद्धिक एवं तार्किक दृष्टि से अधिक जागरूक रहता है। यह सामाजिक चेतना से ओत प्रोत ही मनुष्य अधिक सुखमय जीवन बिता सकता है।

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः" के भावार्थ से समाज का प्रत्येक वर्ग प्रभावित हो जाता है। यह भी देखा जाता है कि सामाजिक चेतना ने ही राष्ट्रीय चेतना, धार्मिक चेतना, आर्थिक चेतना, सांस्कृतिक चेतना आदि को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। सामाजिक उत्पादन प्रणाली कार्य विभाजन के अनुसार विविध वर्ग तथा उनके जीवन यापन की विशेष प्रणालियाँ निर्धारित करती है। एक वर्ग के भीतरी सामाजिक संबंध सभी मानव संबंध में है। जब एक वर्ग का मानव संबंध ही सामाजिक संबंध है तब उस वर्ग की सामाजिक चेतना मानव जीवन की धारणाओं, अनुभूतियों, अभिव्यक्तियों

एवं प्रभावों से अटूट संबंध रखता है। आदिवासियों एवं निम्न वर्ग की सामाजिक चेतना पूँजीवादी समाज से भिन्न है। यह भिन्नता विचारों एवं स्वार्थो की टकराहट का प्रतिफल है। व्यक्ति जितना विरोधजीवी है, वह उतना ही तनाव जीवी भी है। उसकी सामाजिक चेतना उसके विरोध एवं तनाव को व्यक्त करने के लिए निरंतर प्रयुक्त होती है। कुछ टूटकर ही कुछ बनता है। संहार एवं निर्माण की प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है।

अर्थ या पूँजी, समाज व्यवस्था का नियामक तत्व है, जिसके कारण समाज में अनेक प्रकार की समस्याएँ, विषमताएँ विद्यमान होती हैं। अतः सामाजिक चेतना का एक कारण, अर्थ की प्रधानता और जीवन की दयनीयता भी है। समाज की व्यवस्था का आधार धर्म भी है। समाज में एक से अधिक धर्मानुयायी भी होते है। धर्म भले ही अलग–अलग है परन्तु सभी धर्मो का प्रमुख लक्ष्य समान होता है। सभी धर्म मानवता के संदेश देते हुए लोक–कल्याण को ही अपना उर्द्विष्ट मानते हैं। धर्म के द्वारा लक्ष्य प्राप्ति के भिन्न साधनों के कारण समाज के सदस्यों में आपसी धार्मिक संघर्ष का निर्माण होता है। यह संघर्ष कभी समाज चेतना का कारण बनता है। "मनुष्य के रूप में व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास समाज की देन है। व्यक्ति की चेतना, उसका मस्तिष्क, उसकी बौद्धिक और शारीरिक उपलब्धियाँ भी समाज की ही देन है। समाज से परे रहकर इसकी कल्पना नहीं की जा सकती, इसलिए चेतना, दृष्टिकोण या विश्वदृष्टि का स्वरुप भी सामाजिक होता है। लेकिन एक वर्ग विभक्त समाज में विरोधी हितों वाले समाज में चेतना और दृष्टिकोण का स्वरूप भी वर्गीय होता जाता है। इसलिए मानवीय सामाजिक संबंध भी वर्ग विभक्त समाज में वर्गीय संबंध बन जाते हैं। फलस्वरूप समाज में एक साथ ही दो भिन्न मान–मूल्य, दो विरोधी सौन्दर्यमान, दो विरोधी मूल्य दृष्टियाँ भी दिखाई देती है। धर्म, दर्शन, कलासाहित्य, राजनीति, नैतिकता आदि विशिष्ट युग की सामाजिक चेतना को व्यक्त करने के विभिन्न माध्यम है।"

"सामाजिक चेतना से तात्पर्य किसी भी काल विशेष में आज तक होने वाले परिवर्तन से है। यह एक प्रकार की जागृति है और यह जागृति तभी संभव होती है जब गतिशील जीवन में कोई अवरोध उत्पन्न हो जाता है। यही जागृति सामाजिक चेतना की पृष्ठभूमि है और इसके पीछे उस काल विशेष की सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक परिस्थितियाँ प्रेरणात्मक कार्य करती है। साहित्य समाज से जुड़ा होता है इसलिए साहित्य में समाज के उस युग विशेष व देश विदेश का साहित्य के विषय भी उसी के अनुरूप बदलते रहतें हैं।"

"सामाजिक चेतना का अर्थ है विविध विषयों व वस्तुओं के विषय में जानकारी होना। दूसरे अर्थ में बुद्धि, मनोबुद्धि, ज्ञानात्मक मनोवृत्ति स्मृति, सुधि, याद, चेतना और होश भी है। पशुओं से भिन्न अर्थात् जन समूह अथवा जन–समाज की ज्ञानात्मक मनोवृत्ति का नाम सामाजिक चेतना है। सामाजिक चेतना अभावात्मक या नकारात्मक नहीं होती । मानव मात्र में चौतन्य मूर्त है परन्तु रूढीघ अशिक्षा व अभावों के कारण वह दुष्प्रभावित या कुण्ठित हो जाती है। इस दुष्प्रभाव से मुक्त रहना और कुण्ठा को अपनी अन्तवृत्ति से तिरोहित बनाये रखना ही सामाजिक चेतना है।"

"प्रत्येक युग में सामाजिक चेतना के कई स्तर होते हैं। सामाजिक चेतना व्यक्ति की भी हो सकती है, समूह की भी। व्यक्ति की सामाजिक चेतना वैयक्तिक अनुभव के आधार पर निर्मित होती है, अतः इसे व्यापक रूप देने के लिए आवश्यक है कि सामाजिक चेतना समूची सामाजिक गतिविधियों के प्रति सचेष्ट रहे और अपने को समर्ग परिवेश से जोड़ कर रखें।"

इस प्रकार "आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों तथा समाज में प्रचलित परम्परागत मूल्यों के परस्पर संघात से जो नयी– नयी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती है, उनकी समझ और विश्लेषणात्मक शक्ति सामाजिक चेतना है। सामाजिक चेतना केवल समझ भी नहीं देती, अपितु वह सामाजिक उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिए आगे बढ़ने की प्रेरणा भी देती है और सामाजिक

आयामों के विस्तार के साथ–साथ विकसित भी होती है। परम्परा से चली आ रही मान्यताओं, रूढ़ियों और संस्कारों के कारण कुण्ठाग्रस्त जनता के जीवन में आशा प्रेरणा, आस्था एवं स्फूर्ति जागृत कर इन्हें एक सूत्र में पिरोना सामाजिक चेतना का कार्य है। विभिन्न समाजों और एक समाज में भिन्नताओं के कारण सामाजिक चेतना भी भिन्न रूपी हो सकती है किन्तु मूलतः इसमें समाज–सुधार, सामाजिक प्रगति अथवा सामाजोत्थान का ही प्रधान्य रहता है, यही इसके मुख्य प्रेरणा स्त्रोत है।"

सामाजिक चेतना में परिवर्तन कई स्तरों में हो रहा हैः

1. बहुविवाह प्रथा को नकार दिया गया है।
2. बेटियों का स्थान समाज मे महत्वपूर्ण हो गया है बेटी पढ़ाओ अभियान ने समाज को नयी दिशा दी है।
3. महिलाओं की भागीदारी गृहस्थ के साथ आर्थिक क्षेत्रों में भी बढ़ी है। जिसके कारण पर्दाप्रथा अंतिम चरण में है।
4. चेतना एवं जागरूकता के कारण महिलाओं ने अपना राजनैतिक अस्तित्व स्थापित किया।
5. मृत्यु भोज प्रथा के प्रचलन में कमी आई है।
6. अंतरजातिय विवाह का प्रचलन बढ़ गया है।
7. मिश्रित संस्कृति का परिपालन हो रहा है।

अपनी संस्कृति व रीति रिवाजों का पालन करते हुए भी आपसी प्रेम, और राष्ट्रीय प्रेम बना रह सकता है। क्षेत्रीय व लोक संस्कृति का अपना सौन्दर्य व महत्व होता है, यह बना रहना चाहिए।

"साहित्यकार एक प्रबुद्ध, जागरूक व संवेदनशील प्राणी है। समाज को सही दिशा दिखाने में साहित्यवर्ग की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। अपनी रचनाओं के माध्यम से समय–समय पर विचारों को अभिव्यक्त करते है। अपने युग की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों से अलग होकर साहित्य रचना उसके

लिए एक अत्यंत दुष्कर कार्य है। ये सभी परिस्थितियाँ प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से साहित्य सृजन की प्रेरणा देती है। किसी व्यक्ति के निर्माण में युगीन परिस्थितियाँ महत्वपूर्ण व सहायक सिद्ध होती है।"

"साहित्य के सृजन में साहित्यकार के संस्कार, पारिवारिक वातावरण, उससे मानस–पटल पर अंकित प्रभाव तथा इस प्रभाव के द्वारा निर्मित विचारधारा और मान्यताओं का महत्वपूर्ण स्थान होता है।"

डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी मानते हैं कि "मनुष्य जन्मजात जानवर है, वह अपनी चेतना को व्यक्तिगत प्रवृत्तियों में केन्द्रित रखता है पर उसमें संभावना है कि वह अपनी वृत्तियों या प्रवृत्तियों का समाजीकरण करें। व्यक्ति चेतना को सामाजिक चेतना के रूप चेतना में विकसित करें। चेतना को व्यक्ति में और व्यक्ति चेतना को समाजहित परक चेतना में परिणत कर दे।"

भीष्म साहनी की दृष्टि में "सामाजिक चेतना हमारी परम्परागत मानवीय धारणाओं से जुड़ती है। ये उसे व्यक्ति विकास का अलग चरण मानते है।"

यह बात उनके उपन्यासों एवं कहानियों में परिलक्षित होती है जैसे–तमस।

पंडित मुकुटधर पाण्डेय ने अपने पत्र में मनुष्य और सामाजिक चेतना के प्रगाढ़ संबंधों पर निम्न प्रकार से टिप्पणी की है:

"मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है अतः सामाजिक चेतना से उसका चोली दामन का साथ है।"

1.4 सामाजिक चेतना के प्रकार

1.4.1 व्यक्तिमुखी चेतना

1.4.2 स्मृष्टिमुखी चेतना

1) सामाजिक चेतना

2) धार्मिक चेतना

3) राजनीतिक चेतना

4) साहित्यिक चेतना
5) सांस्कृतिक चेतना
6) आर्थिक चेतना
7) गांव–नगर–चेतना
8) समकालीन चेतना
9) व्यंग्य–चेतना
10) बाल–किशोर–चेतना

1.4.1 व्यक्तिमुखी चेतनाः

मानव जीवन, चेतना पर आश्रित है। चेतनाहीन मनुष्य मृत समान है क्योंकि चेतना के अभाव में मानव जीवन का कोई औचित्य नहीं, वह निरर्थक है। चेतना मनुष्य को क्रियाशील बनाती है। मनुष्य एक विचारशील प्राणी है, उसका चिन्तन विविध स्तरों पर चलकर अनेक आयामों को प्रकट करता है। व्यक्ति को उसकी आविष्कारिणी प्रतिभा के कारण सर्वोत्तम सत्ता का स्वामी जैसे अनेक विशेषणों से अभिहित किया गया है। अनुमानित तथा तत्सम्बंधित वस्तु अथवा व्यक्ति उस पूरे जगत में रहते हैं। जिसे हम वर्ग और समाज कहते हैं। व्यक्ति मानव इकाई है और सामाजिक प्राणी भी है। उसका जीवन सामुदायिक जीवन के रुप में चाहे ना भी प्रकट हो पर फिर भी वह सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति और पुष्टि भी है।

व्यक्ति ने समूह में रहने के लिए विविध प्रकार की चेष्टाएँ की है। आज तक की प्रगति इस बात का प्रमाण है कि व्यक्ति सामूहिकता बनाये रखने के लिए विविध प्रकार की संस्थाओं, संगठन, संघ एवं बल आदि निर्मित करता रहा है। व्यष्टि और समष्टि समस्त व्यक्ति का चिन्तन–विषय होता हैं। व्यष्टि या व्यक्ति से प्रभावित चेतना व्यक्तिमुखी चेतना कही जाती है। व्यक्तिवादी चेतना व्यक्ति की स्व–उन्नति के लिए अपरिहार्य है। व्यक्ति समाज की ईकाई है। अतः समाज की उन्न्ति के लिए सर्वप्रथम व्यक्ति की उन्नति आवश्यक है। व्यक्तिमुखी चेतना में व्यक्ति स्वयं को केन्द्र में रखकर स्व–उन्न्ति के लिए प्रयत्न करता है। इस दिशा में उसके प्रत्येक प्रयत्न में निजी

यश, समृद्धि और मशाल की इच्छा प्रच्छन्न रहती है। व्यक्तिमुखी चेतना जब अधिक उन्नत और सामाजिक हित या समष्टि कल्याण का स्वरुप ग्रहण कर लेती है, तब वह सहज ही समष्टिमुखी चेतना में परिवर्तित हो जाती हैं। यह व्यक्तिमुखी चेतना का समष्टिकरण है।

1.4.2 स्मष्टिमुखी चेतनाः

स्मष्टि के कल्याण के प्रति सजगता को स्मष्टिमुखी चेतना कहतें हैं। स्मष्टि व्यक्तियों का समूह है। अतः स्मष्टि का हित व्यष्टि के हित की अपेक्षा प्रधान हो जाता है। समाज का प्रत्येक सदस्य स्मष्टि का अंग होता है, इसलिए स्मष्टि के कल्याण का आशय होता है। व्यक्ति का कल्याण व्यक्ति की प्रत्येक उपलब्धि का मूल्यांकन समाज में होता है। व्यक्ति से स्व–उत्थान के प्रयत्नों के अतिरिक्त ऐसे प्रयत्नों की भी अपेक्षा की जाती है, जिससे स्मष्टि का उत्थान और कल्याण हो। लोकहित स्व–हित से श्रेष्ठ होता है। स्मष्टिमुखी चेतना लोक मंगल पर आधारित होती है।

1) सामाजिक चेतनाः

सामान्यतः सामाजिक चेतना से हम किसी देश एवं काल विशेष से सम्बन्धित मानव समाज में अभिव्यक्त परिवर्तनशील जागृति समझते हैं। जनजीवन में लक्षित यह जागृति या सामाजिक चेतना तत्कालीन जीवन में उत्पन्न अप्रत्याशित गतिरोध एवं गतिशीलता से उत्पन्न हो सकती है। निस्सन्देह एक साहित्य विद्या के रुप में कहानी मानव जीवन के निकट होने से समाज–जीवन को अधिक यथार्थता से प्रस्तुत करती है। सामाजिक चेतना समाजगत होने से समाज–जीवन को साथ और उसके अभिन्नांग राजनीति, अर्थशास्त्र, धर्म, संस्कृति आदि के परस्पर सम्बन्ध से जुड़े हुए है। भीष्म साहनी द्वारा सामाजिक चेतना पर लिखित रचना तमस है।

2) धार्मिक चेतनाः

अलौकिक और पवित्र शक्तियों से सम्बद्ध सभी विश्वास, विचार और क्रियाओं के समन्वित रुप धर्म में पौराणिक कथाओं, धार्मिक

प्रतीकों तथा क्रियाओं का समावेश रहता है। प्रार्थना, पूजा, कथा, व्रत आदि का सम्बंध धर्म से सदैव रहा है। पाश्चात्य शिक्षा के परिणामस्वरुप धर्म और धार्मिक रीति–रिवाजों का मजाक भी उड़ाया गया है। इस प्रकार लेखिकाओं ने धर्म के प्रति श्रद्धा और विश्वास तथा नई शिक्षा के परिणामस्वरुप उपहास दोनों रुपों को प्रस्तुत किया है।

मानव में नैतिक मूल्यों को प्रतिष्ठित करने के लिए ही धर्म की स्थापना की गई है। जब धर्म की अनुचित व्याख्या कर उसे ही अनैतिक बनाया जाये तो उसके अनुकरण का कोई औचित्य नहीं। कभी व्यक्तिगत स्वार्थ और कभी वर्ग विशेष के स्वार्थ के कारण धर्म के गर्भ को नहीं जाना जा सकता है पाखण्ड, मिथ्या, अनीति के जाल में उलझे धर्म को धार्मिक चेतना के द्वारा ही सही मार्ग पर लाया जा सकता है। ऐसी स्थिति में वह धर्म को दूसरे ही स्वरुप में देखता है। वह धर्म को एक चारागाह बना लेता है और अपने स्वार्थ लिप्सा का संवरण नहीं कर पाता। धर्म सुधारक ऐसे समय में जागरण का शंखनाद कर मानव मन से अज्ञानता का अहंकार दूर कर ज्ञान का आलोक विस्तीर्ण कर देते हैं। कबीर, नानक, रैदास, नामदेव, जैसे संतों व धर्म सुधारकों ने समाज में अपनी वाणियों के द्वारा धार्मिक चेतना का आह्मान किया हैं। धर्म के यथार्थ स्वरुप को प्रत्यक्ष करना ही धार्मिक चेतना का कार्य है और धर्म का यथार्थ व सच्चा स्वरुप है। मानव धर्म, प्रेम, भलाई, दया, क्षमा, त्याग, नीति, न्याय, परोपकार आदि की भावना। अमृत लाल नागर द्वारा धार्मिक चेतना पर लिखित रचना अमृत और विष है।

3) राजनीतिक चेतनाः

मनुष्य हमेशा से ही आनन्दमय जीवन जीना चाहता है और यह तभी संभव है, जब समाज में शान्ति और सुव्यवस्था की स्थापना का कार्य राज्य अर्थात् प्रशासन का होता है। समृद्ध और जन कल्याणकारी प्रशासन नागरिकों की सजगता और योग्यता पर निर्भर करता है। आज के युग में राज्य के कार्यक्षेत्र में अत्यंत विस्तार आ जाने के कारण राजनीतिक चेतना का महत्व अपेक्षाकृत अधिक हो गया है, तो

वह उनकी राजनीतिक चेतना का ही परिचायक होता है। राजनीतिक चेतना की अभिव्यक्ति नागरिकों द्वारा राज्य के हित के लिए किये गये कार्यो से होती है। राजनीतिक रूप से चौतन्य समाज राष्ट्रीय हित को सर्वोपरि मानता है और उसके लिए निःस्वार्थ भाव से कार्य करता है। बीसवीं शताब्दी के पूर्वाधि में पराधीन भारत में राजनीतिक चेतना का तीव्रता से प्रसार हुआ। इसी रातनीतिक चेतना के फलस्वरुप भारत देश को अंग्रजों की गुलामी से मुक्ति मिली और हमारा देश आजाद हुआ।

4) साहित्यिक चेतनाः

साहित्य सृजन का उद्देश्य न केवल स्वतःसुखाय वरन लोकहिताय भी है। साहित्यकार अतीत से प्रेरणा लेकर, वर्तमान को ध्यान में रखकर भविष्य का भव्य प्रसाद निर्मित करता है। साहित्य में यदि केवल प्रशस्ति गान अथवा अतिशय आमोद–प्रमोद हो तो वह समाजोपयोगी नहीं बन सकता हैं। रीतिकाल के कवियों की घोर श्रृंगारिकता के कारण वह प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं हुई। जो भक्ति काल के कवि दृष्टा कबीर और तुलसी को प्राप्त हुई। इन कवियों का काव्य आज भी लोकोपयोगी और प्रासंगिक है। क्योंकि वह साहित्य, युगीन आवश्यकताओं के अनुरूप है। द्वितीय स्तर पर साहित्यिक चेतना पाठक वर्ग पर आधारित होती है। इसीलिए साहित्य के द्वारा समाज में एक साहित्य चेतना के महत्व को आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अपने प्रसिद्ध निबंध साहित्य की महत्ता में इस प्रकार रेखांकित किया है। "साहित्य में जो शक्ति छिपी है, वह तोप, तलवार और बम के गोले में नहीं पायी जाती।"

5) सांस्कृतिक चेतनाः

चेतना का एक विशिष्ट व महत्वपूर्ण स्वरूप है सांस्कृतिक चेतना। जो किसी भी समाज के हर व्यक्ति से जुड़ा होता है। ज्ञान एवं कर्म के सम्मिलित रूप का नाम ही संस्कृति है। जीवन के विटप का पुष्प संस्कृति है। उसके अन्तर्गत कहानीकारों ने पौराणिक कथाओं, लोक विश्वासों, व्रत–त्यौहारों, नैतिकता–अनैतिकता, मनुष्य के सात्विक

भावों, लोक गीतों, नृत्यों, साहित्य, संगीत, कला, शिल्प, मनोरंजन, फैशन भौतिक सुख साधनों, उपकरणों, ग्रह–ज्ञान, नक्षत्र, ज्योतिष, शाप, चमत्कार आदि का कहानियों में वर्णन कर लोक–चेतना, कलात्मक चेतना और सांस्कृतिक चेतना को उभारने का प्रयास किया है। वर्तमान समाज में उभर रहे क्रूरता, हृदयहीनता आदि के मूल्यों को प्रस्तुत कर पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति के प्रभाव स्वरुप निर्मित आधुनिक चेतना को भी उभारा गया है।

"संस्कृति सीखे हुए मानव व्यवहार के प्रकारों की समग्रता का समुच्चय है।"

"मनुष्य की श्रेष्ठतम अनुभूत साधनाओं की समष्टि का नाम है संस्कृति। संस्कृति का अर्थ है सम्यक कृति।"

"शब्द उत्पत्ति के आधार पर संस्कृति मानव के क्रियाकलापों का लेखा जोखा है।"

"संस्कृति मानव की विविध साधनाओं की सर्वोत्तम परिगति है।"

"राष्ट्र का तीसरा अंग जन की संस्कृति है। मनुष्यों ने युग–युग में जिस सभ्यता का निर्माण किया है, वही उनके जीवन का श्वास–प्रश्वास है। बिना संस्कृति के जन की कल्पना करना असभव है, संस्कृति ही जन मस्तिष्क है। संस्कृति के विकास और भारतीय के द्वारा ही राष्ट्र की वृद्धि संभव है। राष्ट्र के समग्र रुप में भूमि और जन के साथ–साथ जन की संस्कृति का महत्वपूर्ण स्थान है। यदि भूमि और जन अपनी संस्कृति से विरहित कर दिए जाएँ, तो राष्ट्र का लोप समझना चाहिए। जीवन के विटप का पुष्प संस्कृति को कहा गया है। संस्कृति के सौन्दर्य और सौरभ में ही राष्ट्रीय जन के जीवन का सौन्दर्य और यज्ञ अंतर्निहित है। ज्ञान और कर्म दोनों के पारस्परिक प्रकाश की संज्ञा–संस्कृति है। भूमि पर बसने वाले जन के ज्ञान के क्षेत्र में जो सोचा है और कर्म के क्षेत्र में जो रचा है, दोनों के रूप में हमें राष्ट्रीय संस्कृति के दर्शन मिलते हैं। यह जीवन के विकास की युक्ति को निश्चित करती है और उससे प्रेरित संस्कृति का

विकास करती है। इस दृष्टि से प्रत्येक जन की अपनी–अपनी भावना के अनुसार पृथक–पृथक संस्कृतियाँ राष्ट्र में विकसित होती है, परन्तु उन सबका मूल आधार पारस्परिक सहिष्णुता और समन्वयों पर निर्भर है।

6) आर्थिक चेतनाः

वर्तमान जगत में मौलिकता के प्रसार के कारण आर्थिक विचारों का महत्व बहुत बढ़ गया है। कार्लमार्क्स ने समाज की आर्थिक व्याख्या कर शोषितों को आर्थिक और सामाजिक चेतना के लिए प्रेरित किया। आर्थिक चेतना के अभाव के कारण ही समाज में वर्ग भेद है। मनुष्य को आदर्श जीवन जीने के लिए कुछ अनिवार्य और कुछ आवश्यक चीजों की आवश्यकता होती है। इनकी पूर्ति धन से ही संभव है। आर्थिक चेतना के उद्दीप्त होने से मनुष्य भौतिक स्तर पर श्रेष्ठ अथवा आदर्श स्थिति प्राप्त करने के लिए ललायित हो जाता है। आध्यात्मिक दृष्टि से धन अथवा सभ्यता को कोई महत्व भले न हो परन्तु भौतिक दृष्टि यह एक अनिवार्यता के रूप में मनुष्य के सामने आती है। आधुनिक युग में भी जिन राष्ट्रों के समष्टि जन में आर्थिक चेतना की अत्यंत सजगता है, विकास का आधार हो गया है। आशय यही है कि आर्थिक चेतना समष्टि में उन्नति की भावना विकसित करती है, जिससे समष्टि उत्पादन कार्यो में लगातार आर्थिक और भौतिक रूप से अपने को सुदृढ़ करता है, परन्तु आर्थिक चेतना की भावना समष्टि के सभी वर्गो में रहनी चाहिए, जिससे वर्गभेद की स्थिति निर्मित न हो। योग्यता और श्रम के अनुरूप समाज के प्रत्येक सदस्य को उसका उचित पारितोषिक मिले।"

कार्लमार्क्स ने सर्वहारा वर्ग में सामाजिक–आर्थिक चेतना का सम्प्रेषण करते हुए उस वर्ग संघर्ष के लिए उत्प्रेरित किया।

7) गांव–नगर–चेतनाः

कहानीकारों ने अपने कहानियों में गांव, कस्बों, नगरों तथा महानगर की घटनाओं, प्रसंगो और स्थितयों को केन्द्र–बिन्दु बनाया

है। इसके अर्न्तगत होने वाले अपराध, बाल–अपराध, निर्धनता, बेकारी, वेश्यावृति, मद्यपान, भिक्षावृत्ति, आत्महत्या, पारिवारिक विघटन, परिवार नियोजन, कन्याभूण हत्या, हत्या, बलात्कार, अपहरण, चोरी, उठाईगिरी, घर से भागी या भगाई गयी और दलालों के जाल में फंसी लड़कियों को इसके अन्तर्गत रखा जा सकता है। इसे राजनीतिक चेतना से भी जोड़ा जा सकता है। जिसमें अवसरवादिता, जनसेवा का ढोंग, पार्टी नेताओं का घटिया स्तर, स्वार्थी नेता और दलीय राजनीति आदि सम्मिलित है।

8) समकालीन चेतनाः

कहानीकारों नें ऐसी कहानियों की रचना की है जिनके कथानक पौराणिक, प्रागैतिहासिक तथा ऐतिहासिक है। कहानीकारों ने कहानियों के माध्यम से समकालीन चेतना की सुन्दर अभिव्यक्ति दी है। लेखकों ने अतीत के माध्यम से वर्तमान के संदेश देकर अपने ऐतिहासिक–पौराणिक कहानियों को समकालीन संदर्भो से जोड़ कर सार्थकता प्रदान की है।

9) व्यंग्य–चेतनाः

समाज की समस्याओं को दो शैलियों में उठाया है। पहली शैली वर्णनात्मक तथा दूसरी व्यंग्य है। व्यंग्य –शैली के अन्तर्गत कहानिकारों के मृदु–तीक्ष्ण कटाक्षों को प्रस्तुत किया जा सकता है। जिसके कारण कहानियों में सामाजिक चेतना अत्यन्त सशक्त और प्रखर होकर उभरी है। श्री लाल शुक्ल द्वारा व्यंग्य चेतना पर लिखित रचना राग दरबारी है।

इस तरह सिद्ध है कि चेतना भी सामाजिक चेतना एक लेखक के लिए उसकी रचना के लिए बहुत उपयोगी तथ्य है। जब तक उसे चेतना की गहराई से समझने की चेतना नहीं होगी वह महाश्वेता देवी की तरह श्रेष्ठ लेखन नहीं कर पायेगा। सामाजिक चेतना व्यक्ति को विचारवान बनाती है उसे एक सभ्य सुसंस्कृत चरित्र प्रदान करती है जिससे वह समाज में अपनी भूमिका रख सकता है।

————::::————

अध्याय 02

महाश्वेता देवी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

2.1 महाश्वेता देवी का व्यक्तित्व

महाश्वेता देवी का नाम ध्यान में आते ही उनकी कई–कई छवियां आँखों के सामने प्रकट हो जाती है। इन छवियों में साहित्यकार, लेखिका, कवि, उपन्यासकार, कहानीकार, नाटककार, समाज सेवी, समाज सुधारक, आन्दोलनधर्मी, पत्रकार, आदि शामिल है। बंगाल की प्रख्यात लेखिका महाश्वेता देवी का जन्म साहित्यकार परिवार के घर सोमवार दिनांक 14 जनवरी सन् 1926 में अविभाजित भारत के ढ़ाका मे जिंदाबहार लेन में उनके ननिहाल में हुआ था। जिसे आज आधुनिक युग में बंगलादेश के नाम से जाना जाता है। उनके पिता मनीष घटक सुप्रसिद्ध कवि, और उपन्यासकार एवं उच्च्कोटि के लेखकों में पहचाने जाते है। उनकी माता धारिर्ती देवी भी एक लेखिका और सामाजिक कार्यकर्त्ता थीं। जाने माने बंगाली फिल्म निर्देशक ऋत्विक घटक इनके भाई है।

महाश्वेता देवी ने अपने माता एवं पिता दोनों की इन विशेषताओं को आत्मसात किया। पिता से भी बढ़कर बंगला साहित्य की कवि, उपन्यासकार, कहानीकार एवं नाटककार रही है माता की तरह लेखिका होने के साथ–साथ सामाजिक कार्यकर्त्ता भी रही। कई सामाजिक संस्थाएं उनके मार्गदर्शन में आदिवासी, दलित, शोषित, महिलाओं एवं गरीबों के लिए आज भी कार्य कर रही है। महाश्वेता देवी बचपन से ही मातृभक्त रही हैं। उनकी प्रारंभिक शिक्षा ढाका के इंडेन मांटेसरी स्कूल में हुई। नन्ही महाश्वेता देवी केवल चार वर्ष की उम्र में ही बंग्ला भाषा में लिखना–पढ़ना सीख चुकी थी। पिता की नौकरी ऐसी थी कि कई बार तबादले होते रहे, उन्हें ढ़ाका मनमनसिंह, जलपाईगुड़ी, दिनाजपुर और फरीदपुर में सेवायें देनी पड़ी। इस दौरान महाश्वेता देवी का ननिहाल में आना–जाना लगा रहता था।

बंगाल के मुख्य पर्व दुर्गापूजा का अवकाश तो ननिहाल में ही बीतता था। उनके पिता का तबादला मेदिनीपुर में हुआ तो महाश्वेता देवी का वहाँ के मिशन स्कूल में आगे की पढ़ाई के लिए दाखिल कर दिया गया। एक साल बाद मेदिनीपुर से निकाल कर शांतिनिकेतन भेज दिया गया। शांतिनिकेतन की दिनचर्या ऐसी थी कि महाश्वेता देवी का अधिकांश समय लाइब्रेरी में बैठकर लेख लिखने और किताब पढ़ने में व्यतीत होता था इस लिए उनका मन वहाँ जल्दी ही लग गया। वहाँ उन्होंने आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी से हिन्दी सिखी। सन् 1937 में गुरूदेव रवींद्रनाथ ठाकुर से बंग्ला का ज्ञान प्राप्त किया। शांतिनिकेतन में वे तीन साल तक ही रह सकीं। सन् 1939 में उन्हें कोलकाता जाना पड़ा। तब महाश्वेता देवी के छोटे पांच भाई–बहन थे। माँ गर्भवती थी, तभी सीढ़ियों से फिसलकर गिर पड़ने के कारण उनका जीवन खतरे में था। महज तेरह वर्ष की किशोरावस्था में माँ की देख रेख के साथ भाई–बहनों को संभालना पड़ा। इस दौरान छोटे भाई–बहनों को पढ़ाया भी करती थी।

महाश्वेता देवी ने कलकत्ता के बेलतला बालिका विद्यालय में आठवीं कक्षा की पढ़ाई शुरू की। इसी स्कूल में उनकी शिक्षिका अपर्णा सेन के बड़े भाई खेगेंद्रनाथ सेन रंगमशाल नामक पत्रिका का प्रकाशन करते थे। उन्होंने महाश्वेता देवी को एक दिन रविन्द्रनाथ टैगोर की पुस्तक 'छेलेबेला' देते हुए कुछ लिखकर देने को कहा। महाश्वेता देवी ने लिखा और वह रंगमशाल में प्रकाशित भी हुआ। यह महाश्वेता देवी की प्रथम रचना थी। उन्होंने शालेय जीवन में ही राजलक्ष्मी और धीरेन्द्र भट्टाचार्य के साथ मिलकर एक स्वहस्तलिखित पत्रिका 'छन्नछाड़ा' निकाली। उनका जन्म एक शिक्षित एवं साहित्य परिवार में हुआ था। साहित्यकार परिवार में जन्म लेने के कारण साहित्य से उनका नाता घर आँगन जैसा था। उनके पूरे घर का वातावरण ही शिक्षा एवं साहित्य को समर्पित था। इसलिए महाश्वेता देवी को नियमित रूप से लिखने एवं पढ़ने का अभ्यास बाल अवस्था से ही हो गया था। बचपन से ही उनका पुस्तकों के प्रति असीम प्रेम

था। पुस्तकें पाते ही महाश्वेता देवी उनमें खो जाती थी।

इस तरह से महाश्वेता देवी को उनकी दादी, नानी व माँ से अच्छे साहित्य पढ़कर लिखने के संस्कार मिले थे। उनके पिता की भी बहुत बड़ी लाइब्रेरी थी। जिनमें नोबेल पुरस्कार प्राप्त कई लेखकों की रचनाओं का महाश्वेता देवी ने अध्ययन किया। सन् 1942 में घरेलू कार्य करते हुए उन्होंनें मैट्रिक की परीक्षा पास की थी। महाश्वेता देवी को साहित्य के क्षेत्र में परिवार से मिली विरासत एवं दृढ़ता ने लिखने एवं सामाजिक कार्य करने के लिए प्रेरित किया।

सन् 1943 में अकाल पीड़ितों की सेवा के लिए आत्मरक्षा सेवा समिति के साथ जुड़कर कार्य किया। उन्होंने सेवा कार्य के दौरान कई पीड़ितों को मरते हुए देखा था। इस पीड़ा का उनके जीवन में बहुत प्रभाव पड़ा।

सन् 1944 में महाश्वेता देवी ने कलकत्ता के आशुतोष कॉलेज से इन्टरमिडियेट पास किया। तब तक परिवार की कुछ जिम्मेदारी छोटी बहन मितुल ने संभाल ली थी। तब महाश्वेता देवी कॉलेज की पढ़ाई के लिए शांतिनिकेतन चली गई। वहाँ 'देश' पत्रिका के संपादक सागरमय घोष आया करते थे। उन्हें महाश्वेता देवी से 'देश' में लिखने को कहा। तब महाश्वेता देवी बी.ए तृतीय वर्ष में अध्ययनरत थीं। 'देश' के लिए तीन कहानियाँ लिखी और वह छपी, इस ऐवज में पारिश्रमिक के रूप में 30 रुपये प्राप्त हुए। तभी उन्हें एहसास हुआ कि पढ़ लिखकर गुजारा किया जा सकता है।

शांतिनिकेतन से ही सन् 1946 में अंग्रेजी में ऑनर्स के साथ स्नातक की डिग्री हासिल की। सन् 1947 में प्रख्यात रंगकर्मी बिजोन भट्टाचार्य से इनका विवाह हुआ था। सन् 1948 में पदमपुकुर संस्थान में अध्यापन कार्य कर परिवार का भरण–पोषण किया। इसी वर्ष पुत्र नवारून भट्टाचार्य का जन्म हुआ। पति के साथ पुत्र के पालन–पोषण की संपूर्ण जवाबदारी महाश्वेता देवी पर आ चुकी थी। सन् 1949 में पोस्ट एंड टेलीग्राफ ऑफिस में अपर डिवीजन क्लर्क की नौकरी की।

पति कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य थे। इसलिए नौकरी खोनी पड़ी। महाश्वेता देवी के प्रयास एवं दबाव में उन्हें इसी पद पर पुनः बहाल किया गया। दोबारा कम्युनिस्ट पार्टी से नाता होने का आरोप लगा और उन्हें नौकरी से निकाल दिया गया। परिवार का खर्च चलाने के लिए सेल्समेंन बन महाश्वेता देवी ने साबुन की ब्रिकी की। निजी टयूशन करके खर्च चलाया।

सन् 1957 में रमेश मित्र बालिका विद्यालय में शिक्षक की नौकरी मिलने तक उपरोक्त कार्य करती रही। संघर्ष के इन दिनों में लेखिका महाश्वेता देवी को भी तैयार किया। उन्होनें विश्व प्रसिद्ध लेखकों चिंतकों में इलिया एरेनबर्ग, अलेक्सी टालस्टाय, गोर्की, चेखव आदि की रचनाएं पढ़ी। संघर्ष के समय महाश्वेता देवी ने दरिद्रता, भूख, बेबसी, शोषण, गरीबी को करीब से देखा एवं महसूस किया।

पति बिजोन भट्टाचार्य को हिन्दी फिल्म की कहानी लिखने के लिए मुम्बई जाना पड़ा। उनके साथ महाश्वेता भी गई। मुम्बई में उनके बड़े मामा सचिन चौधरी के घर 'वी.डी.सावरकर 1857' किताब को पढ़ा और प्रभावित हुई। इस किताब से महान क्रांतिकारी झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई पर किताब लिखने की प्रेरणा मिली। उन्होंने लिखने के पहले रानी लक्ष्मी बाई पर लिखी सभी किताबों एवं रचनाओं को पढ़ा। लेखन कार्य शुरू करने के पहले झाँसी की रानी के भतीजे गोविंद चिंतामणि से पत्र व्यवहार आरम्भ किया।

वास्तविकता तक पहुँचने की चाहत के कारण छः वर्षीय पुत्र एवं पति को कोलकत्ता छोड़ कर सन् 1954 में झाँसी चली गई। अकेले ही बुंदेलखण्ड की यात्रा की। झाँसी की रानी पर जीवनी लिखने वाले लेखक वृदाँवनलाल वर्मा के घर पर झाँसी में मुलाकात की। उनसे मिली सलाह पर लक्ष्मी बाई से जुड़े कई स्थानों का भ्रमण किया। उनकी पहली पुस्तक सन् 1956 में आई उन्होंने झाँसी में बिताये एक एक दिन के पवित्र स्मृति को इस पुस्तक के माध्यम से समर्पित किया है।

साठ का दशक महाश्वेता देवी के लिए उथल–पुथल भरा रहा। उनकी संतान प्राप्ति के पश्चात् उनका वैवाहिक जीवन लम्बे समय तक नहीं चल सका। सन् 1962 को पति श्री बिजोन भट्टाचार्य से तलाक हो गया। इसके पश्चात् दूसरा विवाह असीत गुप्त से हुआ।लेकिन सन् 1975 में उनसे भी तलाक हो गया। इसके बाद उन्होंने लेखन और आदिवासियों के बीच कार्य कर हमेशा स्वयं को सृजनात्मक कार्यो में व्यस्त रखा। महाश्वेता देवी ने सभी परिस्थितियों में समस्त कर्तव्यों का निर्वाहन किया। घर में बेटी, दीदी, पत्नी, माँ और दादी माँ की भूमिका बखूबी निभाई। तीसरी पीढ़ी के बच्चे भी महाश्वेता देवी के घर आकर ज्यादा आजादी व आनन्द का अनुभव करते थे। महाश्वेता देवी ने अपनी कई किताबे अपने पत्रकार पौत्र तथागत भट्टाचार्य को समर्पित की है।

इस प्रकार महाश्वेता देवी को साहित्य विरासत में मिला हैं। पिता से साहित्य व माता से समाज कार्य से मिली शिक्षा उनके मस्तिष्क व ह्रदय मे समा गई। माता और पिता के गुणों को आत्मसात करते हुए महाश्वेता देवी ने भी रचनाएं लिखना आरम्भ किया। वे वर्षो बिहार और बंगाल के धने कबाइली इलकों में रही है। इन कबाइली इलाको, बस्तियों में रहकर आदिवासी वर्ग की जीवनशैली रहन–सहन तथा इस वर्ग द्वारा स्वयं को समाज की मुख्यधारा में स्थापित करने के दौरान होने वाली समस्याओं को करीब से देखा व अनुभव किया है। एक तरह से इन कबाइली इलाकों के मध्य किये गये अनुसंधान के आसपास ही उनकी रचनाएं केंद्रित है और इन्हीं अनुसंधान, अनुभव, विचारों को अपनी मजबूत लेखनी के माध्यम से उपन्यासों एवं कहानियों में सम्मिलित किया है।

विश्वभारती विश्वविद्यालय, शांतिनिकेतन से बी.ए ऑनर्स अंग्रेजी में और कोलकत्ता विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में मास्टर की डिग्री हासिल करने के बाद एक शिक्षक और पत्रकारिता के माध्यम से अपना जीवन शुरु किया। इसके उपरान्त सन् 1964 में महाश्वेती देवी ने कोलकत्ता विश्वविद्यालय में अंग्रेजी व्याख्याता के पद पर रहते हुए

अध्यापन कार्य किया।

लगातार बीस वर्षो तक अपने ज्ञान को कॉलेज विद्यार्थियों के साथ बाँटती रही। इस दौरान साहित्य के साथ भी उनका नाता रहा। परंतु गुजरते समय के साथ उनकी रूचि साहित्य के क्षेत्र में बढ़ती रही। इस गुण को भांपते हुए स्वयं को शिक्षा के क्षेत्र से अलग करने का निर्णय लिया। सन् 1984 में लेखन कार्य में बढ़ती रुचि के कारण विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्ती ले ली। उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र से अलगाव का फैसला केवल एवं केवल साहित्य को सम्पूर्ण समय समर्पित करने के लिए लिया था। इसके पश्चात् वे लगातार कहानियाँ एवं उपन्यास लिखती रही एवं पत्र–पत्रिकाओं में अपने विचार लेखनी के माध्यम से व्यक्त करती रही। उन्होंने परिश्रम व पूर्णनिष्ठा के बलबूते अपने व्यक्तित्व को निखारा है। उन्होंने अपने को एक पत्रकार, लेखक, अध्यापक, साहित्यकार, समाजसेविका और आन्दोलनधर्मी के रुप में स्वयं को स्थापित किया। जिसके कारण यह महान महिला लेखिका केवल बंगाल तक ही सीमित नहीं है बल्कि पूरे देश व अन्तर्राष्ट्रीय साहित्कार के रूप में पढ़ी व सुनी जाने लगी।

इनकी रचनाओं ने समाज को प्रेरित किया। जिसके कारण बंगला भाषा में रचित मूल कृतियाँ अपनी सीमाओं से बाहर आकर अन्य भाषाओं में अनुदित होकर पढ़ी जा रही है। उनकी मूल रचना केवल एक भाषा तक सीमित नहीं रही बल्कि इनकी रचनाओं का निकलने वाला प्रकाश दूर तक अंधेरो को चिरता हुआ सामने आने लगा। देश की करीब एक दर्जन भाषाओं में अनुदित उपन्यास, कहानियाँ एवं रचनाएं पढ़ी जाती है। इनकी रचनाओं में शोषित, आदिवासी, दलित, गरीबों, महिलाओं के साथ प्रति दिन होने वाले अन्याय के खिलाफ यथार्थ चित्रण झलकता है। इसी को समझने के बाद भारत के प्रीन्टमीडिया जगत् ने इस साहित्यकार, विचारक द्वारा आदिवासियों के साथ रहकर किये गये अनुभवों को देश के जन मानस तक पहुँचाने का कार्य किया।

देश का फिल्म जगत् भी महाश्वेता देवी की रचनाओं का कायल हो गया। फिल्म जगत् भी स्वयं को रोक न सका उनकी रचनाओं के आधार पर महिलाओं के सशक्त किरदार वाली 'फिल्म हजार चौरासी की माँ' एवं 'रूदाली' फिल्म का निमार्ण किया। इन दोनों ही फिल्मों की नायिकाओं में जया बच्चन व डिंपल कपाडिया भी पुरस्कार प्राप्त कर सम्मानित हुए। महाश्वेता देवी को उनकी सशक्त लेखनी के कारण भारत के सर्वोच्च सम्मान ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

महाश्वेता देवी ने कम उम्र में ही लेखन कार्य शुरू कर दिया था। विभिन्न साहित्यिक पत्रिकाओं एवं स्वयं द्वारा निर्मित लघु कथाओं को लिखना आरम्भ कर दिया था। साधारण पुरूषों, महिलाओं, सामाजिक, राजनीतिक तथा विशेष रूप से आदिवासी समुदाय के जीवन के बारे में लिखती रही है। अपने लेखन कार्य को जीवंत बनाने के लिए एक सामाजिक कार्यकर्त्ता के रूप में उनके साथ कई वर्ष बिताये। उनके जीवन में सुधार के लिए आन्दोलन भी किया। एवं व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष भी कियें। छः दशकों तक जीवंत लेखन शैली एवं सामाजिक क्षेत्र में विशेषकर आदिवासियों के लिए किये गये संघर्ष के कारण बंगाल की इस महान लेखिका महाश्वेता देवी को अंतर्राष्ट्रीय साहित्यकार के रूप में पहचान मिली।

भारतीय महाश्वेता देवी के उपन्यास पर पहली हिंदी फिल्म 1968 में ''संघर्ष'' बनी थी। दिलीप कुमार अभिनीत यह फिल्म उनके मूल बांग्ला उपन्यास ''लयली आसमानेर आयना'' पर आधारित थी।

महाश्वेता देवी की लेखनी में वास्तविकता झलकती है। उन्होंने हर काल, परिस्थितियों में लिखना पढ़ना जारी रखा। महाश्वेता देवी की रचनाएँ अन्याय के विरूद्ध इन्सान के संघर्ष का महत्वपूर्ण दस्तावेज है। उनकी कृतियों को पढ़ना इतिहास में भिन्न –भिन्न कालखण्ड की समाज व्यवस्था और व्यवहार में होने वाली जनभाषा, शोषक व शोषितों के बीच संघर्ष के सभी पहलुओं से वाकिफ होना है। महाश्वेता देवी मानव समाज को वास्तविकता का आइना दिखाना

चाहती है और आदिवासी व दलित वर्ग पर हुए शोषण की दास्ता को अपनी लेखनी के माध्यम से अभिव्यक्त करना चाहती है। इनकी कहानियाँ केवल कहानियाँ नहीं है बल्कि समाज के पीढ़ितों, शोषितों, दलितों व आदिवासियों के संघर्षो की गाथा है। इन संघर्षशील शोषित वर्ग की परेशानियाँ से समाज को अवगत कराना चाहती है।

सामाजिक कार्यकर्त्ता के रूप में महाश्वेता देवी का कार्यक्षेत्र पश्चिम बंगाल, बिहार, और मध्य प्रदेश रहा है। उनके उपन्यासों एवं कहानियों में आदिवासी लोगों के साथ होने वाले शोषण, दमन, शक्तिशाली वर्ग, सत्तावादी, सवर्ण जमींदारों, कर्जदाताओं, साहूकारों, सरकारी अधिकारियों द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों का उल्लेख किया गया है। पश्चिम बंगाल में उनके द्वारा महिला एवं दलितों के लिए भी कार्य किये गये है। महाश्वेता देवी ने कहा है कि मैं हमेशा वास्तविक इतिहास को आम लोगों तक अपनी लेखनी के माध्यम से पहुँचाने का प्रयास करती हूँ। मेरे लेखन का कारण और प्रेरणा समाज में होने वाले शोषण है। एक प्रकार से मेरे लेखन के लिए अंतहीन स्रोत मानवीय पीड़ा हैं।

महाश्वेता देवी द्वारा पश्चिम बंगाल राज्य में राज्य सरकार की औद्योगिक नीतियों के खिलाफ आन्दोलन किया गया। उनके अनुसार राज्य सरकार द्वारा किसानों की उपजाऊ कृषि भूमि का अधिग्रहण कर औद्योगिक घरानों को जमीनें दे दी। उनके नेतृत्व में राज्य का बुद्धिजीवी वर्ग एकत्रित हुआ। जिसमें कलाकारों लेखकों, थियेटर कार्यकर्त्ताओं ने एकजुट होकर राज्य सरकार की इस विवादास्पद नीति के कार्यान्वयन के विरोध आन्दोलन छेड़ दिया। पश्चिम बंगाल के सिंगुर और नंदीग्राम मे यह आन्दोलन राज्य सरकार के खिलाफ किए गए। जिससे की पीड़ित किसानों को न्याय दिलाकर उनकी जीविकोपार्जन का एक मात्र साधन उनकी उपजाऊ भूमि वापस दिलाई जा सके।

महाश्वेता देवी के साथ जनता के इस मन को राष्ट्रीय नेत्री ममता

बेनर्जी ने भी पढ़ा था। सुश्री ममता बेनर्जी की पार्टी तृणमूल कांग्रेस एवं महाश्वेता देवी के विचार किसानों एवं गरीबों के लिए समान थे और इसी कारण सामाजिक कार्यकर्त्ता, आन्दोलन धर्मी, वयोवृद्ध साहित्यकार महाश्वेता देवी ने सिंगूर एवं नन्दीग्राम के किसानों के संघर्ष के लिए आन्दोलन चलाया। इसी आंदोलन को तृणमूल कांग्रेस द्वारा समर्थन भी दिया गया था। बंगला में सत्ता में आते ही सुश्री ममता बेनर्जी ने इस महान रचनाकार्य को बंगला साहित्य अकादमी के चेअर पर्सन के पद पर बैठाने की पहल की। स्वाभिमानी महाश्वेता देवी द्वारा काफी मानमनोव्वल के पश्चात् चेअर पर्सन के पद को स्वीकार किया। बंगला साहित्य के लिए कार्य करते हुए काफी लिखा एक प्रशासनिक व्यवस्था को अपनी राय देती रही।

बांगला साहित्य अकादमी द्वारा राज्य के प्रत्येक साहित्यकार को विद्यासागर पुरस्कार से उनकी लेखन शैली के कारण पुरस्कृत किया जाता है। चूंकि अकादमी एवं पुरस्कार समिति की चेअर पर्सन होने के कारण महाश्वेता देवी ने वर्ष 2010 के विद्यासागर पुरस्कार के लिए साहित्यकार शिवाजी बंद्योपाध्याय का चयन किया था और उन्हे पुरस्कार प्रदान करने के लिए शासकीय नियम अनुसार उनके द्वारा राज्य के मुख्यमंत्री सुश्री ममता बेनर्जी से स्वीकृति हेतु पत्र व्यवहार किया गया था। परन्तु सुश्री ममता बेनर्जी द्वारा इस विषय पर निर्णय नहीं लियें जाने के कारण स्वयं के आत्मसम्मान को ध्यान में रखते हुए 23 मई 2012 को बंगला साहित्य अकादमी के अध्यक्ष पद से लिखित में इस्तीफा शासन को भेजते हुए साहित्य के क्षेत्र के राज्य में सर्वोच्च पद को ठुकरा दिया। अंतराष्ट्रीय स्तर पर अपनी लेखनी से पहचान बनाने वाली इस महान लेखिका ने सदैव ही कर्म को प्रधानता दी। सभी भौतिक सुख सुविधाओं को त्याग कर आदिवासियों के मध्य वर्षो तक रहकर अपने कर्म करती रही परन्तु स्वाभिमान से कभी समझौता नहीं किया। पद की उन्हें कभी लालसा नहीं रही और इन्हीं कारणों से बांग्ला साहित्य अकादमी जैसे महत्वपूर्ण पद को नकार दिया।

2.2 महाश्वेता देवी का कृतित्व

महाश्वेता देवी के लेखन की भाषा बंगला भाषा रही है। और इस भाषा शैली से 20 कहानियाँ व सौ से भी अधिक उपन्यासों को लिखा है। बंगला भाषा विश्व की छठी सबसे बड़ी भाषा है पूरे विश्व में लगभग 23 करोड़ लोगों द्वारा बोली जाती है। यह भाषा का प्रयोग भारत में पश्चिम बंगाल उत्तरपूर्वी प्रान्तों में त्रिपुरा, असम राज्य में प्रयोग की जाती है। बंगलादेश की यह प्रमुख भाषा है। बंगला भाषा भारत एवं बंगलादेश के अलावा विश्व के बहुत से देशों में भी बोली जाती है। भारत की अन्य प्रदेशिक भाषाओं की तरह बंगला भाषा का उदय 1,000 ई. के आस–पास हुआ था। मगध की भाषा से पृथक रूप ग्रहण करने के बाद गीतों एवं वेदों की रचना होने लगी। धीरे–धीरे यह आमजनों के कारण विचारों को अभिव्यक्त करने का माध्यम बन गई। आगे चलकर बंगला भाषा में विविध रचनाओं, काव्य ग्रंथों, दर्शन, धर्म एवं विषय कृतियों का समावेश होता गया। वर्तमान में भारतीय भाषाओं में बंगला भाषा को ऊँचा स्थान प्राप्त है। बंगला लिपि देवनागरी लिपि से कुछ अलग है। किन्तु दोनों में बहुत समानता भी है। हिन्दी की तरह बंगला भाषा में चौदाह स्वर तथा तैंतीस व्यंजन है। बंगला साहित्य ने भी अत्यन्त समृद्धि पाई है।

महाश्वेता देवी ने कम उम्र में बंगला भाषा में लेखन का कार्य शुरू कर दिया था मानों अनके मन मस्तिष्क में माँ सरस्वती बसती हो। विभिन्न साहित्यिक पर्तिकाओं के लिए लघु कथाएं लिखने लगी। इसी लेखन शैली की श्रृंखला को आगे बढ़ाते हुए उनकी प्रथम रचना 'झाँसी की रानी' सन् 1956 में प्रकाशित हुई। 'झाँसी की रानी' यह रचना उनके साहित्य कैरियर की शुरूआत है। महाश्वेता देवी जी करीब बीस से ज्यादा कहानियाँ लिख चुकी है। यह सभी कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी है। इनकी सभी मूल रचनाओं के काल्पनिक पात्र हमारे देश के दीन–हीन समुदाय के बहुत करीब हैं। और उपन्यास 'नाती' सन् 1957 में प्रकाशित होने के बाद स्वयं उन्ही के शब्दों में:

"इसको लिखने के बाद मैं समझ पाई कि मैं कथाकार बनूँगी।"

इन पुस्तकों को महाश्वेता देवी जी ने कलकत्ता में बैठकर नहीं बल्कि सागर, जबलपुर, पूना, इंदौर, ललितपुर के जंगलों, झाँसी, ग्वालियर, कालपी में हुए स्वतंत्रता संग्राम सन् 1857–58 में इतिहास के मंच पर जो कुछ हुआ उन तमाम संघर्षो को अपने लेख में लिखने का प्रयास किया है। उन्होंने अपनी नायिका के अलावा लेखिका ने क्रांति के तमाम अग्रदूतों और यहाँ तक के अंग्रेज अफसरों तक के साथ न्याय करने का प्रयास किया हैं। उन्हें सन् 1979 में साहित्य अकादमी पुरस्कार उपन्यास 'अरण्येर अधिकार' के लिए मिला था। साहित्य के क्षेत्र में सन् 1986 में पद्मश्री पुरस्कार एवं सन् 1996 में भारतज्ञान पीठ पुरस्कार प्रदान किया गया था। जो सर्वोच्च साहित्य पुरस्कार है। सन् 1997 में क्रिसटिव संचार कला के लिए रेमन मैगसेसे पुरस्कार, सन् 2006 में पद्म भूषण से सम्मानित किया गया।

महाश्वेता देवी बताती है कि पहले उनकी मूल विधा कविता थी, अब कहानी और उपन्यास है। 'अरण्येर अधिकार' उपन्यास के माध्यम से मुण्डा आदिवासी वर्ग समाज की मुख्य धारा से जुड़ सका। उन्हें लगने लगा की आदिवासियों के बारे में उनका दायित्व और बढ़ गया है। उनके बारे में ओर भी जानने की कोशिश जारी रखी। आदिवासी इलाकों में जाती और उनके सुख दुख में शरीक होती। उनका लेखन शोषित आदिवासी समाज और उत्पीड़ित दलितों में केन्द्रित हो गया। न्यूनतम मजदूरी, मानवीय गरिमा, सड़क, पेयजल, अस्पताल, स्कूल की सुविधा से वंचित भूमिहीन होने को अभिशप्त इन आदिवासियों और दलितों को आजादी के इतने साल बाद भी न्याय नहीं मिला हैं। यही महाश्वेता देवी के चिंता का कारण बनते गये। उनकी यही चिंताएं उनकी कहानियों और उपन्यासों में नजर आती हैं।

महाश्वेता देवी एक थीम से दूसरी थीम के बीच भटकती नहीं है। उनका विशिष्ट क्षेघ्त्र हैं–दलितों और साधन–हीनों के हृदयहीन शोषण का चित्रण और इसी संदेश को वे बार–बार सहीं जगह पँहुचाना चाहती हैं ताकि अनन्त काल से गरीबी–रेखा के नीचे साँस

लेने वाली विराट मानवता के बारे में लोगों को सचेत कर सके। उन्होंनें समाज में व्याप्त आदिवासियों, दलितों, मजदूरों शोषित–पीड़ित वर्ग, महिलाओं की समस्याओं आदि को समाज के प्रतिबिम्ब में लाकर रख दिया है। उनकी अन्य महत्वपूर्ण कृतियों में अग्निगर्भ, जंगल के दावेदार, 1084 की माँ, माहेश्वरी, ग्राम बांग्ला आदि है। इन्होंने लेखन के चालीस वर्षो में अपनी छोटी–छोटी कहानियों के बीस संग्रह प्रकाशित किये हैं और इनके बांग्ला भाषा में सौ से भी अधिक उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं।

महाश्वेता देवी की रचनाएं देश के गरीब आदिवासी लोगों के खिलाफ सामाजिक भेदभाव, छुआछुत, शोषण पर केन्द्रित हैं। महाश्वेता देवी ने अपनी सशक्त कलम से समाज में हो रहे इस अन्याय के खिलाफ आवाज उठाई और समाज की इस अव्यवस्थित व्यवस्था के खिलाफ अपनी लेखनी के माध्यम से चोट करना चाहती है। ताकि समाज की इस अनीतिगत व्यवस्था में सुधार लाया जा सके। उनकी सभी रचनाएं सामाजिक असमानता के आस–पास ही थी।

बंगाल की इस साहित्यकार, उपन्यासकार, लेखक एवं सामाजिक कार्यकर्त्ता ने देश की एक सौ से भी ज्यादा रचनाएं, जनजातियों एवं देश के लगभग साढ़े आठ करोड़ आदिवासियों को समर्पित कर दी और उनके जीवन की कुरूपता एवं दुख को अपनी रचनाओं में उल्लेखित किया है। महाश्वेता देवी ने जीवन में जनजातीय समुदाय का कल्याण करने एवं उनके उत्थान के लिए अनेक कार्य किये। पश्चिम बंगाल के पुरूलिया जिले में आदिवासी समुदाय उत्थान के लिए बड़े पैमाने पर भी कार्य किये। आदिमजाति कल्याण के क्षेत्र के लम्बे समय तक कार्य करते हुए पश्चिम बंगाल की 'उराव वेलफेयर सोसायटी' और 'भारतीय बांधव लिबरेशन मोर्चा' के साथ जुड़ी और आदिवासी संयुक्त एसोसिएशन की संस्थापक सदस्य बनी। सन् 1980 में आदिवासी पत्रिका बर्तीका का संपादन कार्य शुरू किया।

उन्हीं के शब्दों में "मैं आराम करना चाहती हूँ पर वंचितों, दलितों

एवं आदिवासियों के लिए संघर्ष के लिए और न्याय दिलाने के लिए अपना सारा जीवन लगा दूंगी और मेरी प्रत्येक रचना इस वर्ग के लिए समर्पित रहेगी।"

महाश्वेता देवी की रचनाएं कई भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में अनुवादित की गई है। इसी लेखन कार्य ने उन्हें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाई है। फिल्म 'रूदाली' के निर्देशक कल्पना लाजमी ने सन् 1993 में फिल्म निर्देशित की। महिला उत्पीड़न पर आधारित इस फिल्म में मुख्य किरदार निभाने वाली व अदाकारा डिपल कपाड़िया को राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। दूसरी उपन्यास 'हजार चौरासी की माँ' निर्देशक गोंविद निहलानी के निर्देशन में सन् 1998 में यह फिल्म बनी। इस फिल्म के लिए भी पहली फिल्म की तरह अभिनेत्री जया बच्चन ने भी सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार जीता।

महाश्वेता देवी ने लेखन कार्य के अलावा सशक्त सामाजिक कार्यकर्त्ता की भूमिका अदा करते हुए आदिवासियों के उत्पीड़न, अन्याय एवं भारतीय समाज के सबसे निचले दलित वर्गो की मुक्ति के लिए विरोध प्रदर्शन करते हुए, उन्हें न्याय दिलाने के लिए अभियान चलाया। उन्होंने प्रतिभाशाली और एक प्रख्यात कार्यकर्त्ता के रूप में अंतराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त की।

उनकी प्रमुख रचनाओं में टेरोडैक्टिल, जंगल के दावेदार, 1084 वे की माँ, भटकाव, दौलती, सालगिरह की पुकार पर, श्री श्री गणेश महिमा, अक्लान्त कौरव, अग्निगर्भ, चोट्टिमुंडा और उसका तीर, नील छवि, ग्राम बांग्ला, घहराती घटाएं, मूर्ति, ईंट के ऊपर ईंट, भारत में बंधुआ मजदूर, अमृत संचय, जली थी अग्निशिखा, बनिया बहू, झाँसी की रानी, कृष्ण द्वादशी, भारतवर्ष की अन्य कहानियां, महाश्वेता देवी की श्रेष्ठ कहानियां आदि शामिल है।

महाश्वेता देवी की रचनाओं से स्पष्ट होता है कि आजादी के 68 वर्ष बाद भी आदिवासी वर्ग मूलभूत सुविधाएं पाने में आज भी वंचित

है। यही पीड़ा महाश्वेता देवी की चिंता का कारण बनी। महाश्वेता देवी ने अपना अधिकतम समय आदिवासियों के बीच रहकर व्यतीत किया। अर्थात् जीवन के तीन दशकों का समय उनके द्वारा जल, जंगल और जमीन की लड़ाई के संघर्ष में खर्च कर दिया हो। उन्होंने पश्चिम बंगाल की दो जनजातियों लोधान और शबर पर विशेष कार्य किये है। इन संघर्षो के दौरान पीड़ा के स्वर को महाश्वेता ने बहुत करीब से सुना और महसूस किया है। प्रशासन की इसी कमी के कारण कई राज्यो में आदिवासियों के विशेष

इन्होंने अपना सारा जीवन साहित्य, आदिवासी और भारतीय जनजातीय समाज को समर्पित कर दिया हैं। उनके नौ कहानियों के संग्रह में से आठ कहानियों के केन्द्र में आदिवासी जाति केन्द्रित है ये आदिवासी वर्ग आज भी समाज की मुख्यधारा से कटकर जी रहा है। आदिवासी वर्ग की पीड़ा के वे स्वर उनकी रचनाओं में साफ–साफ सुनाई पड़ते है। सन् 1999 में देशीकोट्यम पुरस्कार से भी उन्हें सम्मानित किया गया है।

बांग्ला से हिन्दी में अनुदित रचनाओं में अक्लांत कौरव, अग्निगर्भ, अमृत संचय, आदिवासी कथा, ईंट के ऊपर ईंट, उन्तीसवीं धारा के आरोपी, उम्रकैद, कृष्ण द्वादशी, ग्राम बांग्ला, घहराती घटाएँ, चोट्टिमुंडा और उसका तीर, जंगल के दावेदार, जकड़न, जली थी अग्निशिखा, झाँसी की रानी, टेरोडैक्टिल, दौलती, बनिया बहू, मर्डरर की माँ, मातृ छवि, मास्टर साब, नीलू के लिए, रिपोर्टर, श्री श्री गणेश महिमा, स्त्री पर्व, स्वाहा और हीरो–एक ब्लू प्रिंट आदि शामिल है।

महाश्वेता देवी की रचनायें केवल साहित्य नहीं है अपितु सामाजिक अव्यवस्था का स्रोत है। उपन्यास एवं कहानियों ने शोषित और पीड़ित वर्ग के साथ होने वाली पीड़ा को एक तरीके से दूर किया है। साहित्य अकादमी से पुरस्कृत 'अरण्येर अधिकार' में बिरसा मुण्डा आदिवासी समुदाय को समाज से मुख्यधारा में जुड़ने की शासकीय स्वीकृति मिली। उपन्यास 'टेरोडेक्टिल' में उन्होंने उल्लेखित किया है

कि आदिवासी लोग आदिवासियों द्वारा उत्पादित शराब और आदिवासी युवतियों के चहेते अहंकारी युवक सीधे आदिवासियों की बस्ती तक पहुँचते है। उन्होंने दर्शाया कि भारत की कुल आबादी का आठ फीसदी वाला आदिवासी वर्ग आज भी नेतृत्व विहीन है। उन्हें जीविकोपार्जन के लिए कड़ा श्रम करना पड़ता है। 'साल गिरह की पुकार' उपन्यास में स्वतन्त्रता संग्राम में अंग्रेजो के विरूद्ध आदिवासी वर्ग ने जो संघर्ष किया उसको दर्ज किया गया है। 'चोट्टि मुण्डा एवं तीर' में महाश्वेता देवी ने शासकीय व्यवस्था से पूछा है कि आदिवासियों के लिए जो कानून बने है पर वह कितने लागू हुए है। कागजी विकास की योजनाएं फाइलो तक सीमित है धरातल पर कुछ भी नजर नहीं आता। आदिवासियों के बारे में दिल्ली की समझ अंग्रेजो जैसी है। महाश्वेता देवी के उपन्यास इतिहास मिथक और वर्तमान राजनैतिक यर्थाथ के पहलुओं को सजोते हुए सामाजिक परिवेश की मानवीय पीढ़ा को स्वर देती है। अग्निगर्भ उपन्यास में खेतिहर मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी न मिलने खाद, बीज, पानी, बिजली के संकट को बताया है। आज भी किसान के संघर्ष की गाथा में अंततः वह आत्महत्या के लिए मजबूर हो रहा है। मजदूर वर्ग को न्यूनतम मजदूरी आन्दोलन के बाद भी नहीं मिल रहीं है। इस असंवेदनशील व्यवस्था को शासन नहीं रोक पा रहा है। महाश्वेता देवी ने कहानियों में भी उपन्यास की तरह ही सामाजिक व्यवस्था में हो रहे अन्याय के खिलाफ आवाज उठाई है। 'श्री श्री गणेश महिमा' में भगवान 'श्री गणेश की महिमा' है तो वहीं बरबर और हिंसक व्यवस्था के खिलाफ, दीवार बनकर खड़े है कहानी के पात्र राका दुसाध, नक्सली जुगलकरण, गांधीवादी अभय महतो और बस्तियों से भागकर आया जनमानस। इस उपन्यास में बिहार के एक गाँव की व्यथा को व्यक्त किया गया है। इस गाँव में आधुनिक युग की आवाज सुनाई नहीं देती है। राजपूतों एवं सवर्ण वर्ग की सियासत चलती है। किसान निचली जाति के लोग मजदूर बंधुआ बन कर कार्यकर रहे है। इनकी महिलाएं सवर्ण वर्ग की रखेल बन कर रह गई है। 'अक्लांत कौरव'

में वामपंथी दलों की सत्ता में आते ही अर्थ बदल जाने को दर्शाया गया हैं जबकि मास्टर साहब में नक्सली आंदोलन के वैचारिक सरोकार और लोगों में आती प्रतिरोध की चेतना को लेखिका ने लिखने का प्रयास किया है। 'हजार चौरासी की मां' नक्सल आंदोलन को माँ की नजर से देखा गया है। उपन्यास नील छवि में नशे एवं अश्लील फिल्में किस तरह से युवा वर्ग को खोखला करती है, यह बताया गया है। महाश्वेता देवी ने उपन्यास की तरह ही अपनी कहानियों में मुख्य धारा से बाहर रखे गये आदिवासी वर्ग की अस्मिता के सवाल को सशक्तता के साथ उठाया हैं, उनकी कई कहानियाँ आदिवासियों की सच्ची संघर्ष गाथाएं है। इन महागाथाओं में समाज की चिंता का बेचौनी के साथ सामने आने का पहला अवसर है।

महाश्वेता देवी समाज के इस ज्वलंत मामलो को सामने लाकर हिन्दी में श्रेष्ठ कहानीकार प्रेमचंद, बंग्ला में तारा शंकर बंद्योपाध्याय एवं मानिक बंद्योपाध्याय से भी आगे निकल गई है। प्रेमचंद और तारा शंकर बंदोपाध्याय ने किसानों को नायक बनाया था। वही मानिक बाबू बंदोपाध्याय के हीरो मछुआरे रहे और इन सभी कहानिकारों, साहित्यकारों, लेखकों से आगे बढ़कर महाश्वेता देवी ने अपनी लेखनी को केवल एक वर्ग तक सीमित न रखते हुए समाज की उन हर बुराईयों तक पहुँचने एवं उन्हें दूर करने का जरिया अपनी लेखनी को बनाया। यह उनकी कहानियों एवं उपन्यासों में स्पष्ट तौर पर नजर आता है।

महाश्वेता देवी रचित साहित्य भाषा को लेखनी नहीं अपितु हथियार के रूप में इस्तेमाल किया करती थी। उनका जीवनकाल ब्रिटिशकाल, स्वतन्त्रता और उत्तर उपनिवेशवादी के पचास वर्षो तक फैला है उनकी लेखनी ने भारतीय साहित्य को नया जीवन दिया है और लेखकों, पत्रकारों और फिल्म निर्माताओं की दो पीढ़ियों को प्रेरित किया है। सामाजिक कार्यकर्त्ता रहते हुए सामाजिक भेदभाव को समाप्त करने का प्रयास आन्दोलन एवं लेखन दोनों ही माध्यम से

किया। भारत की जनजाति लोगों के अधिकार को दिलाने के लिए उनके द्वारा किये गये अथक कार्य उनके जीवन का एक हिस्सा है।

26 मई सन् 1998 को महाश्वेता देवी ने महाराष्ट्र में बारामती क्षेत्र मे पहुँचकर आदिवासी जनजाति, पारधियों के लिए महाराष्ट्र के पारधी समुदाय के ही सामाजिक कार्यकर्त्ता लक्ष्मण गायकवाड़ के साथ मिलकर कार्य किया। पारधी समुदाय को शिक्षित होने के लिए प्रेरित भी किया। ''उन्होने कहा– विशेषकर इस समुदाय की महिलाओं को अवश्य ही शिक्षित किया जाये क्योंकि शिक्षा तीसरे नेत्र की तरह है। शिक्षा से ही न्याय एवं अन्याय को तय कर पायेंगे।''

जानेमाने फिल्म निर्देशक गोविन्द निहलानी ने कहा था। महाश्वेता देवी द्वारा मैगसेसे पुरस्कार की विजेता घोषित होने पर वे काफी उत्साहित हुए थे। फिल्म 'हजार चौरासी की माँ' के सेट पर कहा था कि वह बंगाल की बेहतरीन लेखकों में से एक है। कुछ वर्षो तक महाश्वेता देवी के साथ मैंने काम किया और पढ़ा। मुझे लगता है कि इस माध्यम से बंगाल एवं बिहार के आदिवासी समुदाय कि आवाज सुनने को मिलती है। जहाँ तक महाश्वेता देवी के दृष्टिकोण का सम्बंध है, आदिवासी समुदाय के शोषण कठिनाईयों, सरकारी अव्यवस्था के खिलाफ लिखती है। आदिवासी समुदाय के अस्तित्व के लिए, अधिकारों के लिए लड़ने की अवधारणा उनके अन्दर अंतर्निहित है। वह केवल जनजाति समुदाय की दुर्दशा पर केवल आँसू बहाने संघर्ष के बीच प्रत्यारोपित कर पता लगााने का कार्य करती है। मैंने हमारे देश के किसी भी अन्य लेखन में ऐसी गहराई, ऐसी साहित्यिक शैली विषयों के साथ प्रस्तुत करते हुए नहीं देखा, मैगसेसे पुरस्कार, ज्ञानपीठ पुरस्कार, के बाद उनका अगला पड़ाव नोबेल पुरस्कार के लिए होगा।

सन् 1998 की फरवरी में डी नोटिफाइड जाति के बूधन शवर की मौत हुई थी। पुरूलिया जिला पुलिस प्रशासन ने इस मौत को आत्महत्या करार दिया था। परन्तु महाश्वेता देवी पुलिसियां कार्यवाही

से संतुष्ट नहीं थी उन्होंने पश्चिम बंगाल खेड़िया शवर कल्याण समिति की ओर से 23 फरवरी 1999 में हाईकोर्ट में जनहित याचिका दायर की ,समिति ने यह मुकदमा जीत लिया अर्थात लेखिका ने लेखन कार्य के अलावा अपने सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वाहन करते हुए अन्याय के खिलाफ न्याय प्राप्त किया। अत्याचारों के खिलाफ जारी उनकी जंग केवल लेखन कार्य तक ही सीमित नहीं थी बल्कि धरातल पर वे पीड़ित पक्ष को संगठित कर उन्हें अधिकारों के प्रति जागरूक कर व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष करते हुए जीवन भर नजर आती है।

महाश्वेता देवी कहती है कि मै वेरियर एल्विन स्मारक व्याख्यान देने के लिये बड़ौदा गई। इस कार्यक्रम के आयोजक और प्राणपुरुष, गणेश नारायण दिवी, तीन साल पहले ही एम.एस विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के प्रोफेसर के उच्च पद से इस्तीफा देकर, छोटे उदैपुर जिला के तेजगढ़, राठोवा भील जाति के साथ काम कर रहे थे। उस मौके पर, लक्ष्मण गायकवाड़ भी वहीं मौजूद थे। वे खुद विमुक्त जाति के नौजवान हैं। उनकी आत्मकथा, उचाल्या पर उन्हें साहित्य अकादमी का पुरस्कार भी मिला है। पिछले बीस सालों से, वे महाराष्ट्र के विमुक्त और यायावर जातियों के एक शक्तिशाली और प्रतिवादी संगठन के कर्ता–धर्ता हैं। इन सबका विशद विवरण इसलिये जरूरी है कि अपने भाषण में मैंने पश्चिम बंगाल के लोधा, खेडिया, शवर, ढिकोरा वगैरह विमुक्त जातियों की गंभीर और शोचनीय स्थिति के बारे में अपनी जानकारी और तजुर्बे बयान किये थे। उसी दिन वहां, अखिल भारतीय डी नोटिफाइड ऐंड नौंमैडिक ट्राइब्स राइट्स ऐक्शन ग्रुप यानी डीएनटी–रैग संगठन कायम किया गया। इस संस्था ने अगले ही महीने यानी अप्रैल से ही, अंग्रेजी में बूधन नामक पत्रिका का प्रकाशन शुरू कर दिया। इस काम में उनके साथ दौड़–धूप का जिम्मा, चूंकि मुझे सौंपा गया, इसलिये मैंने फैसला किया कि सन् 1998 में, मैं कुछ नहीं लिखूंगी।

2.3 हिन्दी में अनुदित कहानियों के मूल स्वर

विकास काल और उत्कर्ष काल के अधिकांश कहानीकारों की प्रवृत्ति मौलिक कहानी–रचना की ओर थी, किन्तु इस समय प्रान्तीय व विदेशी कहानियों के हिन्दी रूपान्तर भी किये गए। गत 30 से 35 वर्षो में प्रायः सब प्रान्तीय भाषाओं की प्रमुख कहानियाँ हिन्दी में अनूदित हो चुकी है। गुजराती, मराठी, बंगला, उर्दू, तामिल, तेलगू आदि भारतीय भाषाओं की कहानियों के अतिरिक्त अंग्रेजी, रूसी, फ्रेंच, अमरीकन आदि अनेक विदेशी भाषाओं की कहानियां हिन्दी मे उपलब्ध हैं। उर्दू के प्रसिद्ध लेखक रूवाजा हसन निजामी कृत 'अनुपात' राजगोपालाचार्य कृत 'दुखी दुनियां' कन्हैयालाल मुंशी कृत 'फेन का बुलबुला' 'हत्यारे का ब्याह' 'नागिन की डाह' आदि का कलात्मक रूप विकसित हुआ है उसका ज्ञान अब हिन्दी जगत को भी है। 'कथा सारित्सागर' की संस्कृति कहानियों का अनुवाद अशोक मेहता द्वारा और रूमी की फारसी कहानियों में टाल्सटाय, मोंपासा, मैक्सिम गोर्की स्टीवैन्सन, आस्करवाइल्ड, तुर्गनेव ईवान, चौखोफ एटन, टामसहार्डी, कानन–डायल आदि की बहुत सी कहानियां हिन्दी में अनुवादित हो चुकी हैं।

अनुवाद कार्य का श्रेय हिन्दी के कुछ अनुवादकों तथा प्रकाशक एजेंसियों को है।' हिन्दी पुस्तक एजेंसी, १२६ हरिसन रोड कलकत्ता' ने टाल्सटाय की कहानियों का अनुवाद गल्प सम्राट मुन्शी प्रेमचन्द द्वारा कराया। टाल्सटाय की प्रसिद्ध कहानियों के हिन्दी –अनुवाद इस समय उपलब्ध है। 'हिन्दी ग्रन्थ–रत्नाकर कार्यालय बम्बई' ने बंगला कहानियों के हिन्दी अनुवाद उपस्थित किये हैं। इस एजेंसी को, शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर की प्रायः सब मुख्य कहानियों के हिन्दी अनुवाद उपस्थित करने का श्रेय प्राप्त है। टैगोर की कहानियों का अनुवाद रामचन्द्र वर्मा ने भी 'रवीन्द्रनाथ ठाकुर कुंज' के नाम से किया। 'इण्डियन प्रेस प्रयाग 'ने टैगोर की कहानी 'मास्टर साहब' का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित कराया। रूपनारायण पांडेय ने टैगोर की कहानियों का अनुवाद 'इण्डियन प्रेस प्रयाग' से

'गल्प गुच्छ' (भाग १,२,३,४) के नाम से और 'गंगा ग्रन्थागार लखनऊ' से 'गल्प मंजरी' के नाम से निकाला। प्रभात कुमार मुखर्जी की कहानियों का अनुवाद भी 'इण्डियन प्रेस प्रयाग' से किया। 'पुस्तक सदन बनारस' से 'गोर्की के संस्मरण 'तथा 'मोपांसा की कहानियों' के अनुवाद इलाचन्द्र जोशी द्वारा 'साहित्य मण्डल दिल्ली' से कानन डायल की कहानियों के अनुवाद 'अफीम का अड्डा 'नाम से ऋषभ चरण जैन द्वारा तथा 'पुस्तक मंदिर काशी 'से चोखोफ ऐटन की कहानी का अनुवाद 'कला पुरोहित' के नाम से अमृतलाल नागर द्वारा किया गया। ऐटन की एक दूसरी कहानी 'वाटिका' नाम से 'गंगा ग्रंथागार लखनऊ' द्वारा प्रकाशित हुई। टामस हार्डी और चोखोफ ऐटन की कहानियों का अनुवाद चन्द्रगुप्त विद्यालंकार द्वारा तुर्गनेव ईयवान की कहानियों का अनुवाद 'चरागाह' के नाम से 'विश्व साहित्य ग्रंथमाला 'लाहौर द्वारा तथा मोंपासा की कहानियों का अनुवाद 'आत्माराम एण्ड सन्स देहली' से सन्तोष गार्गी द्वारा उपस्थित हुआ।

अनेक विदेशी कहानियों के अनुवाद 'सरस्वती प्रेस बनारस' से भी निकलते है। अब हिन्दी पाठकों को कुछ और अनुवाद भी उपलब्ध हैं–यथा–स्टीवेन्सन की कहानी 'कसौटी मैक्सिम गोर्की की कहानियाँ ''शेलकस', 'टानियां' गोर्की के संस्मरण, मोंपासा की कहानियाँ 'मानव हृदय की कथाएँ 'भाग १, २ तथा 'इन्दीवर 'आदि। रूपनारायण पांडेय, रामचन्द्र वर्मा, तथा धन्यकुमार जैन हिन्दी के सफल कहानी–अनुवादक माने जाते हैं। शरत् साहित्य तथा रवीन्द्र साहित्य का हिन्दी अनुवाद उपस्थित करने में रामचन्द्र वर्मा और धन्यकुमार जैन दोनों ने ख्याति प्राप्त की हैं। तात्पर्य यह कि विकास तथा उत्कर्ष काल के अन्तर्गत जो कहानियाँ हिन्दी में अनुवाद रूप से आई वे भिन्न–भिन्न मार्गो से होकर आई। अनुवादकों ने, बंगला कहानियों से सीधे, फ्रांसीसी तथा रूसी कहानियों के अंग्रेजी अनुवादों से, अंग्रेजी तथा अमरीकन कहानियों से और भारतीय प्रान्तीय भाषाओं की कहानियों से, समय समय पर हिन्दी अनुवाद उपस्थित किए हैं। इन

अनुवादों से हिन्दी कहानीकारों तथा पाठको ने बहुत लाभ उठाया है। सफल तथा लब्धप्रतिष्ठ कहानीकारों की कहानी–कला के आधार पर हिन्दी कहानीकारों को विषय, कला संस्थान, तथा प्रतिपादन–शैली और भाषा के परिमार्जन तथा विकास की प्रेरणा मिली।

महाश्वेता देवी की रचनाओं में अक्लांत कौरव, अग्निगर्भ, अमृत संचय, आदिवासी कथा, ईंट के ऊपर ईंट, उन्तीसवीं धारा के आरोपी, उम्रकैद, कृष्ण द्वादशी, ग्राम बांग्ला, घहराती घटाएँ, चोट्टिमुंडा और उसका तीर, जंगल के दावेदार, जकड़न, जली थी अग्निशिखा, झाँसी की रानी, टेरोडैक्टिल, दौलती, बनिया बहू, मर्डरर की माँ, मातृ छवि, मास्टर साब, नीलू के लिए, रिपोर्टर, श्री श्री गणेश महिमा, स्त्री पर्व, स्वाहा और हीरो–एक ब्लू प्रिंट आदि बांग्ला से हिन्दी में अनुदित रचनाएं हैं। इन सभी रचनाओं का बांगला से हिन्दी मे अनुवाद हो चुका है। महाश्वेता देवी द्वारा रचित कहानियाँ में मूर्ति, पाँकाल, मोहनपुर की रूप कथा, बाढ़, बीज, द्रौपदी, रांग नंबर, शिकार, शाम सवेरे की मां, बांयेन, बेहुला, मूल अधिकार और भिखारी दुसाध, भारत वर्ष तथा अन्य कहानियों में आखिरी शमानिन, भारतवर्ष, प्रेत छाया, डायन आदि कहानियों का संग्रह हैं।

महाश्वेता देवी अपने लेखन के इन छः दशकों में मानवीय पीढ़ा से उत्पन्न अनुभूति को उपन्यास एवं कहानियों के जरिये समाज के समक्ष प्रस्तुत करती है। एक तरह से उनकी लेखन शैली मानवीय पीढ़ा पर की गई खोज के समान है। फिर वह बाढ़ में बागदी, बांयेन में चण्डी डोम, शाम सवेरे की माँ में पाखमारा, शिकार में ओराव, बीज में गंजू, मूल अधिकारी और दूसाध में दुसाध, बेहुला में माल या ओसा, द्रोपदी में दोपदी संथाल के रूप में पात्र स्वयं पर हुए शोषण को व्यक्त करना चाहते है। ये सभी पात्र ऐसा वर्ग है जिनके दैनिक कार्यो के कारण समाज तिरस्कार के रूप में देखता है, मृत मवेशियों की खाल को निकालना या शमशान में शवों को गाड़ना, आदिवासियों के ये सभी अनुवांशिक कार्य है और इन्ही कार्यो के कारण उन्हें पीढ़ी दर पीढ़ी समाज अदिवासी बनाये रखता है। इनमें से कुछ लोग कुछ

आगे पीछे कर आगे बढ़ जाते है और दिगर कार्य प्राप्त कर लेते है ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम है। महाश्वेता देवी के शब्दों में:

"एक लम्बे अरसे से मेरे भीतर जनजाति समाज के लिए दर्द की जो ज्वाला धधक रही है। वह मेरी चिता के साथ ही शांत होगी।" अर्थात् लेखिका द्वारा तीस वर्षो तक आदिवासियों के मध्य रहकर उनकी दिनचर्या को समझा एवं जाना है। आदिवासियों को होने वाली हर पीड़ा को लेखिका ने आत्मसात् किया है और यही पीड़ा उनकी लेखन सामग्री बनी। इनकी कई कहानियों के केन्द्र में आदिवासी समाज है जो समाज की मुख्यधारा से अलग होकर अपना जीवन यापन कर रहा है। महाश्वेता देवी की कहानियाँ बताती है कि संस्कार व असामर्थ्य आदिवासियों के मन और चरित्र पर भी असर करता है। जिससे आदिवासियों के जीवन शैली पर भी प्रभाव पड़ता है। तो 'शाम सवेरे की माँ' में जटी का रूपान्तरण होता है ठकुरानी के रूप में, रेल दुर्घटना रोकने में बांयेन अवतरित होती है और यही क्रम आगे जाकर प्रतिरोध का रूप ले लेता है। 'द्रोपदी' कहानी में वही प्रतिरोध संगठित आन्दोलन के रूप में सामने आता है। महाश्वेता देवी स्वयं कहती है कि उनकी कहानियों का केन्द्र आदिवासी मनुष्य है। जो समाज की मुख्य धारा से अलग रह कर जीवन जी रहा है।

सन् 1984 में प्रकाशित श्रेष्ठ कहानियों में महाश्वेता देवी ने लिखा है कि साहित्य को केवल भाषा शैली और शिल्प की कसौटी पर रखकर देखने के मापदण्ड गलत है। साहित्य का मूल्यांकन इतिहास के परिप्रेक्ष्य में होना चाहिए। किसी लेखक के लेखन को उसके समय और इतिहास के परिप्रेक्ष्य में रखकर न देखने से उसका वास्तविक मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है। महाश्वेता देवी के शब्दों में "मैं पुराकथा या पौराणिक चरित्र और घटनाओं को वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में फिर से यह बताने के लिए लिखती हूँ कि वास्तव में लोक–कथाओं में अतीत और वर्तमान एक अविच्छिन्न धारा के रूप में प्रवाहित होते हैं। यह अविच्छिन्न धारा भी वायवीय नहीं हैं बल्कि जात–पांत खेल और जंगल पर अधिकार, खेत और सबसे ऊपर सत्ताधारी वर्ग की,

सत्ता के विस्तार तथा उसके कायम रखने की पद्धति को केंद्र में रखकर निम्न वर्ग के मनुष्य के शोषण का क्रमिक इतिहास है।"

मूर्ति

मूर्ति कहानी आजादी के पूर्व प्रेम संबंधों की कहानी है। लेखिका द्वारा इस कहानी में उल्लेखित किया है कि पीढ़ी दर पीढ़ी भुइया राजा की कुल देवी मनसादेवी की पूजा अर्चना करने ब्राम्हण परिवार किया करता था। एवज में भुइया राजा द्वारा कुल देवी के सेवक ब्राम्हण परिवार को जमीन जायजाद, रूपये पैसे ऐसे कई प्रकार से मदद किया करता था। लेखिका द्वारा कहानी में बताया गया की बीसवी सदी के प्रारंभ में ब्राम्हण परिवार के युवा दीनदयाल को भुइया राजा परिवार की बाल विवाह में विधवा हुई कन्या दुलाली से असीम प्रेम हो गया था। दुलाली का विवाह महज चार वर्ष की उम्र में स्वजातिय राज परिवार के बालक के साथ हुआ था। केवल छ वर्ष की उम्र में ही वह विधवा हो गई थी। दोनो ही दीनू और दुलाली के मध्य प्रेम संबंध उजागर होने पर राज परिवार एवं ब्राम्हण परिवारों के सम्बंधों में तुफान सा आ गया। दोनों ही परिवर विधवा लड़की के पुर्नविवाह के खिलाफ थे। लेकिन दीनदयाल दुलाली से विवाह को लेकर अड़ा रहा और घर छोड़ चला जाता है। प्रेम में असफल युवा कलकत्ता जाकर देश की आजादी की संर्घष में शामिल हो जाता है।

सन् 1924 की खडगपुर ट्रेन डकैती में पकडा गया ग्राम छातिम पिछड़ा एवं अराजनैतिक होने के कारण अंग्रेज सरकार ने दो पोस्ट आफिसों को लूटने वाले इस युवा स्वतंत्रता संग्राम सेनानी को पांच दिस्मबर सन् 1924 को गिरफ्तार कर सामान्य अपराधी घोषित कर 30 दिसम्बर सन् 1924 को उसे फांसी पर लटका दिया गया। स्वतंत्रता सेनानी दीनु फांसी च्ढ़ कर हंसते–हंसते शहीद हो गया।

चार वर्ष में पाटक के भुइयाँ के घर शादी। छह वर्ष में विधवा। जहाँ तक की याद आती है, वही दुलाली के कपड़ों की बात भी जुड़ जाती है। गले की चूड़ी, झिलमिल कपड़े, चाँदी के गहने, पैरों की

पायल–ब्रज दुलाली ने कभी नहीं पहने। विधवा लड़की वो भी खूब सूरत दुलाली देखने में भी किसी से कम नहीं। लड़की की माँ दुलाली से हर साल नाना व्रत कराती थीं। हरेक व्रत के बाद आशीष माँगी जातीः

हमारा सुहाग अखंड हो।
स्वामी–पुत्र का संसार अचल हो।
हम सिंदूर के साथ ही मरें।

इसके बदले में दुलाली कहतीः

पिता का संसार बढ़ता रहे,
भाई का संसार अचल रहे, मेरे सिर में जितने केश हों,
उनकी उम्र इतनी रहे।

दुलाली का महज चार वर्ष की उम्र में ही पाटक के जमींदार के घर पर विवाह हुआ था विवाह केदो साल बाद पति की मौत से केवल छः वर्ष की उम्र में ही वह विधवा हो गई। विधवा होने के साथ ही दुलाली के समाज में स्त्री होने का हक भी छीन लिया। सारे सिंगार, साज सामग्री, उसे कभी भी धारण नहीं करने दिया गया।

"वाह, तुझे प्यार करता हूँ तो छू कर देख नहीं सकता क्या?"
दुलाली भयभीत हो उठी। चेहरा गर्म हो उठा। शरीर काँप गया।
फिर बोली,"पाठक के स्कूल में पढ़ते हो, यही सीखते हो?"
"यह क्या स्कूल में सिखाते हैं?"
"तुम जाओ। तुम जाओ यहाँ से अभी।"

दीनदयाल गाँव में हो रही शादी के दौरान सामने दुलाली को पाकर अपने प्यार का इजहार करता है इससे दुलाली घबरा जाती है। इतना सुनते ही दुलाली अवाक रह जाती है उसका पूरा शरीर डर के मारे काँपने लगता है। अपने आपको संभालती कहती है। स्कूल में यह सब सीखते हो। बारह वर्ष की किशोरी को कुछ समझ नहीं आ रहा था फिर वह वहाँ से अपने घर चली जाती है।

इसके अलावा भारतीय भाषाओं के साहित्य में बँगला साहित्य की अपनी अलग ही पहचान है। इस भाषा के अनेक रचनाकारों ने विश्व साहित्य पर अपनी लेखनी के दम से प्रभुत्व स्थापित किया। ऐसे ही रचनाकारों में बाबू शरतचंद्र चटर्जी का नाम अजर–अमर है। इनका संपूर्ण साहित्य विश्व की अनेक भाषाओं में अनुवादित होकर जन–जन में प्रचारित व प्रसारित हुआ। 'देवदास', 'चरित्रहीन', 'श्रीकांत', 'काशीनाथ' जैसी रचनाओं का नाम सामने आते ही शरतचंद्र का संपूर्ण व्यक्तित्व मानो उभरकर आ जाता है। शरतचंद्र ने अपने साहित्य में भारतीय समाज की मान्याताओं व परंपराओं को उनके आदर्शो सहित यथार्थ रूप में चित्रित किया है, साथ ही समाज के सत्य का यथार्थ चित्रण भी किया है। इन्होंने अपने साहित्य में सामाजिक व राजनैतिक समस्याओं के बीच अपनी रोमांटिक प्रवृति की छाप अवश्य छोड़ी है, समाज की कुरीतियों व कुचेष्टाओं पर प्रबल प्रहार किए हैं, साथ ही नारी–मन के अंतर्द्वंद्व व पीड़ा का मार्मिक चित्रण किया है।

पश्चिम बंगाल के लेखिका द्वारा लिखित रचनाओं में मूर्ति और उसके बाद की कहानियाँ में भी सताये हुए लोगों के संघर्ष की दाँस्ता को अपनी कहानियाँ में चित्रित किया है। जिससे लेखिका का बहुत ही गहरा सम्बंध है। कहानियों में चित्रित शोषित वर्ग के संघर्ष का कहीं मार्मिक चित्रण है तो कहीं कठोर। महाश्वेता देवी की कहानियों में सामंती ताकतो के शोषण एवं उत्पीड़न का संघर्ष अनवरत जारी है। पीड़ित वर्ग हमेशा से ही धुतकारा जाता है। उसे इतनी उलाहना दी जाती है कि वह कभी भी सामंती ताकतों के समक्ष खड़ा न हो सके केवल जिंदा लाश बनकर उनकी सेवा करता रहे और शोषण का शिकार होता रहे। सामंती ताकतो की क्रूरता एवं बर्बरता के सामने वह हमेशा ही कमजोर बना रहे है।

महाश्वेता देवी ने आदिम जनजातियों के अतिरिक्त समाज के अन्य ज्वलंत मुद्दो में अपना लेखन कार्य किया है। साथ ही उन्होनें युवा वर्ग की अश्लीलता एवं नशाखोरी जैसे मुद्दों पर भी अपनी लेखनी के माध्यम से संदेश दिया है। महिलाओं की अस्मिता और आत्मरक्षा के

मुद्दों पर भी अपनें विचार लेखनी के माध्यम से व्यक्त करती रही है। महाश्वेता देवी हमेशा से ही अपने लेखनी को लेकर सचेत रही है और उनका लक्ष्य हमेशा ही यह रहा है कि उनकी लेखनी के माध्यम से किसी का अहित न हो।

बाढ़

बाढ़ में भी एक पुराना दृश्य नजर आता है। जिसमें बाढ़ के पानी में जात पात का बंधन बह जाता है। सवर्ण वर्ग के लोग आदिवासियों को भरपेट भोजन कराते है। यह कहानी की रचना लेखक द्वारा समानता की स्थापना करने के लिए की गई है। लेखिका महाश्वेता देवी बाढ़ कहानी में माध्यम से निम्न वर्ग की संवेदनाओं को व्यक्त करते हुए कहती है किः

रूपसी बागदीनी का लड़का चीनिवास भी मनसा का पेड़ खोजने गया। मनसा का पेड़ लाकर पूर्वस्थली गांव के गृहस्थ अपने आंगन में गाड़ देते हैं। पूजा करके उनसे कहते है...." घर दीजिये, खेत में धान दीजिये, गाय के थन में दूध दीजिये, पोखरे में मछलियां दीजिये और बहुओं की गोद में बेटे।

मगर हर घर में मनसर के पेड़ नहीं होते। रसोई–पूजा के दूसरे दिन खाना नहीं बनता।"

मानवीय प्रवृत्ति सदैव से ही अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए देव आराधना से जुड़ जाती है। इसी प्रवृत्ति को प्रमाणित करते हुए लेखिका महाश्वेता देवी द्वारा बाढ़ में पेट की ज्वाला से सम्बंधित कहानी को विस्तार पूर्वक उल्लेखित किया है। पश्चिम बंगाल के इस ग्राम में अपनी ही आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए मनसा नामक वृक्ष की पूजा सम्पूर्ण विधि विधान द्वारा ग्रामीणों द्वारा की जाती है। इसके लिए गृहस्थ्य परिवार घर के आंगन में मनसा का पेड़ लगाकर पूजा अर्चना करते है और अपने आराध्य से मन्नत के रुप में घर, खेत पशु, दूध, नवविवाहित के गोद में पुत्ररत्न व तालाबों में मछलियों की मांग करते हैं। महाश्वेता देवी ने बाढ़ कहानी के माध्यम से निम्न वर्ग की

संवेदनाओं को व्यक्त किया है। बाढ़ कहानी का मुख्य पात्र चीनिवास जो मनसा का पेड़ अपने आंगन में गाड़ने के लिए पेड़ की खोज में घूमता है और पूजा करने के दौरान यह मान्यता है कि जो इस मनसा के पेड़ से जो कुछ भी माँगेगा उसकी यह मनोकामना मनसा का पेड़ अवश्य पूरी करेगा। इसलिए इस प्रथा को मानने वाला वर्ग में कोई अपने लिए घर मांगता है तो कोई गाय के थन में दूध, कोई पोखरे मे मछलियां तो कोई बहुओं की गोद में बेटा। लेकिन यह जरूरी नहीं की हर घर में मनसा के पेड़ हो।

महाश्वेता देवी ने बाढ़ कहानी के माध्यम से निर्धन एवं अनुसूचित जाति वर्ग की व्यथा को व्यक्त करने का जीवंत प्रयास किया है। महाश्वेता देवी का पात्र चीनिवास एक गांव में विधवा अनुसूचित जनजाति की महिला का पुत्र है इस परिवार के तीन सदस्यों में चीनिवास की मां रूपसी व चीनिवास की दादी अर्थात् दो व्यस्क महिलाएं व एक निर्भर बालक है। इस प्रकार से एक छोटे से परिवार से एक भी पुरुष नहीं है। जिसके कारण जीविकोर्पाजन के लिए इस गरीब परिवार को हरपल संघर्ष करना पड़ता है अभाव ग्रस्त जीवन से चीनिवास त्रस्त हो चुका है अपने खान–पान से संबंधित अभिलाषा को पूर्ण करने से उसे सदैव ही उत्सव एवं त्यौहारों का इन्तजार रहता है।

लेखिका ने चीनिवास की इसी अभिलाषा को अनुच्छेदों के माध्यम से व्यक्त करते हुए कहा है किः

"मां, रसोई–पूजा नहीं करोगी?" चीनीवास ने पूछा।

"नहीं मेरे बाप, इस बार हम लोग रसोई–पूजा नहीं करेंगे।"

"क्यों मां?"

"इसी दिन तेरे कटुआ के ताऊ मरे थे न!"

"तुझसे किसने कहा?"

"मैं जानती हूँ।"

लेखिका महाश्वेता देवी ने बाढ़ कहानी के इस अनुच्छेद में त्यौहार

के संदर्भ में बताया कि बंगाल मे समृद्धशाली व निर्धन वर्ग दोनों ही अपने अराध्य को पूजते हुए मनोकामना पूर्ति हेतु आराधना करते है। इसी त्यौहार की आड़ में चीनिवास अपनी भूख की तृष्णा को मिटा पाने का हर संभव प्रयास कर रहा है। अपनी मां से गत वर्ष का हवाला देते हुए, त्यौहार मनाने के लिए विनन्ती कर रहा है। परन्तु इसकी मां अपनी निर्धन परिस्थितियों को छिपाते हुए अपने रिश्तेदार की मौत का संदर्भ में इस वर्ष त्यौहार नहीं मना पाने का बहाना बनाती है।

चीनिवास अपनी भूख रूपी तृष्णा को नियंत्रित नहीं कर पाता है। उसे दादी द्वारा बाढ़ के दौरान सुनाई गई कहानी याद आती है। बाढ़ रूपी संकट के घड़ी में पूरे गाँव में ऊँच और नीच का भाव स्वमेव समाप्त हो जाता है। मानवता की जीत होती है। सवर्ण एवं नीची जाति के लोग एक ही सुरक्षित स्थान पर पनाह लेते है। यहां तक ही भोजन भी एक साथ ग्रहण करते है। सभी ग्रामीणों को संकट की इस घड़ी में गाँव के सभी समृद्धशाली वर्ग के जमींदार एवं साहूकार वर्ग द्वारा विशेष पकवानों के साथ भोजन कराया जाता है।

रांग नंबर

रांग नंबर कहानी में वयोवृद्ध लेखिका महाश्वेता देवी के द्वारा वृद्ध दम्पत्ति की मार्मिक दास्ता है जिसका जीवन के अंतिम पड़ाव का समय अपनी संतान की मंगल होने की कामना को लेकर गुजरता है। स्वयं से सैकड़ो किलोमीटर दूर रहने पर उसके साथ होने वाले किसी भी अनिष्ट की सूचना के भय से उसका हृदय कांप जाता है। उम्र का यह अंतिम पड़ाव अपनी संतान की खुशी को लेकर सदैव प्रफुल्लित रहना चाहता है। वह अपनी संतान ही नही किसी अन्य की भी नकारात्मक सूचना को ग्रहण करने की स्थिति में नहीं होता है।

रांग नंबर के पात्र तीर्थ बाबू व उनकी पत्नी सविता दोनो ही को रात्रि में नींद न आने की बीमारी है। प्रतिदिन नींद की गोली खाकर किसी तरह सोने का प्रयास करते है। लेकिन मध्य रात्रि एक बजे के

लगभग उनके घर की फोन की घंटी का बजना कई रातो की नींद खराब कर देता है। फोन की घंटी बजते ही उनके मन मस्तिष्क में किसी भयानक अनिष्ट की आशंका को लेकर हजारो सवाल उठने लगते है। उनकी पूरी आत्मा काँपने लगती है। इस व्यथा को दोनो एक दूसरें को डरे सहमें हुए व्यक्त करते है। फोन कॉल को रिसीव करते ही दूसरे छोर से अस्पताल से बोल रहा हूँ और सूचित करता है कि आप का मरीज की मृत्यु हो चुकी है। इतना सुनते ही तीर्थ बाबू रांग नंबर कहकर सारा गुस्सा फोन के रिसीवर पर उतार कर पटक देते है। वह अस्पताल से मिली इतनी भयानक व नकारात्मक सूचना को किसी भी परिस्थिति में ग्रहण नहीं करना चाहते। उनका शरीर व आत्मा को ऐसे बर्बस संदेश को स्वीकार करना कतई मंजूर नहीं है।

रात के एक बजे थे तीर्थ बाबू की नींद टूट गई। टेलीफोन की घंटी बज रही थी। आधी रात को फोन बज उठे, तो इतना डर क्यों लगता है?

हलो! सुनिए, अस्पताल से बोल रहा हूं। आप लोगों का मरीज, अभी–अभी चल बसा। हलो...

हमारा मरीज? अस्पताल में हमारा कोई मरीज नहीं हैः

आपका नंबर?

रांग नंबर। फोन छोड़ दें।

वृद्ध पति पत्नी के घर के टेलीफोन की घंटी रात एक बजे बज उठती है। अपने इकलौते पुत्र की याद में आधी अधूरी नींद में देर रात को टेलीफोन की घंटी की आवाज सुनकर वृद्ध दम्पत्ति भयभीत होकर फोन सुनते है, दूसरी ओर से बात करने वाला व्यक्ति अपना परिचय अस्पताल कर्मचारी के रूप में देते हुए कहता है कि आपका मरीज चल बसा, इतना सुनते ही तीर्थ बाबू के रोंगटे खड़े हो जाते है और वह झुंझलाते हुए कहते है कि हमारा कोई भी मरीज अस्पताल में नहीं है। रांग नम्बर कहते हुए फोन रख देते है।

यहाँ लेखिका ने मानवीय संवेदनाओं को अभिव्यक्त किया है। तीर्थ बाबू सब जानते हुए भी स्वीकार नहीं करना चाहते ।

क्यों? इंसान संतान की चाह क्यों करता है? अपने बेटे–बेटियों को क्यों प्यार करता है? इसलिये कि मरने के बाद, वे मुखाग्नि देंगे? गलत जवाब! रांग आंसर! तीर्थ बाबू जब तक जिंदा है, तभी तक वे संतान–कामना करते हैं–संतान पास रहे... करीब रहे।

मेरा दुख–दर्द समझे... उसमें शामिल हो। उनके साथ एकमेक हो जाना सीखे।

गलत उम्मीद! रांग होप!

लेखिका इस कहानी के माध्यम से बुजुर्ग दम्पति के जीने की आखिरी उम्मीद अपनी संतान के सदैव स्वस्थ रहने और उसकी लम्बी उम्र की कामना ही मात्र रहती है। परंतु वृद्ध पिता अपनी संतान की अर्थी को कांधा दे उसे कतई स्वीकार नहीं होता। इसी लिए तीर्थ बाबू अस्पताल से मिलने वाले संदेश को रांग नंबर कहकर अपने जीवन से निकाल फेकने का संकल्प लेते है। वह इस संदेश की सत्यता को परखे बगैर ही यह निर्णय लेते है। जबकि उनकी पत्नी अपने पुत्र दिपांकर की दिल्ली में खोज खबर लेने के लिए लगातार कहती है। लेकिन वे उसे पागल पन की संज्ञा देकर टाल देतें है।

बांयेन

लेखिका महाश्वेता देवी ने बांयेन कहानी के माध्यम से अन्ध विश्वास पर आधारित परंपरागत रूढ़िवादी कुरूतियों को झूठा साबित करने का प्रयास किया उन्होंने इस कहानी के पात्र चण्डी, जो कि शमशान घाट मे लाशों का कफन–दफन का इंतजाम कर रखरखाव करने वाले परिवार की प्रतिनिधि की दिनचर्या को उल्लेखित करते हुए समझाने का प्रयास किया है कि वह कोई बांयेन (डायन) जैसी मिथ्या नहीं है बल्कि उसके ह्रदय में भी ममता और मानवता समाई हुई है चण्डी के पिता की मौत के बाद डोम के कार्य को करते हुए लाषों के बीच रहते हुए निर्भय दृष्टिकोण को बताया है। आगे जाकर उसका

विवाह ऐसे ही एक परिवार के मलिन्दर के साथ होता है। सामाजिक परम्पाओं का पालन करते हुए चण्डी भी माँ बनती हैं। वह अपने नन्हें को गोद मे खिलाते हुए डोम कार्य भी करती। वही उसका पति मलिन्दर डॉक्टरों को लाश दिया करता था। ऐवज में उसे कुछ रूपये मिल जाया करते थे। इन्ही रूपये एवं सरकारी तन्ख्वाह से दोनों ही मिलकर परिवार चलाते थे। चण्डी का पुत्र भागीरथी भी धीरे–धीरे बढ़ने लगा था इसीलिए रिश्तेदार अपने छोटे बच्चे का साथ मलिन्दर के घर पहुँचाती है कुछ दिन बाद उसी रिश्तेदार का पुत्र बीमार हो जाता है। चण्डी उसका इलाज कराने के लिए गाँव के वैद्य के पास जाती है कुछ समय बाद उस बच्चे की मौत हो जाती है। और उसकी मौत का आरोप चण्डी पर लगता है।

आस पड़ोस के लोग उसे बांयेन के नाम से अलंकृत करते है। परन्तु उसका पति सुन्दर एवं सशील बहु को बांयेन मानने से इंकार करता है। एक दिन अचानक उनका पड़ोसी पहुँचकर शोर मचाता हैं। शराब के नशे में डूबा मलिंदर उठता है और पूछता है क्या हो गया? उस पर वह पड़ोसी कहता है कि तुम्हारी पत्नी डायन बन चुकी है और बरगद के पेंड के नीचे बैठकर ढोल बजा रही है। स्थल पर पहुँचकर मलिन्दर अपनी पत्नी का उस भयावह रूप में देखकर मान लेता है कि वाकई वह बांयेन बन गई है। ग्रामीण परम्परा के अनुसार चण्डी को गांव के बाहर निकाल कर रहने के लिए एक झोपड़ी दे दी जाती है। और ऐसा अन्धविश्वास का अंधेरा पूरे गाँव को घेर लेता है। इस डायन की नजर से बच कर रहना नहीं तो गांव के हर बच्चे को मार डालेगी। ग्रामीण किवदन्ती रही है कि जिन मासूम पर डायन की नजर पढ़ेगी उस बच्चे का खून सूख जायेगा।

बांयेन में मलिन्दर अपनी जाति से ऊपर उठ जाता है। उसी प्रकार अंधविश्वास को सत्य को मानते हुए मलिन्दर अपने पुत्र भागीरथी को उसकी माँ से अलग कर देता है। दूसरा विवाह कर इस रूढ़िवादी अन्धविश्वास के कारण अपनी पत्नी को माँ कहलाने का हक तक छीन लेता है। केवल एक अनहोनी घटना के बलबूते महिला

को समाज से बहिष्कृत किये जोने की इस कुप्रथा को अनिभूति करते हुए लेखिका ने महिला की व्यथा को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया। समय गुजरता है भागीरथ को पिता उसकी माँ से परिचित कराता है। अपने जीवन के प्रति बच्चा मौत से भयभीत होकर अपने पिता से कहता है (समाज में फैलाई गई बुराईयों से) और बांयेन के व्यक्तित्व के प्रति लेकर गड़ी गई कहानियों से भयभीत भागीरथ अपने पिता से कहता है कि बांयेन भी किसी की माँ या पति कैसे हो सकती है जिसकी नजर भर से बच्चे की मौत हो जाती है। तब पिता ने बताया कि यह बांयेन बनने के बहुत पहले की बात हैं तब भागीरथ पिता से जानने का प्रयास करता है कि मेरी माँ बांयेन कैसे बनी। मनुष्य द्वारा बनाई गई इस अंधविश्वास नुमा बुराई को भगवान का हवाला देकर उससे जोड़ देते है। समय गुजरने के साथ भागीरथ गाँव से दूर बनी माँ की झोपड़ी के पास मिलने जाता है। कुछ दूर रेलवे लाइन पर ट्रेन लूटने के लिए पटरी पर बांस के ढ़ेर व पहाड़ बना रहे लोग चण्डी को सताते है। इसलिए वह रेल को रोकने के लिए पटरी पर दौड़ने लगती है। ट्रेन के न रूकने पर वह स्वयं ही ट्रेन के सामने कूदकर जान देकर ट्रेन को दुर्घटना होने से बचा लेती है।

लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से बताने का प्रयास किया है कि यह मानवीय समाज अंधविश्वास रूपी परम्पराओं के माध्यम से किसी भी एक पारिवारिक महिला का जीवन उजाड़ देती है। एक पालन हार महिला को आरोपित कर समाज में उसे यमराज की संज्ञा दे दी जाती है। इसके बावजूद उसके हृदय में छिपी ममता को विलुप्त नहीं कर पाते समाज द्वारा दी गई पीड़ा, प्रताड़ना से ऊपर उठकर एक माँ निर्दोष लोगों की जान स्वयं के प्राण त्याग कर बचा लेती है। अंत में इस महान कार्य के लिए शासन द्वारा उन्हें मृत्यु उपरान्त सम्मानित किया जाता है। अर्थात् लेखिका ने समाज द्वारा स्थापित अंधविश्वास परम्पराओं को झूठा प्रमाणित किया है।

बांयेन कहानी में समाज से बहिष्कृत बड़ी रेल दुर्घटना रोककर स्वयं के प्राण की आहुति देती है और जो रेल में सवार बच्चों

महिलाओं पुरूषों बड़े बुजुर्गो के प्राण को बचाती है और वही समुदाय जिसने उस महिला को प्राण लेने वाली का दर्जा लेकर समाज से बाहर निकाल दिया था। इस हादसे के बाद स्वयं को ठगा सा महसूस करता है।

कहानी संग्रह भारतवर्ष की अन्य कहानियों में घुमंतु आदिवासी जनजातियों का संघर्ष है। आखिरी शमानिन में उड़ीसा का पहाड़ी जंगलों में रहने वाले शबरा उपजाति के आदिवासियों मजदूरों के ठेकेदार ने सुखों का स्वप्न दिखाया दुरस्त अंचलों में मजदूरी करने के लिए ले जाते है और पूरे जीवन में लगातार पलायन करने के कारण ये आदिवासी मजदूर अपनी किसी एक स्थान को कर्म स्थली नहीं बना पाते है। जीवन भर उन्हें भटकाव का सामना करना पड़ता है। वे स्थिरता से कोसों दूर रहते है। महाश्वेता देवी कहती हैः

सन् 1998 के मार्च महीने में, जब मैं छोटा उदैपुर जिला के राठोवा भीलों की बस्ती, तेजगढ़ पहुंची, तो वहां की दीवारों पर पिठोरो या बोबो पिठोरो को देखकर, मुझे पहली बार धक्का लगा। यहां भी वहीं गतिमान् जीवन। घोड़े की पीठ पर सवार मर्द–औरत। यह पिठोरो दीवार–चित्र और धर्म समानार्थक है। मुझे लगा, उत्तालन न सही, पिठोरो तो मौजूद है। मैं वहां एक चट्टान पर धम्म से बैठ गई। अपनी ही निगाह में, खुद। बेहद अपरिचित लगी। टेरोडैक्टिल, पूरण सहाय और पिरथा मैंने जाने किस जमाने में लिखा था। उसमें गुफा–चित्र के बारे में यूं ही, अंदाजे से लिख मारा था। उस रचना के हजारों–हजारों साल पहले, आदिवासी लोग गुफा–चित्र आंकते रहे थे? अब इसकी व्याख्या मैं किससे पूछूं? तो क्या मैं इन लोगों को इतनी गहराई से महसूस करने लगी हूं? इन्हीं सब तथ्यों के संदर्भ में, आखिरी शमानिन कहानी के बारे में सोचना–समझना होगा।

शनिचरी

शनिचरी कहानी में भी यह दर्शाया गया है कि कलकत्ता के कुछ क्षेंत्रों में ईंट भट्टों में काम करने के लिए ईंट भट्टों के मालिकों के द्वारा

चालबाज महिलाओं को गरीब वर्ग की लड़कियों को झांसा दे कर, उन्हें रेजा कार्य कराये जाने के लिए उन्हे लाने के लिए गाँव–गाँव भेजा जाता है। गाँव में जिन घरों में दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति न कर सकने वाले परिवारों की जवान लड़कियों को अपने जाल में फसाया जाता है। ये वे लड़कियाँ होती है। जिनके परिजन उन्हें तन ढ़कने तक के लिए कपड़े भी उपलब्ध नहीं करा पाते है। न ढ़कने की मजबूरी का फायदा उठाकर ईंट भट्टो से भेजी गई दलाल महिलायें इन गरीबों तक पहुंचती है। उनके परिजनों को चन्द रुपये देकर अपने साथ कलकत्ता ले जाने का प्रयास करती है। इन गरीब पालको को बेटियों के मजदूरी करने के एवज में मिलने वाले रुपयों का सपना दिखाती है। रोटी और कपड़ा दोनों ही मिलने का हवाला देकर ईंट भट्टों में होने वाले शोषण से अनजान युवतियों लड़कियों को सौंपकर हजारों रुपये की आमदनी गोहुमन बीवी जैसी औरते प्राप्त करती है। एक तरह से ये महिलाएं नव युवतियों की इज्जत का सौदा कर रुपये प्राप्त कर लाभ उठाती है। गोहुमन बीवी गान के इस पंक्तियों के माध्यम से लड़कियों को सम्बोधित करती हुई कहती है।

ऐ लड़की ! चल चल चल,
कलकत्ता जायेंगे, चल चल,
रेलगाड़ी पे चढ़कर चल चल।

मूर्ति

छातिम ग्राम के शहीद दीनदयान की काँसे की मूर्ति की स्थापना करने का संकल्प कलकत्ता महाधिकरण ने किया था और मूर्ति –स्थापना काफी धूम–धड़ाके, बाजे–गाजे के साथ होगी, यह बात समाचारपत्रों में भी छपी। लेकिन छातिम ग्राम के लोग स्वभाववश ही यह नहीं जान पाये। ग्राम तो 'फॉर फ्रॉम मैड्डिंग क्राउड' है और सरकारी जंगल–महल के प्रांगण में है। लैटेराइट मिट्टी के द्वारा ज्यादा लोगों का भरण–पोषण नहीं हो सकता। छातिम और उसके साथ के सात गाँवों की जनसंख्या तीन हजार से भी कम है। आदिम जातियाँ और उपजातियाँ रहती हैं यहाँ–संथाल, और मुडा वगैरह।

अनुसूचित जातियाँ भी हैं–भुइयाँ, हाड़ि, मोची, गूँड़ी, बाउरी। यही हैं यहाँ की जन–संख्या। इन आठों गाँवों में साक्षर लोग तीस से ज़्यादा नहीं होगें। जो साक्षर हैं, वे भी निरक्षरों की तरह पेट के धंधे में व्यस्त हैं। समाचार–पत्र न कोई। रखता है, न कोई पढ़ता है। निकटस्थ थाना ग्यारह मील दूर है। महकमा–षहर सात मील दूर। वहीं ब्लॉक डेवेलपमेंट ऑफिस, पोस्ट–आफिस, जंगल– ऑफिस, स्वॉयल वर्कर ट्रेनिंग ऑफिस स्कूल–सब–इंसपेक्टर का ऑफिस, हेल्थ सेंटर, धान –गोला या कोठारी और कृषि कार्यो के लिए स्थापित केन्द्र हैं। यानी पूरा उद्देश्पूर्ण पेराफरनेलिया है।

खोज के दौरान यह उजागर हुआ है कि दीनदयाल ठाकुर ने सन् 1924 में माह अगस्त से दिसम्बर के बीच दो पोस्ट ऑफिस को लूटा और ट्रेजरी गार्ड की बंदूक भी छीन ली और इस घटना के दौरान 5 दिसम्बर सन् 1924 को पकड़ा गया। पश्चिम बंगाल में चल रहे टेररिस्ट आंदोलन के कारण दोनों की घटना एक दुसरे से न जुड़े इस लिए अंग्रेज सरकार द्वारा इस स्वतंत्रता संग्राम सेनानी को बिना सुने ही फाँसी पर लटका दिया गया।

मृत्यु के पूर्व दीनदयाल द्वारा अपनी प्रेमिका दुलाली को लिखी गई चिट्ठी के अनुसार "यदि जानता, यदि मुझमें साहस होता तो तुझे ले आता। तुम भी तो डर गयीं, दुलाली! सरी बातें अस्वीकार कर दीं। आज मैं दूसरी दुनिया के पथ पर जा रहा हूँ। तुम्हें अगर साथ ले जा सकता तो ले जाता। किसने कहा कि विधवा होने पर जिंदगी खत्म हो जाती है? कौन कहता है कि भुइयाँ–ठाकुर का विवाह नहीं हो सकता? दुलाली, दुलाली ! तुम्हें एक बार देख लेता तो कोई खेद नहीं रहता। परसों फाँसी है। अपील नहीं की, करूँगा भी नहीं। लेकिन उस लोक में भी तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा, जब तक हम–तुम नहीं मिलते।"

महाश्वेता देवी मूर्ति कहानी के माध्यम से प्रेमी युगल की व्यथा को व्यक्त करते हुए लिखती हैः

उसके बाद लिखा है, "तुमने और मैंने तो कुछ नहीं माँगा, सिर्फ एक–दूसरे के सिवाये वह भी इस हृदयहीन समाज ने नहीं दिया। मैं पुकारता हूँ, दुलाली! दुलाली! सुन रही हो?"

प्रेतछाया

प्रेतछाया कहानी के माध्यम से लेखिका ने सुन्दर काया का प्रतिक विजय के जीवन से जुड़े हर पहलू का वर्णन करते हुए कहा है कि:

कुल पन्द्रह साल की उम्र में विजय का कद साढ़े पांच फीट लम्बा! शक्ल सूरत, हर तरह से तारीफ करने लायक। जब इंस्पपेक्टर साहब तशरीफ लाते तो उसे ही कविता–पाठ के लिये आगे कर दिया जाता। इनाम बांटते वक्त मजिस्ट्रेट–पत्नी उसी से बातें करती रहती। 'विसर्जन' नाटक में उसे ही राजा का पार्ट दिया जाता था।

सुन्दर काया का प्रतीक पंद्राह वर्षीय किशोर विजय को उसके मेघावी छात्र होने के कारण स्कूल का हर शिक्षक व प्राचार्य पसन्द करते थे। शक्ल, सूरत और गोरे रंग के कारण उसकी सुंदरता हर किसी को भांती थी। समाज का जब भी कोई प्रतिष्ठित व्यक्ति स्कूल में निरीक्षण के लिए आता तो स्कूल का प्रतिनिधित्व करने के लिए विजय को आगे कर दिया जाता था। उसके कविता–पाठ को सुनकर स्कूल में आने वाला प्रत्येक मेहमान उसकी सुन्दरता और कविता–पाठ के गुण से मोहित हो जाता था। स्कूल में होने वाले नाटक की मुख्य भूमिका का पात्र विजय को ही बनाया जाता था। विजय अपने साढ़े छः फीट कद के समाज उसकी धारणा भी काफी ऊँची हो गई थी। सुन्दर काया के कारण वाह काफी लोकप्रिय हो चुका था जिसके कारण उसके मन में अहं भी आ गया था और वह लोगों को उपेक्षित भी करने लगा था। अपने छात्र में बढ़ते घमण्ड और उपेक्षा के भाव को जानने के बाद विजय के शिक्षक भी इन अवगुणों को लेकर उससे नाराज होने लगे थे। जो लोग विजय के पिता एवं उसके परिवार से परिचित थे वे लोग उसके आगामी जीवन को लेकर भांपते हुए दुखी हो रहे थे। क्योंकि अपनी सुंदर काया एवं लोगों के बीच विशेष

पहचान बना चुका विजय अपने पिता के दुख दर्द को नहीं समझ पा रहा था।

बीज

लेखिका ने बीज कहानी में दक्षिणपूर्व बिहार के उन तमाम गाँव में तामाडी, पुरूडिहा, कुरुडा–हिसाडी–चामा आदि गाँव में मेहनत कर मजदूरों और उनसे बंदूक की नोक पर काम लेने वाले बाहुबली जमींदारों के मध्य होने वाले संघर्ष की गाथा को विस्तारपूर्वक उल्लेखित किया है।

उन्हीं दिनों दूलन गंजू को वह जमीन मिली थी। जमीन वह लेना नहीं चाहता था, मगर लछमन सिंह का प्रताप बहुत ज्यादा था। उन्होंने आंखें लाल करके कहा था,"इसी को कहते है छोटी जात। आज मेरा मन अच्छा है, तो दे रहा हूं। मगर कल की बात सोचो, क्या कल भी मेरा मन ऐसा ही रहेगा?"

जमींदार लछमन सिंह अपनी पथरीलि बंजर जमीन नौकर दुलन को निशुल्क दे देता है। बंजर जमीन को लेने के लिए दुलन गंजू हिचकिचा रहा था। उसे इंकार करता हुआ देख लछमन सिंह क्रोधित हो जाता है। कहता है छोटी जात का आदमी कभी नहीं सुधरेगा आज मैं अपनी इच्छा से यह जमींन तुझे दान में दे रहा हूँ। हो सकता है कल यह जमींन देने का मेरा मन न करे। इसलिए ले जा यह जमीन। यह जमीन पथरीलि व बंजर है तो क्या हुआ बरसात का पानी आयेगा और जो फसल लगायेगा, उसकी पैदावार होगी। मजदूरों को कठिन परिश्रम करने के बाद भी जमींदारों के द्वारा आधी–दिहाड़ी तक नहीं दी जाती थी। अपना हक मांगने पर उन मजदूरों से जमींदारों के बंदूको की बट, जमींदार के पाले हुए गुंडो की लात घूसों का सामना करना पड़ता था। यदि इन मेहनत कश मजदूरी के बीच किसी एक द्वारा दमदारों के साथ सभी मजदूरों की आवाज को बुलंद किये जाने पर उसका मौत से सामना करा दिया जाता था।

लछमन सिंह लिखा–पढ़ी में बड़े चतुर हैं। वकील रखते हैं। वकील न दूलन की ओर से अर्जी लिख दी। उसमें हल, बीज, बैल आदि के लिए सरकारी ऋण देने के लिए कैथी लिपि में एक जबरदस्त अर्जी लिखी।

बंजर जमीन पाकर दुलन गंजू परेशान था। उस जमीन से कभी भी फसल की पैदावार नहीं ली जा सकती थी और लक्ष्मण सिंह ने भी फसल न उगाने का आदेश दिया था। उसपर जमीन के आधार पर सरकारी सहायता मिलने की आस पर जमींदार लछमन सिंह की सहायता से दुलन गंजू बड़ी ही चतुराई से बी.डी.ओ के नाम बीज, खाद एवं हल के लिए आवेदन करवाता है। बी.डी.ओ लछमन सिंह के गाँव तामाड़ी से काफी दूर तोहरी ग्राम में रहते थे। मगर एस.डी. ओ ने बाहुबली लछमन सिंह से विवाद न करने की बी.डी.ओ को सलाह दी थी। इसलिए बी.डी.ओ दुलन गंजू के आवेदन को स्वीकार कर लेता है।

दुलन गंजू जमींदार को मिली मुफ्त की जमींन के लिए सरकार से प्रतिवर्ष सहायता प्राप्त करता है। लछमन सिंह के प्रभाव के कारण सरकारी अफसर बी.डी.ओ दुलन को जमीन में पैदावार के लिए बीज, खाद, हल के लिए पैसा देता है। दुलन खाद को बाजार में बेच देता है और बीज का बोरा अपने घर ले आता है। इसी बीज का अनाज बनाकर उसका पूरा परिवार भोजन करता है। अर्थात् अनाज का उपयोग सेवन के लिए करता है।

बीज कहानी में लेखिका द्वारा करन, अशर्फी, मोहर, बुलाकी, महुवन, पारस और धतुआ जैसे पात्रों ने इन मजदूरो की परिश्रमिक के लिए संघर्ष किया था। जमींदारो में लक्ष्मण सिंह, मक्खन सिंह, दयतारी सिंह, राम लगन सिंह जैसे बाहुबली शामिल थे। जिनके लिए सरकार उनकी रखेल के समान थी। इतनी हत्यायें करने के बाद भी सबूतों के अभाव में वे आसानी से छूटकर बाहर आ जाते थे। ताकि मजदूरों पर शोषण दमन अत्याचार एवं यातनाओं का सिलसिला जारी

रख सके। लेखिका ने इन सच्ची घटनाओं को अपनी इस कहानी के माध्यम से बड़ी ही मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया है। लेखिका इन अनुच्छेद के माध्यम से कहती है किः

लछमन सिंह और दैतारी सिंह बंदूक की नोक पर कभी थोड़ा भात देकर, तो कभी चार आने पैसे देकर फसलें कटवाते हैं। इसे लेकर वहां काफी टेंशन भी था, क्योंकि .....। सब कुछ जान कर भी हंगामा होने पर एस.डी.ओ पुलिस लेकर आये और किसानों केा ही पकड़ ले गये, लछमन सिंह ओर दैतारी को कुछ नहीं कहा।

महाश्वेता देवी इस कहानी के माध्यम से कहती है कि गाँव मे प्रभावशाली जमींदार लछमन सिंह और दैतारी सिंह बंदूक की नोक पर निचली जाति के लोगों से जबरदस्ती मजदूरी कराकर फसल की पैदावार करने से लेकर कांटने तक के सारे कार्य करवाते थे। एवज में बहुत कम मात्रा में अनाज के रूप में चावल अथवा चाराना प्रतिदिन के हिसाब से मजदूरी दिया करते थे। जबकि पड़ोस गाँव में इसी कार्य के लिए खेतिहर मजदूरो में गंजू, दुसाध, आदि जाति के मजदूरो को आठ आना रोजी मिलती थी। इसी कारण ग्रामवासी जमींदार लछमन सिंह एवं दैतारी सिंह के सामने मजदूरी पच्चीस पैसे बढ़ाकर पचास पैसे करने की मांग कर रहे थे। नहीं मानने पर हंगामा हुआ और इस हंगामे के लिए जमींदार दोषी होने की बात सरकारी अफसर एस.डी.ओ जानता था। इसके बाद बेकसूर मजदूरो को ही पकड़ा गया। मजदूरी के साथ अन्याय करने वाले जमींदार लछमन सिंह एवं दैतारी सिंह के खिलाफ सरकारी अफसर ने कोई कार्यवाही नहीं की।

छुक–छुक, छुक–छुक आ गेल गाड़ी.....

लेखिका ने छुक–छुक, छुक–छुक आ गेल गाड़ी..... कहानी के माध्यम से महाराष्ट्र के नागौर जिले के सम्पन्न कोल्हाटी समाज की सामाजिक बुराई को उठाते हुए उल्लेखित किया है कि इस समाज की बड़ी बेटी का भविष्य युगो पहले से तय होता आया है। उसका रूप सौन्दर्यवान एवं गले में माँ सरस्वती का वास हो तो उसका पूरा

परिवार इस बेटी की कमाई से दौलत मंद बन जाता है। सारी सुख सुविधाएं वही बेटी की कमाई से आसानी से प्राप्त कर ली जाती है। जमीन जायदाद धन दौलत ऊँचे–ऊँचे मकान सब कुछ आसानी से बन जाता है। इस परिवार के बेटो की शादियाँ भी बेटी की आमदनी से की जाती है। पूरा परिवार पूर्णतः इसी बेटी पर निर्भर करता है। लड़कियों को बेचकर मिलने वाली आय से अर्थात् नगर का धनाड़य व्यक्ति अपनी हवस को मिटाने के लिए लड़कियों को ऊँचे दाम में खरीदता है।

कोल्हाटी समाज में परिवार की सबसे बड़ी लड़की को किशोरावस्था में लीलाम करने के पहले छेरा उतराई अर्थात् चूड़ी पहनाना की रस्म बड़े ही धूम धाम से बनाई जाती है। लड़की के दोनों ही हाथों में कांच और प्लास्टिक की चूड़िया आकर्षण के लिए पहनाई जाती है। शादी के पहले किशोरावस्था में छाबु बहुत ही सुन्दर प्रतीत होती थी। चुड़ी की आवाज खनखनाते हुए बाजारों की सैर करती थी। वे अपने ही मस्ती में मस्त रहती थी। उसके यौवन सौन्दर्य को देखते हुए उसकी खरीदी के लिए अब तक कोई हिम्मत नहीं जुटा रहा था। छेरा की रस्म अदा करने के बाद कोल्हाटी समाज ऐसी किशोरी को मंदा हिरामन के नाम से उपाधि देकर अलंकृत करता था।

भारत वर्ष

आजादी के पचास वर्षो बाद भी पलामू जिले के अटाई गाँव में जिसके आबादी तीन सौ के करीब थी वह पहुंच मार्ग तक नहीं थी। पहाड़ चढ़कर रहवासी शाम होने के पहले ही पहुंचने की कोशिश सदा ही करते थे। पहाड़ों से होकर जाने वाली पगड़ंडी, जंगली झाड़ियाँ, बड़ी घासों से होकर गुजरती थी। ऊँच नीच वाले इस पथरीले रास्ते पर पैर में मोच आना उसका मुड़ जाना आम बात थी। पलामू जिले के इस गाँव की तस्वीर सालों तक नहीं बदली। यह जगह आज भी आदिम रूप में विद्यमान है। इस गाँव में आदिवासियों की प्रजातियों में मुंडा, औराव और खरवार के टोले है।

अटाई झील के पूर्वी तट पर किसी ने घर नहीं बनाया। सरकार की तहत वन विभाग दफ्तर भी इस अटाई गाँव को भूल गया। यह भी एक अलौकिक घटना है कि इतना अथाह पानी और एक अदद जनपद में बसे मुट्ठी भर लोगों के अस्तित्व को किसी ने भी याद नहीं रखा।

इस अटाई गाँव में रहवासियों ने सुविधाओं के अभाव में कोई भी घर नहीं बनाया था। वन विभाग की हद में आने वाली अटाई गाँव को वन विभाग ने भी भुला दिया था। समूचे पानी से लबा लब इस गाँव के लोगों के अस्तित्व को ही सरकारी तन्त्र भुला दिया था। इस गाँव में बीसवी सदी की झलक तक दिखलाई नहीं पड़ती थी। सड़क, कुंआ, प्राथमिक शाला, स्वास्थ्य केन्द्र कुछ भी नहीं था।

दौपदी कहानी में भी नाटिका दोपदी मेझेन को पुलिस प्रशासन विश्वासघाती मजदूरों के साथ एक षड़यन्त्र के जरिये जंगल से पकड़ कर सेना पति के पास ले जाते है। दोपदी अपने दोनों घायल स्तनों से सेना अध्यक्ष को धक्का देती है और पहली बार सेनापति को बिना हथियार के लक्ष्य के सामने खड़ा होने में डर लगता है। द्रौपदी कहानी में लेखिका ने जंगल और प्रशासन के संघर्ष को उल्लेखित किया है। कहानी बीज में पेट की ज्वाला को शांत करने के लिए समझा गया है।

उसी प्रकार से शिकार कहानी का मूल आधार भी जंगल है। द्रौपदी और शिकार एक ही कहानी के दो पहलू है। द्रौपदी कहानी में जहाँ सेनानायक पीछा करता है उसी तरह कहानी स्वीकार में महिला पात्र मेरी उरांव के रास्ते में तहसीलदार हाथ पकड़ लेता है मेरी को तहसीलदार का यह व्यवहार अमानवीय लगता है। मेरी ने बुद्धिमानी का परिचय देते हुए उससे अपना पीछा छुटाने के लिए होली के दिन गड्ढें के पास भेट कर तारीख व स्थल तय करती है और होली के लिए तहसीलदार के पहुँचते ही उस संघर्षशील मेरी ने उसे गड्ढें में धकेल दिया। इस प्रकार से मेरी ने सबसे बड़े मानव रूप

जानवर का शिकार कर अपने हृदय में समाये डर को समाप्त किया। द्रौपदी और बीज कहानियों में आदिवासी महिलाओं में प्रतिरोध की चेतना जागृत होती दिखाई पड़ती है जो आदिवासी अवरण में पहुँच चुके है। द्रौपदी में संगठित प्रतिरोध की भावना को व्यक्त किया गया है। 'शाम सवेरे की माँ' में जटी ने परिवारिक या अनुवांशिक जीविका के बजाय दूसरा कार्य करने के बाद में वे अपने संस्कारों के ऊपर नहीं उठ पाये।

"शाम सवेरे की मां' "कहानी ठीक इसी तरह एक मृत्यु के सहारे खड़ी है। इस मृत्यु के पास आकर, इस मृत्यु के बीच से होकर ही जटेश्वरी ठकुरानी अपने अभौतिक अस्तित्व से मुक्त होकर स्वाभाविक मानवीय अस्तित्व में वापस आती है। जिस पुत्र साधन को जटेश्वरी ने एक बार मना किया था, "मां कह कर मत पुकारो, मेरे बाप।" और जिसके लिए वह, "सांझ को और सवेरे मां है और दिन मे ठकुरानी है", उसी साधन को उसकी, "सांझ –सवेरे की मां" मृत्यु के आगमन के पूर्व दिन में ही मां कह कर पुकारने की अनुमति देती है। देवीत्व से जटी की मुक्ति का क्रमिक इतिहास वस्तुतः मां कह कर पुकारने के इस अनुमति दान से ही शुरू होता हैं, इसके बाद अनादि डॉक्टर देखता है। "जटी ठकुरानी की आंखों में एक आश्चर्यजनक अतीन्द्रिय भाव था ..... आसन्न मृत्यु के अलावा और कोई चीज आदमी की आंखों को इतना सुंदर नहीं बना सकती। "मानवीय रुप में उसके प्रत्यावर्तन में हैी वह इंगित निहित है, जिसमें जटी की तुलना" अनादि डॉक्टर की मेज पर बीच–बीच में असहाय वेदना से तड़पती जो युवतियां लेटी रहती है के साथ की गयी है।"

बेहुला कहानी में भी संस्कार से आदिवासियों को मुक्त कराने का लक्ष्य, लेखिका में नजर आता है। लेकिन यहाँ संस्कारों की मुक्ति श्री पद की मौत के बाद होती है। बांढ़ में भी एक पुराना दृश्य नजर आता है। जिसमें बाढ़ के पानी में जात पात का बंधन बह जाता है। सवर्ण वर्ग के लोग आदिवासियों को भरपेट भोजन कराते है। यह कहानी की रचना लेखक द्वारा समानता की स्थापना करने के लिए की गई

है। कृष्ण द्वादशी में लेखिका ने दर्शाया है कि स्वप्न सुन्दरी माधवी का पति व्यवसाय करने के लिए अपने परिवार को छोड़ कर चला जाता है। उसके सकुशल वापसी के लिए गंगा घाट पर प्रतिदिन जाकर पूजा अर्चना किया करती थी। घर से लेकर गंगा घाट तक के प्रतिदिन उसके स्वरूप को पुरूष वर्ग द्वारा निहारा जाता था। इस प्रदेश के राजा लक्ष्मण सेन के साले कुमार दत्त ने एक दिन इस बनिया बहु को देखने के बाद उसे पकड़ लेने की चाहत बना ली थी। अवसर पाकर गंगाघाट में उसका हाथ पकड़ कर खींचना चाहता था। बनिया बहु ने दुर्गा का रूप धारण कर राजा के साले का पुरजोर विरोध किया। पश्चात् वह पूरे बनिया पारा व आचार्य को लेकर राजा के दरबार में न्याय मांगने पहुंच गई। रानी के प्रेम में पड़े अंधे राजा को अपने साले के द्वारा किये गये अपराध दिखाई नहीं दिये। तभी माधवी ने राजा को जनता के प्रति कर्त्तव्य का स्मरण कराया। तब राजा ने अपने साले को सजा देने का निर्णय लिया।

कृष्ण द्वादशी और ईंट के ऊपर ईंट दोनों ही रचनाओं के माध्यम से लेखिका ने समाज में चेतना जागृत करने का प्रयास किया है। यदि नारी सबल होकर खड़ी हो जाये तो स्वयं की रक्षा कर सकती है। वही दूसरी ओर यदि दुर्बल रही तो पुरूष वर्ग उसकी अस्मिता को बार–बार तार करता रहेगा। मोहनपुर की रूप–कथा कहानी में महाश्वेता देवी ने बताया गया है। कि इस रूप–कथा में घर–घर मे धान के भंडार हैं, गोहाल में गायें हैं। इस रूप–कथा में बेहुला, एक बहती नदी है। इस नदी में जाल डाल देने–भर से मछलियाँ भर जाती हैं। इस रूप–कथा में भूख नहीं, अकाल नहीं, जमींदारों का अत्याचार नहीं, रोग नहीं, कोई बीमारी नहीं है। इस रूप–कथा को अंधी बुढ़िया नेभी खुद अपनी आँखों से नहीं देखा है। उसके पूर्वजों ने भी नहीं देखा। यह मोहनपुर वास्तव में था भी नहीं। बेहुला की धार ने जब अपना रूप पलट दिया था तो मोहनपुर पानी के नीचे आ गया था। फिर एक और मोहनपुर बसा था। इस मोहनपुर में हद दरजे की गरीबी है। कलकत्ता से दो घंटे ट्रेन मे जाओ तो इरकानपुर

स्टेशन आता है। स्टेशन से उतरकर थोड़ा पूरब चलिये तो बेहुला गाँव आयेगा। कुछ दूर पूरब चलकर फिर दक्षिण घूमना होता है। तीन मील पैदल चलने पर आता है मोहनपुर गाँव। तिक्तरों और केवटों का ग्राम। रास्ते के नाम पर बस धान के खेतों के बीच पगडंडियाँ हैं।

————::::————

अध्याय 03 महाश्वेता देवी की कहानी विधा का विकास

प्राचीन काल से ही कहानी हिन्दी साहित्य में अपना स्थान बनाने के लिए संघर्षरत रही है। पूर्व में हिन्दी साहित्यकारों के लिए कहानी मनोरंजन का साधन थी। केवल शोध विषयों में सूची का स्थान देने के लिए ही कहानी का उपयोग किया जाता था। नई कहानी ने पुनः अनुभव की वास्तविकता को स्थापित किया है। नई कहानियों में क्रियाशीलता के फलस्वरुप ही कहानियों को साहित्यिक प्रतिष्ठा मिली। सन् 1957 में हुए साहित्यकार सम्मेलन में नई कहानियों को लगभग स्वीकार कर लिया गया। सन् 1959 में कहानी में आज की कहानी शीर्षक से एक और लेखमाला प्रारंभ की गई है। इस माला के अधिकतर लेखक आज के वे कहानीकार है जिनका कहानियों का साहित्य में महत्वपूर्ण योगदान है।

हरिशंकर परसाई ने लिखा है, "हिन्दी में कहानी की एक पुष्ट और स्वस्थ परम्परा है और वर्तमान कहानी उसका एक विकसित रुप है।" 20 वीं सदी के मध्य में कहानी अपना स्थान बना सकी। कहानी अपने साठ वर्षीय कार्यकाल में पूर्णतः परिपक्व हो चुकी है। कहानी केवल कहानी ही नहीं है। बल्कि कहानी ने समाज में व्याप्त आदिवासियों, दलितों, मजदूरों, शोषित, पीड़ित वर्ग, महिलाओं की समस्याओं आदि को समाज के प्रतिबिम्ब में लाकर रख दिया है। नई कहानीकारों में मोहन राकेश, राजेन्द्र प्रसाद, धर्मवीर भरती, निर्मल वर्मा, कमलेश्वर, मन्नू भण्डारी, रघुवीर सहाय, नामवार सिंह, उषा प्रियंवदा, महाश्वेता देवी इत्यादि उल्लेखनीय हैं।

महाश्वेता देवी की बचपन से ही लिखने में रूचि रही है। उन्होने हमेशा से ही ज्वलंत मुद्दो पर ही अपनी रचनाएं रची है। महाश्वेता देवी की रचनाओं में झाँसी की रानी, टेरोडैक्टिल, दौलती, बनिया बहू, मर्डरर की माँ, मातृ छवि, मास्टर साब, नीलू के लिए, रिपोर्टर, श्री श्री

गणेश महिमा, स्त्री पर्व, स्वाहा और हीरो–एक ब्लू प्रिंट अक्लांत कौरव, अग्निगर्भ, अमृत संचय, आदिवासी कथा, ईंट के ऊपर ईंट, उन्तीसवीं धारा के आरोपी, उम्रकैद, कृष्ण द्वादशी, ग्राम बांग्ला, घहराती घटाएँ, चोट्टिमुंडा और उसका तीर, जंगल के दावेदार, जकड़न, जली थी अग्निशिखा, आदि बांग्ला से हिन्दी में अनुदित रचनाएं हैं। इन सभी रचनाओं का बांग्ला से हिन्दी मे अनुवाद हो चुका है।

महाश्वेता देवी द्वारा रचित कहानियाँ में बाढ़, बीज, द्रौपदी, रांग नंबर, शिकार, शाम सवेरे की मां, बांयेन, बेहुला, मूल अधिकार और भिखारी दुसाध, भारत वर्ष तथा अन्य कहानियों में आखिरी शमानिन, भारतवर्ष, प्रेत छाया, डायन, मूर्ति, पाँकाल, मोहनपुर की रूप कथा, आदि कहानियों का संग्रह हैं। मानवीय आधार पर लिखी गई कहानियों में से मूर्ति बेगारी, बांधुआ मजदूरी, हत्याओं और अमानवीय लूट–खसोट के बीच साँस लेता, पिटता, लड़ता, गिरता और गिरकर फिर उठता आदमी ही महाश्वेता देवी की इन कहानियों का नायक है।

महाश्वेता देवी के शब्दों में "एक लंबे अरसे से मेरे भीतर जनजातीय समाज के लिए पीड़ा की जो ज्वाला धधक रही है, वह मेरी चिता के साथ ही शांत होगी.....।"

ये उद्‌गार बंगाल की सुप्रसिद्ध लेखिका महाश्वेता देवी के हैं जिन्होंने अपना पूरा जीवन और साहित्य भारतीय जनजातीय समाज को समर्पित कर दिया है। इसलिए स्वयं लेखिका द्वारा संकलित इस संग्रह की नौ में से आठ कहानियों के केंद्र में आदिवासी मनुष्य है, जो समाज की मूलधारा से कटकर जी रहा हैं। बंगाल की लेखिका महाश्वेता देवी ने कहानियों के माध्यम से क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की कोशिश की। आदिवासी क्षेत्रों में होने वाले रुढ़ीवादी परम्पराओं, वर्ग संघर्ष, भूमिहीन मजदूरों की स्थिति, मजदूर नारी की कथा, नक्सलबाड़ी आंदोलन आदि स्वर इनकी कहानियों में मुखरित हुए है। उन्होंने जीवंत पात्रों को लेकर उनके साथ समाज में घटित घटनाओं

को समाज के समक्ष रखा और इन्ही समस्याओं को लेकर राष्ट्रीय स्तर पर आंदोलन भी चलाये गये है।

निम्न जनजातियों, बंधुआ मजदूरों पिछड़े वर्गो और निर्धनता का चित्रण, दलितों और साधन–हीनों का शोषण, निम्न वर्गीय समाज का शोषण, पलायनवादी मजदूरों पर हुये अत्याचार अजन्में सन्तान के सौदे, आदिवासी वर्ग में प्रचलित परम्पराओं को प्रभावशाली भाषा में अभिव्यक्त कर, उनके शोषण का चित्रण के इसी संदेश को सही जगह पहुँचाने के कारण महाश्वेता देवी की कहानियाँ शोध का विषय है। नई कहानियों के दौर में महाश्वेता देवी पर शोध कार्य कम हुये है। नई शताब्दी में उनकी कहानियों में सामाजिक चेतना पर अभी तक विचार नहीं किया गया। इस दृष्टि से प्रस्तावित शोध कार्य एक सार्थक प्रयास होगा।

3.1 प्रारंभिक कहानियाँ

कहानी कहने और सुनने की प्रवृत्ति मनुष्य मात्र में पाई जाती है। कथा साहित्य, बहुत प्राचीनकाल से समाज के सभ्य तथा असभ्य सब प्राणियों में कौतूहल जगाकर मनोरंजन का साधन बनता आ रहा है। मनुष्य कहानियों में अपनी ही भावनाओं का प्रतिबिम्ब देखता है। अतएव मनोरंजन अथवा शिक्षा जो कुछ उसे कहानियों की घटनओं में मिलता है उससे वह अपना वह धनिष्ठ संबंध समझता है। ऐतिहासिकता के विचार से भारतवर्ष कथा–साहित्य का उद्‌गम स्थान माना जाता है। भारतीय कथा साहित्य की मौलिकता तथा प्राचीनता को सब विद्वान स्वीकार करते है।

हिन्दी का प्रथम कहानीकार और उसकी कहानीः

आधुनिक हिन्दी गद्य के आविभार्व के साथ हिन्दी कहानियों का निर्माणकाल आरंभ होता है। यह काल लगभग 100 वर्षों का है जिसमें अनेक कहानीकारों द्वारा कहानी–रचना का अभ्यास किया गया। कहानीकाल की उत्पति की दिशा में यद्यपि रचनाकारों के प्रयत्न लगातार होते रहे परंतु 19वीं शताब्दी की समाप्ति तक कहानी

का कोई निश्चित अथवा विशिष्ट रूप प्रतिष्ठित न हो सका। 19वीं शताब्दी के आरंभ में इंशा अल्ला खां द्वारा रचित रानी केतकी की कहानी में कहानी–कला का सूत्रपात हुआ। भारतेन्दु युग में अनेक रचनाकारों की रचनाओं में कहानी के भिन्न–भिन्न रूप से उपस्थित हुए। हिन्दी कहानियों के इस निर्माण–काल में कहानी की दोनों परम्पराओं–पठित और मौखिक के दर्शन होते है। हीरामन तोते की कहानी, उदयन की कथा, विक्रमादित्य तथा भोज की कहानियां, वेताल पच्चीसी आदि मौखिक परम्परा में योग देने वाली अनेक कहानियों का प्रचार इस समय मिलता है। इनमें से कुछ का प्रकाशन 19वीं शताब्दी में हुआ।

रानी केतकी की कहानीः

19वीं शताब्दी की मौलिक तथा अनुदित कहानियों का स्वरूप तथा प्रतिपादन शैली के विचार से वर्तमान कहानी से भिन्न रचना ठहरती है। आज की कहानियों में वस्तु, पात्र, संवाद, उद्देश्य, शीर्षक, आरंभ–अंत, भाषा–शैली आदि की जो विशेषताएं है वे 19वीं शताब्दी की प्राचीन परम्परा कहानियों में नहीं मिलती।

चाह के डूबे हुये ऐ मेरे दाता सब तिरें।
दिन फिरे जैसे इन्हीं के वैसे दिन, अपने फिरें।।

रानी केतकी की कहानी हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी है। इसमें कहानी की मौलिक परम्परा का पालन अधिक हुआ है। इसकी भाषा चमत्कारपूर्ण और वर्णन शैली आकर्षक है। इसमें वर्तमान कहानी के सब तत्व नहीं मिलते। इसकी प्रतिपादन शैली कृत्रिम है। इस आरंभ और अंत दोनों कृत्रिम तथा प्रभाव शून्य है। यह शिक्षात्मक कहानी है। इसकी रचना, साहित्य के एक रूप कहानी का विकास करने के दृष्टिकोण से न होकर, हिन्दवी भाषा का नमूना उपस्थित करने के विचार से हुई है। वस्तुतः इंशाअल्ला ने कहानी–कला का सूत्रपात ही किया। कहानी का कोई निश्चित रूप उनके द्वारा निर्धारित न हो सका। तात्विक विशेषताओं के आधार पर इनकी कहानी को प्राचीन ढंग की कहानियों की परम्परा में माना जायेगा।

लल्लूलाल की कहानियां और उनकी विशेषताएंः

पहले लिखा जा चुका है कि ऐतिहासिकता की दृष्टि से लल्लूलाल का नाम इंशा अल्ला खां से पहले आता है। परंतु मौलिकता के विचार से इंशा की रानी केतकी की कहानी का स्थान 19वीं शताब्दी की कहानियों में सर्वप्रथम माना जाता है। इंशा से आगे लल्लूलाल ही हिन्दी कहानीकारों में मुख्य माने जाते है। इन्होंने संस्कृत की कहानियों के हिन्दी अनुवाद किए है। इनकी कहानियों में सिंहासन बत्तीसी, बेताल पच्चीसी राजनीति माघोनल का विशेष स्थान है। इनकी घटनाओं में जादू, तिलस्म तथा अलौकिकता की प्रधानता है। प्रायः सब कहानियां प्रेमप्रधान है।

तात्पर्य यह कि लल्लूलाल की कहानियों में कहानी कला का विकास नहीं मिलता। इनकी सब कहानियाँ प्राचीन पद्धति में लिखी गई है। जिनमें कथावस्तु कल्पना प्रधान, रोमांचकारी तथा कुतूहल वर्द्धक मिलती है। इनमें पात्रों की अपेक्षा घटनाओं की प्रधानता है। कहीं–कहीं मुख्य कथा के अंतर्गत अनेक अवान्तकथाएं है। इनकी घटनाएं अलौकिक तिलस्मी तथा जादू वाली है। इनमें बीच–बीच में पद्यात्मक अंशों का प्रयोग हुआ है। ये अन्य पुरूष प्रधान शैली में लिखी गई है। इनके पात्रों के संवाद नाटकीय प्रभाव से शून्य है। इनका अंत उपदेशात्मक होता है। इनकी भाषा ब्रजभाषा से पूर्ण प्रभावित है। अंतः तात्विक दृष्टि से इनकी कहानियाँ संस्कृत की प्राचीन कथा परम्परा का स्मरण दिलाती है। ये पूर्ण मौलिक रचनाएं नहीं है।

सदलमिश्र

सदलमिश्र द्वारा रचित नासिकेतोपाख्यान (1803) की कथा पौराणिक है। यह घटना प्रधान कहानी है जिसकी कथावस्तु के बीच–बीच में पद्यांशों का प्रयोग हुआ है। इसकी विषयवस्तु में दो कथाएं–एक चंद्रावती की और दूसरी नासिकेत की बराबर चलती है। इसका वातावरण प्रेम तथा भक्तिमय है। इसकी गणना उपदेशात्मक कहानियों

में की जायेगी। अभी तक कहानी का ऐसा स्वतंत्र रूप विकसित नहीं हुआ था जो साहित्य अंगों में अपना नया रूप प्रतिष्ठित कर सका हो। इसकी भाषा में पूर्वीपन है। वस्तुतः यह कहानी, संस्कृत कथा–परम्परा का अनुकरण करती है। इसका रूप पुराना प्रतिपादन शैली पुरानी तथा भाषा पुरानी है।

शनीचरी

महाश्वेता देवी की कहानियों में हमारे जीवन के आस–पास प्रतिदिन घटने वाली घटनाओं का वर्णन मिलता है उनकी कहानियाँ केवल कहानियाँ ही नहीं बल्कि सत्य घटनाओं सी प्रतीत होती है। आम आदमी के सामने आने वाली समस्याओं का समावेश इन कहानियों में मिलता है। उसी प्रकार महाश्वेता देवी ने शनीचरी कहानी में जंगल की लडाई एवं फोर्स के अत्याचार का चित्रण किया है जिसमें यह के मूल निवासी ग्रामीणों की जीवनशैली असामान्य हो जाती है। उनका घर एवं रोजगार भी छीन जाता है ऐसे में ग्रामीणों को जंगलों में शरण लेनी पड़ती है इस दुर्दशा का लाभ उठाने के लिए ईट भट्टों मालिकों की समाज मे छोडी गई दलाल महिलाएं जंगल की शरण में रह रही युवतियों को अपने जाल में फंसाने के लिए पहुँच जाती है। पेट की आग और तन ढ़कने की मजबूरी ग्रामीणों को अपने घर की इज्जत आसानी सें ईंट भट्टों में काम करने के लिए उस दलाल के अधीन कर देती है। इस दौरान दलाल महिलाएं परिवार के मुखियां को पूर्णतः दिलासा देती है कि ईंट भट्टों में कार्य करने के एवज में मजदूरी के रूप में मोटी रकम प्राप्त होगी जिससे वे अपने जीवन निर्वाह करने के लिए आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकेंगे। शनीचरी कहानी के इस अंश में उल्लेखित वृतांत इस प्रकार हैः

"मैं तो 'रेजा' लाती हूँ। लड़कियों को खाना नहीं मिलता, काम देती हूँ। मै क्या पाप करती हूँ?"

"थू–थू! तुम्हारे धर्म पर थूकता हूँ। शैतान! पहले खुद मालिक की रंडी थी, अब दूसरों को बनाती है।"

"पाप किया है दूसरों ने। तुम्हारे यहाँ के लोगों ने। नहीं तो घरों में इतना अभाव क्यों होता?"

ईंट भट्टों में रेजाओं की पूर्ति के लिए जरूरत मन्द मजदूर नव युवतियों की खोज में निकाली गोहुमन बीवी की मुलाकात ट्रेन में भिक्षुक हीरालाल से होती है। तब वो कहती है कि मैं तो गरीबों की मदद करती हूँ जिन लोगों को खाना नहीं मिलता है उन्हें खाना देती हूँ पहनने के लिए कपड़ा दिलाती हूँ यह कोई पाप थोड़ी ही है। लेकिन इस भलाई के पीछे छिपी बुराई को जानने वाला हीरालाल कहता है कि मानवता के नाम पर मजबूर लोगों के घरों की बेटियों को अंधेरे में रखकर केवल रोटी, कपड़ा और रूपये दिलाने के बहाने उनकी देह को नीलाम कर रही हो वह भी इन लड़कियों की इच्छाओं के विपरित यह घृणित कार्य करवाने जा रही हो। मैं तुम पर और तुम्हारे धर्म पर थूकता हूँ तुम मानव के रूप में शैतान हो पहले ईंट भट्टों के मालिक की वैश्या थी। अब इन अबोध बालिकाओं को वैश्या बना रही हो। ये पाप नहीं है तो क्या है ? जवाब में गोहुमन बीवी कहती है कि ऐसी परिस्थिति ही क्यों आने देते है जिससे की घर की इज्जत दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बाहर जाये।

गोहुमन बीवी पुनः यह पंक्तियों को दोहराती है। गाते हुए कहती हैं:

कलकत्ता का ईंट–भट्टा।
बुलाता है मेरी लड़की को।
चली–चली जाती है रेलगाड़ी।

शनीचरी कहानी में जंगलों की रक्षा के लिए ग्रामीण एकजुट होकर आन्दोलित हुए इस आन्दोलन को कुचलने के लिए प्रशासन द्वारा बिहार मिलिट्री पुलिस और सी.आर.पी.एफ के जवान को तैनात कर दिया गया। ग्रामीणों की सभा के दौरान दोनों ही तरफ से गोलियों और तीर चले कई बेकसूर मारे गये। मिलिट्री ने घरों में घुसकर गोलियों से लोगों को भून दिया। सभी के घरों को जला दिया। मिलिट्री के इस बेरहम अत्याचार के कारण बचे हुए लोगों को

भागते–छिपते रहना पड़ा। जबकि युवतियों को जंगल में शरण लेनी पड़ी। गरीबी एवं भूखमरी के कारण शरीर को ढ़कने के लिए युवतियों के पास कपड़े तक नहीं थें। बिहार मिल्ट्री पुलिस के बढ़ते अत्याचार ने जंगलों में घुसकर इन अविवाहित लड़कियों को बेइज्जत किया। ये अत्याचार होता रहा ग्रामीणों के घर जानवरों में मुर्गी, बकरियों को अपना भोजन बनाया। एक प्रकार से पुलिस द्वारा ग्रामीणों पर किये गये चौतरफा हमले की बर्बरता को महाश्वेता देवी ने इस कहानी में दर्शाया है।

मूर्ति

मूर्ति कहानी वह कहानी है जिसमें मेदिनीपुर पश्चिम बंगाल के शोधार्थी छात्र द्वारा सन् 1924 में शहीद दीनदयाल ठाकुर पर शोध कर डायरेक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। जिसमें सन् 1920–24 के बीच जेल के रिकार्ड को लिपि बद्ध किया है। इस शोध के अनुसार दीन दयाल ठाकुर उम्र 24 वर्ष 5 फुट 11 इंच कद काठी का युवा है जो थोड़ी अंग्रेजी और बंगली भाषा को जानता है। पुलिस थाना हाजत लाल बाजार का रहने वाला है।

वस्तुतः छातिम ग्राम के साथ दीनदयाल का कोई सम्पर्क था–यह छातिमवासी भूल गये हैं। लैटेराइट मिट्टी में किसी तरह धान उगाना, जंगल में शाल पेड़ के 'फैलिंग' के ठेके पर काम करना, यदा–कदा मदन खाँ के पुत्र सदन खाँ के खेत में मजूरी करना। इसी तरह के दुखद संग्राम में उनकी जिन्दगी कटती है। आच्छन्न चिरांधकार में पड़े इस दरिद्र गाँव में कुछ भी नहीं हैं। करीब में कोई हेल्थ–सेंटर, गाँव में पीने के पानी का कुआँ, हाट वगैरह कुछ भी नहीं है। गाँव देखकर यह अनुमान भी नहीं लगता कि इसके केवल सात मील दूर ही उद्धत हाइवे है। बयालीस मील दूर खड़गपुर स्टेशन, पर यहाँ है– आंदोलित भूमि, छोटे पहाड़, बौने शाल के पेड़, बेशुमार गरीबी। हाट भी लगती है सोम और शुक्र को, चार मील दूर। हाट में नमक–मिर्च, चावल, मोटा कपड़ा, झिलमिल गमछा, दाद–मलहम, दाँतशूल की

दवा, प्लास्टिक के खिलौने, तेल का सिंघाड़ा और गुड़ की जलेबी मिलती हैं।

बाउरीपाड़ा की चरन बाउरी की बहू अपने देवर से प्रेम करती है। खूब मार–पिटाई हुई थी बाउरीपाड़ा में। पंचायत ने कहा था, गाँव में इस तरह की गड़बड़ नहीं चल सकतीं देवाश्रयी गाँव। ब्राह्मणों का गाँव है। चरन अपने ममेरे भाई को निकाल दे। घर में पोसा ही क्यों था– अनाथ, निराश्रय समझ कर?

डरी सहमी दुलाली के मन में गाँव का पूरा वाकिया याद आने लगता है कि छातिम ग्राम के बाउरीपाड़ा महोल्ले में भाभी अपने देवर से प्यार करती थी। यह बात का खुलासा होने पर घर पर कलह मच गया था दोनों को ही मारा– पिटा गया था। पंचायत ने भी कहा था कि गाँव में इस प्रकार की गड़बड़ी नहीं चलेगी क्योंकि यह ब्राह्मण और देवस्थान वाला गाँव है। इसलिए ये अनर्थ ही देवर को घर से निकाला जाये ऐसे व्यक्ति को घर पर पनाह देना उचित नहीं है। इसके बाद प्रेम करने वाले दोनों देवर और भाभी ने सावन के महीने में जब नदी उफान में थी तब उन्होंने कूदकर एक साथ जान दे दी थी। इसी वाकिये को ध्यान में रखकर ब्राहमण दीनू ठाकूर अपनी विधवा प्रेमिका दुलाली के पास दौड़ता हुआ आया और चीखता हुआ कहता है किः

"चल, दुलाली ! उसके बाद अगर तू यहाँ रही तो जीवन–भर तुझे यंत्रणा होगी।"

दीनू द्वारा शादी का रिश्ता ठुकरा देने के पश्चात् मानो दोनों ही परिवार का क्रोध उस पर हावी हो गया हो। विधवा विवाह करने के इच्छुक लड़के की इस इच्छा को सिरे से नकारते हुए लड़के के पिता ने घर से निकल जाने का आदेश दिया। घर से निकलते हुए दीनू ने पूरे जोर से दुलाली को पुकारते हुए अपने साथ चलने के लिए प्रेरित किया था। यदि आज मेरे साथ नहीं चलोगी तो सारा जीवन यातनाओं के साथ गुजारना पडेगा। परन्तु दीनू की पुकार सुनते ही

दुलाली बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ी और दीनदयाल गाँव छोड़कर चला गया था। कुछ समय बितने के बाद क्रांतिकारी दीनू के फांसी की खबर परिवार, समाज एवं गाँव को लगी। इसके उपरान्त दीनू का परिवार जमींदार परिवार को श्राप देकर चले गये।

महाश्वेता देवी ने मूर्ति कहानी में दीनदयाल के विषय में बताते हुए कहा किः

सन् 1923 दिसम्बर में एक शाम को सात बजे दीनदयाल ठाकुर, रमणी साँतरा और शरदेर पांडा में 313 अप ट्रेन को खड़गपुर से कुछ आगे रोक दिया (ट्रेन में डाक के पैसे थे) और वंदे मातरम् बोलते–बोलते गार्ड के कमरे में घुसे।

दीनदयाल बोला, "मातृभूमि के लिए रुपये ले रहे हैं। ये रुपये विदेशी सरकार ने हमारा शोषण करके लिये हैं। सो बाधा मत दो।"

इससे यह ज्ञात होता है कि दीनदयाल ठाकुर प्रेम में मिली असफलता से व्यथित होकर सर्वस्व मातृभूमि के लिए निछावर करने के उद्देश्य से स्वतन्त्रता संग्राम की लड़ाई में शामिल हो गये और अंग्रेज सरकार से रुपये छीनने के दौरान दीनदयाल की गोली से सरकारी खजाने की रक्षा में लगे संतरी और गार्ड जख्मी हो गये।

महाश्वेता देवी ने इस कहानी में दीनू की स्मृति के सम्बन्ध में लिखा है किः

"एक दिन कर्णावती के सोते में पत्थर पर बैठकर तुमने कहा था, 'दीनू दा चलो, दोनों जहर खा लेते हैं। 'लेकिन साहस नहीं हुआ। दोनों परिवार कलंकित होंगे, यह सोच हमने यह नहीं किया। आज सोचता हूँ, क्यों नहीं किया? यह चिट्ठी क्या वह तुम्हें देंगे? कौन जाने? दुलाली.... सोचता हूँ सोचता था, तुम्हे चिरकाल तक प्यार करता रहूंगा। अपनी ही बात न जानते हुए तुझे इतना कष्ट दिया। कष्ट मुझे भी हुआ।"

लेखिका ने उल्लेखित किया है कि चिट्ठी से दो बातें पता चलती

हैं। एक यह कि दीनदयाल ठाकुर दुलाली से प्रेम करते थे पर समाज को यह प्रेम स्वीकार नहीं था। जिसके कारण दीनू एवं दुलाली को ग्राम एवं समाज के तीव्र प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। फिर भी वह उस लड़की से प्रेम करते रहे। यह असम्भव नहीं कि प्रेम की असफलता और विद्रोह–कार्य में परस्पर सम्बंध हो।

फाँसी पर लटकने के पूर्व दीनदयाल ने इस चिट्ठी में लिखा कि मैं अब इस दुनिया से विदा ले रहा हूँ लेकिन दुलाली से उसने कहाँ कि विधवा होने से जीवन समाप्त नहीं हो जाता। भुइयाँ एवं ठाकुर का विवाह नहीं हो सकता यह कही नहीं कहा गया और मरने के पहले तुम्हें मैं एक बार देख लेता तो मुझे कोई गम नहीं रहता। मुझे फाँसी होने वाली है लेकिन मैं फाँसी रोकने के लिए अंग्रेज सरकार के समक्ष गुहार नही लगाऊँगा। मैं तुम्हारा दूसरे लोक में भी इंतजार करूंगा। मैंने इस ह्रदयहीन समाज से तुम्हें मांगा था। लेकिन मेरी इस चाहत को भी समाज ने स्वीकार नहीं किया। पुरानी बातों का स्मरण करते हुए ,तुमनें ही एक साथ जहर खाने की बात की थी लेकिन मुझमें इतना साहस नहीं था और दोनों ही परिवारों की बदनामी होती, यह सोचकर यह कार्य करने से इंकार कर दिया था। मैं नहीं जानता की यह पत्र भी तुम तक पहुँच पायेगा या नहीं लेकिन दुलाली मैं तुमसे बहुत प्यार करता हूँ।

इस पत्र से यह स्पष्ट होता है कि दीनदयाल ठाकुर दुलाली से असीमित प्रेम करते थे लेकिन सम्पूर्ण ग्राम एवं समाज के तीव्र विरोध के कारण उनका प्यार सफल नहीं हो सका। प्रेम की इस असफलता के कारण उन्हें स्वतन्त्रता संग्राम में शामिल होने का निर्णय लेना पड़ा। लेखिका ने मूर्ति कहानी में यह स्पष्ट किया कि एक शोधकर्त्ता छात्र के कारण ही आजादी के तीस वर्षो के बाद सन् 1977 में दीनदयाल को शहीद का दर्जा प्राप्त हो सका। विधवा विवाह विरोधी समाज की सोच के कारण दो युवा प्रेमियों का जीवन नरकीय बन गया। युवक को समय के पूर्व मृत्यु प्राप्त हुई जबकि युवती दुलाली को जीवन भर उपेक्षा पूर्ण जीवन यापन करना पड़ा। यह

कहानी विधवा–विवाह की समर्थक है और विधवा विवाह को प्रेरित करते हुए समाज में चेतना जागृत करने का प्रयास है ताकि दुलाली जैसी महिला को सम्पूर्ण जीवन दुख के साये में व्यतीत न करना पड़े।

3.2 विकास कालीन कहानियाँ

प्रयोग–काल की कहानियों द्वारा हिन्दी कहानी कला के प्रारंभ का सूत्रपात किया गया। उनमें कहानी के जिन भिन्न–भिन्न कलात्मक प्रयोगों का विकास हुआ उनकी परम्परा सन् 1910 तक जाकर समाप्त हो जाती है। सन् 1911 में हिन्दी की नई कलात्मक कहानी का उदय होता है। यों तो प्रयोगकाल में भी रामचंद्र शुक्ल द्वारा लिखित 'ग्यारह वर्ष का समय' तथा बंगमहिला द्वारा लिखित 'दुलाई वाली' जैसी कलात्मक कहानियों के उदाहरण मिलते है परंतु उस समय इनकी कोई परम्परा न बन पाई थी। सन् 1911 में हिन्दी की तीन उच्च कोटि की कलात्मक कहानियों का प्रकाशन हुआ। 'इंदु' में जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखित 'ग्राम' तथा जीपी श्रीवास्तव द्वारा लिखित 'पिकनिक' और भारतमित्र में चंद्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा लिखित 'सुखमय जीवन' कहानियां प्रकाशित हुई। अस्तु आधुनिक हिन्दी कहानी का वास्तविक आरंभ सन् 1911 से माना जाता है, तथा यहीं से हिन्दी कहानियों का विकासकाल आरंभ होता है।

विकासकालीन हिन्दी कहानियों की यह परम्परा प्रेमचंद तथा जयशंकर प्रसाद के संपूर्ण जीवनकाल तक अविछिन्न रूप से बराबर चलती रही। सन् 1930 के स्वतन्त्रता संग्राम के कारण एक ओर देश का राजनीतिक वातावरण विक्षुब्ध हो उठा और दूसरी और साहित्य क्षेत्र में एक नवीन भावधारा (क्रांति और विद्रोह की भावना) का आविर्भाव हुआ जिसने कहानी को एक नवीन दिशा की ओर मोड़ दिया। इस भावधारा के प्रथम उन्नायक जैनेंद्र कुमार है। अस्तु विकासकाल की कहानियों का समय सन् 1911 से लेकर जैनेंद्र कुमार के आविर्भाव काल सन् 1930 तक मानना चाहिए। विकासकाल के इन 20 वर्षों में कहानी के अनेक रूप बने तथा प्रयोग हुए जिनके द्वारा हिन्दी कहानी भिन्न–भिन्न रूप में विकासित हुआ। इस काल

के कहानीकारों में जयशंकर प्रसाद, जीपी श्रीवास्तव, राजा राधिकारमणा प्रसाद सिंह, विश्वम्भरनाथ कौशिक, ज्वालादत्त शर्मा, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, चतुरसेन शास्त्री, प्रेमचंद्र, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, रायकृष्णादास, चंडिप्रसाद हृदयेश, गोविंदवल्लभ पंत, सुदर्शन पांडेय, बेचन शर्मा उग्र, विनोदशंकर व्यास, भगवती प्रसाद बाजपेयी, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला और उपेंद्रनाथ अश्क आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

विकासकाल के चरित्र प्रधान कहानियों का जो वर्गीकरण प्रस्तुत प्रबंधन में ग्रहण किया गया है वह इस प्रकार हैः

1. **भाव मूलक आदर्शवादी परम्परा की कहानियांः** जयशंकर प्रसाद, राजा राधिकारमणा प्रसाद सिंह, राय कृष्णदास, चंडी प्रसाद हृदयेश, गोविंद वल्लभ पंत, विनोद शंकर व्यास, पांडेय बेचन शर्मा उग्र।
2. **आदर्शोन्मुख यथार्थवादी कहानियांः** प्रेमचंद, विश्वम्भरनाथ जिज्जा, ज्वालादत्त शर्मा, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, सुदर्शन, विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक, उपेंद्रनाथ अश्क।
3. **हास्यप्रधान कहानियांः** जीपी श्रीवास्तव, प्रेमचंद, विश्वम्भरनाथ कौशिक।
4. **भावमूलक यथार्थवादी वातावरण प्रधान कहानियांः** चंद्रधर गुलेरी, चतुरसेन शास्त्री।
5. **असाधारण परिस्थितियों में चरित्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करने वाली तथा समाज का नग्न चित्रण करने वाली यथार्थवादी कहानियांः** भगवती प्रसाद वाजपेयी, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला।
6. **प्रतीकवादी कहानियांः** जयशंकर प्रसाद, रायकृष्णा दास, पांडेय बेचन शर्मा उग्र, सुदर्शन।
7. **प्राकृतवादी कहानियांः** पांडेय वेचन शर्मा उग्र, चतुरसेन शास्त्री, कृष्णाकांत मालवीय।

जयशंकर प्रसाद की कहानियां ऐतिहासिकता की दृष्टि से विकासकाल की कहानियों में भावमूलक आदर्शवादी परम्परा की कहानियों का प्रथम स्थान है। इनमें कहानी के एक स्वतंत्र रूप की प्रतिष्ठा की गई। कहानी का जो कलागत संस्थान इनमें विकसित हुआ वह इस समय के अन्य वर्गों की कहानियों के कला–विधान से पूर्णतः भिन्न है। कहानी के इस प्रयोग के अंतर्गत विकास कालीन कहानीकारों द्वारा जो प्रयत्न किए गए उनमें रचनाकारों की व्यक्तिगत विशेष भावों के अतिरिक्त कुछ सामान्य प्रवृत्तियां है। इस वर्ग की कहानियों में भाव तथा कल्पना की प्रधानता है जिसके कारण ये गद्यगीत तथा रेखाचित्र के अधिक निकट है।

ये समूचे विकासकाल का प्रतिनिधित्व करने वाले कहानीकारों में से है। इन्होंने कथासाहित्य के क्षेत्र में विशेष नाम कमाया है। सन् 1911 में इंदु के प्रकाशन के साथ ये कहानी क्षेत्र में उतरे। इनकी सर्वप्रथम प्रकाशित कहानी ग्राम और अंतिम सालवती है।

सामाजिक तथा चरित्रप्रधान कहानियां में गूदढ़सांई, गुदड़ी में लाल, अधोरी का मोह, पाप की पराजय, सहयोग, पत्थर की पुकार, कालावती की शिक्षा, दुखिया, आकाशदीप, सुनहला सांप, हिमालय का पथिक, भिखारिन, प्रतिध्वनि, समुद्र सन्तरण, बैरागी, बनजारा, चूड़ी वाली, अपराधी, प्रख्याचिन्ह, रूप की छाया, विसाती, इंद्रजाल, सलीम, छोटा जादूगर, परिवर्तन, संदेह, भीख में, चित्रवाले पत्थर, अनबोला, विरामचिन्ह, विजया, अमिट स्मृति, ग्रामगीत, व्रत भंग, मधुवा, धीसू, बेड़ी, नीरा, चंदा, ग्राम आदि।

हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ गद्य–काव्यकार तथा चित्रकला प्रेमी रायकृष्णदास सन् 1917 से कहानियां लिखते आ रहे है। इनकी कहानियां प्रतिभा प्रभा तथा त्यागभूमि पत्रिकाओं और मधुकारी कहानी संग्रह में निकल चुकी है। अब तक इनके तीन कहानी–संग्रह सुधांशु, व्याख्या, प्रकाशित हुए है जिनमें जयशंकर प्रसाद की भावमूलक आदर्शवादी परम्परा का पालन हुआ है। कहानियों का वर्गीकरण विषयवस्तु के

आधार पर मिठास, नई दुनिया, आश्रित, सुहाग, रहस्य, न्याय पक्ष, माहात्म्य, गल्पलेखक, दिनों का फेर, नर राक्षस, अंतःपुर का आरंभ, प्रसन्नता की प्राप्ति तथा मां की आत्मा।

पांडेय बेचन शर्मा उग्र की अधिकांश कहानियां प्रसाद–संस्थान के अंतर्गत आती है। इनकी कहानियों के कई संग्रह–गल्पांजली, रेशमी, इंद्रधनुष, चिनगारियां, बलात्कार, दौजख की आग, शैतान मंडली, क्रांतिकारी कहानियां, चाकलेट, दिल्ली का खूंखार मौला आदि निकल चुके है। वर्गीकरणः– उग्र की कहानियां संख्या में अधिक है जो भिन्न–भिन्न वर्गों में विभाजित की जा सकती हैं। विषय के आधार पर इनकी कहानियां व्यक्तिगत, सामाजिक, देशभक्ति तथा राष्ट्रीयता प्रधान, पशु जगत संबंधी तथा प्राकृतवादी आदि स्वतंत्र वर्गों में रखी जा सकती है। इनकी अधिकांश कहानियां भावमूलक आदर्शवादी है जिनमें किसी घटना के सहारे कोई भाव विशेष उपस्थित किया जाता है।

प्रेमचंद की कहानियाँः

आदर्शोन्मुख यथार्थवादी परम्परा के कहानीकारों में प्रेमचंद का प्रथम स्थान है। ये उर्दू कथा–साहित्य के क्षेत्र में सन् 1901 में ही पदार्पण कर चुके थे परंतु हिन्दी में उनकी रचनाएं सन् 1915 से पूर्व नहीं मिलती। कथाकार प्रेमचंद का साहित्यिक जीवन उर्दू उपन्यास तथा गल्परचना द्वारा आरंभ होता है। इन्होंने उर्दू में 178 कहानियों लिखी जो समय–समय पर उर्दू की प्रसिद्ध पत्रिका उपासना में निकली। इनकी प्रायः सब उर्दू कहानियां हिन्दी में अनुदित होकर प्रकाशित हो चुकी है।

ये उर्दू से हट कर हिन्दी कथा–साहित्य की ओर मुड़े और लगभग 21 वर्ष तक बराबर हिन्दी उपन्यासों तथा कहानियों की रचना करते रहे। इन्होंने हिन्दी में लगभग 250–300 कहानियों लिखी जिनका प्रकाशन भिन्न–भिन्न कहानी पुस्तकों में हुआ है। यथा सप्त सरोज, नवनिधि, प्रेम पचीसी, प्रेम पूर्णिमा, प्रेम द्वादशी आदि है।

प्रेमचंद के अधिकांश कहानी संग्रह सरस्वती प्रेस बुक डिपो बनारस से भी निकले हैं। इनकी उर्दू कहानियों के प्रथम संग्रह (सोजेवतन) में इनका उपनाम नवाबराय था तो जो आगे चल कर प्रेमचंद हो गया है।

पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की कहानियां और उनकी विशेषताएंः

प्रसिद्ध कवि, आलोचक तथा निबंधकार पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की गणना हिन्दी कहानीकारों में भी की जाती है। इनकी कहानियां सरस्वती पत्रिका में सन् 1916 से प्रकाशित होने लगी थीं। इनकी सर्वप्रथम कहानी अन्नपूर्णा के मंदिर में बेलजियम कवि मैटरलिंक के एक नाटक के आधार पर लिखी गई। सरस्वती के सम्पादन काल में इन्होंने कुछ मौलिक कहानियां भी लिखी–यथा–झलमला, नंदिनी, अंजलि नाम से सन् 1930 में प्रकाशित हुआ।

इनकी कहानियां सामाजिक हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से इनमें पारिवारिक जीवन के भिन्न–भिन्न रूपों का प्रदर्शन किया गया है। प्रेम के भिन्न–भिन्न रूपों की मार्मिक व्यंजना जैसी इनकी लेखनी द्वारा की गई है वैसी अन्यत्र दुर्लभ है। इनके पात्रों का चरित्र–चित्रण स्वाभाविक तथा आकर्षक है। लक्ष्य की दृष्टि से इनकी कहानियों की गणना आदर्शवादी साहित्य के अंतर्गत की जाती है। इनके पात्रों में संवाद स्वाभाविक है। आकार की दृष्टि से इनकी कहानियां लंबी नहीं है। कहानियों के शीर्षक, आरंभ अंत तथा कथाभाग सब सुगठित उनमें पूरा सामंजस्य है। इनकी अधिकांश कहानियां पात्र प्रधान है। विषय, प्रतिपादन शैली कहानीकला विकास की दृष्टि से इन्होंने प्रेमचंद के मार्ग का ही अनुसरण है।

विकासकाल की हिन्दी कहानियां, अपने विकास के 20 वर्षों में, विषय, प्रतिपादन शैली तथा कला संस्थान की दृष्टि से निर्माण काल की कहानियों को पीछे छोड़कर विकास मार्ग पर बहुत आगे बढ़ आई। निर्माणकाल में हिन्दी कहानी ने रचना के अन्य रूपों से अपना

स्वतंत्र रूप खड़ा किया। प्रयोगकाल में उनको स्थिरता मिली तथा साहित्य के अन्य अंगों से भिन्न उसके अनेक प्रयत्न तथा प्रयोग सामने आए जिनके द्वारा उसको निश्चित वैधानिक दिशा मिली। इस काल के साहित्य मनीषियों की साधना से ऐसी बहुमूल्य कलाकृतियों का निर्माण हुआ जिनके फलस्वरूप उनकी एक स्वतंत्र तथा महत्वपूर्ण परम्परा की प्रतिष्ठा हो गई।

विकासकालीन काहानियों की इसी परम्परा को आगे बढ़ते हुए बंग्ला साहित्यकार महाश्वेता देवी ने बंग्ला भाषा में कहानियों की रचना की। महाश्वेता देवी का रचना संसार के महत्व को समझते हुए इन्ही कहानियों का अनुवाद हिन्दी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया गया है। महाश्वेता देवी का नाम एक संधर्षधर्मी लेखिका का ही नहीं, एक संघर्षशील संस्था का भी पर्याय कहा जा सकता है। भारतीय समाज अर्धसामंती– अर्धपूँजीवादी है या नहीं–इस प्रश्न पर बुद्धिजीवी भले ही एकमत न हों, लेकिन यह अर्धसामंती–अर्धपूँजीवादी समाज–व्यवस्था अपनी तमाम विकृतियों, छलछद्मों और शोषण के चालबाज हथकंडों सहित महाश्वेता देवी के रचना–संसार में उपस्थित रही है और उसी के समानांतर उपस्थित रहा है पीड़ित तबकों का अनवरत संघर्ष। यही महाश्वेता देवी का सच है, जिसकी रोशनी में भारतीय जनजीवन और संघर्ष को उसके सच्चे और निर्वस्त्र स्वरूप में देखा जा सकता है।

महाश्वेता देवी के लिए कहानी लेखन एक मिशन है। उनके उपन्यास और कहानियाँ पढ़के लेखन की अहमियत और जरूरत को पहचाना जा सकता है, मनुष्य होने के उत्तरदायित्व को भी चिन्हा जा सकता है। महाश्वेता देवी कि कहानियों में जिस आदिवासी समाज अथवा जिन जनजातियों को पहचाना जा सकता है,वे हैं बागदी (बाढ़), डोम (बायेन), पाखमारा (शाम सवेरे की मां), उरांव (शिकार), गंजू (बीज), माल अथवा ओझा (बेहुला), संथाल (द्रौपदी), दुसाध(मूल अधिकार और भिखारी दुसाध)।

महाश्वेता देवी की कहानियाँ लोककथाओं और पुराकथाओं के सहारे कही गयी हैं। महाश्वेता देवी के ही शब्दों में "..... मैं पुराकथा, पौराणिक चरित्र और घटनाओं को वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में फिर से यह बताने के लिए लिखती हूँ कि वास्तव में लोककथाओं में अतीत और वर्तमान अविच्छिन्न धारा के रूप में प्रवाहित होते हैं .....।"

बाढ़

विकासकालीन कहानियों की स्वतंत्र परम्परा को प्रतिष्ठित करते हुए महाश्वेता देवी ने बाढ़ कहानी में लिखा है कि आकांक्षित और प्रत्याशित चैतन्य देव अंततः चीनिवास के गांव में नहीं आते, तब केवल चीनिवास की आशा ही भंग नहीं होती, समता, सांत्वना और अभियोग की सुनवाई की प्रत्याशा का भी अंत हो जाता है।" केवल गौरांग दर्शन के लिए ही नहीं, पेट की आग भी बड़ी बुरी आग होती है। "सुदूर अतीत में गंगा में बाढ़ आयी थी, बाढ़ की इस भयंकर चोट से सामयिक रुप से जात–पांत का विभाजन पृष्ठभूमि में चला गया था। तभी एक बार आदिवासियों की क्षुधाशांत हुई थी। इसीलिए स्वाभाविक है कि चौतन्य देव की बाढ़ की संभावना के साथ–साथ चीनिवास उसी परिणति की कल्पना तथा कामना करे। इन दोनो बाढ़ों को मिला कर, विषमता के बीच समता की प्रतिष्ठा को केंद्र में रख कर जैसे महाश्वेता देवी ने एक और व्यंजना की सृष्टि की है–दान, दाक्षिणा और हृदय परिवर्तन से नहीं, बल्कि एक प्रबल विपर्यय के बीच से ही समता की यह प्रतिष्ठा संभव है।

महाश्वेता देवी ने बाढ़ कहानी के माध्यम से निर्धन एवं अनुसूचित जाति वर्ग की व्यथा को व्यक्त करने का जीवंत प्रयास किया है।

"मां, रसोई –पूजा नहीं करेगी?" चीनिवास ने पूछा।

"नहीं मेरे बाप, इस बार हम लोग रसोई –पूजा नहीं करेंगें।"

"क्यों मां?"

"इसी दिन तेरे कटुआ के ताऊ मरे थे न!"

"तुझसे किसने कहा?"

"मैं जानती हूं।

महाश्वेता देवी का पात्र चीनिवास एक गांव में विधवा अनुसूचित जनजाति की महिला का पुत्र है इस परिवार के तीन सदस्यों में चीनिवास की मां रूपसी व चीनिवास की दादी अर्थात् दो व्यस्क महिलाएं व एक निर्भर बालक है। इस प्रकार से एक छोटे से परिवार मे एक भी पुरूष नहीं है। जिसके कारण जीविकोर्पाजन के लिए इस गरीब परिवार को हरक्षण संघर्ष करना पड़ता है अभाव ग्रस्त जीवन से चीनिवास त्रस्त हो चुका है अपने खान–पान से संबंधित अभिलाषा को पूर्ण करने में उसे सदैव ही उत्सव एवं त्यौहारों का इन्तजार रहता है।

इस त्यौहार के संदर्भ में बताया कि बंगाल में समृद्धशाली व निर्धन वर्ग दोनों ही अपने अराध्य को पूजते हुए मनोकामना पूर्ति हेतु आराधना करते है। इसी त्यौहार की आड़ में चीनिवास अपनी भूख की तृष्णा को मिटा पाने का हर संभव प्रयास कर रहा है। अपनी मां से गत वर्ष का हवाला देते हुए, त्यौहार मनाने के लिए विनती कर रहा है। परन्तु इसकी मां अपनी कमजोर परिस्थितियों को ढकते हुए अपने रिश्तेदार की मौत के संदर्भ में इस वर्ष त्यौहार नहीं मना पाने का बहाना बनाती है।

महाश्वेता देवी ने बाढ़ कहानी के माध्यम से निम्न वर्ग की निर्धनता को व्यक्त किया है। चीनिवास जो मनसा का पेड़ अपने आंगन में गाड़ने के लिए पेड़ की खोज में घूमता है और पूजा करने के दौरान यह मान्यता है कि मनसा के पेड़ से जो माँगो मिल जाता है कोई अपने लिए घर मांगता है तो कोई गाय के थन में दूध, कोई पोखरे मे मछलियां तो कोई बहुओं की गोद में बेटा। लेकिन यह जरूरी नहीं है कि हर घर में मनसर के पेड़ हो। लेखिका ने चीनिवास की इसी अभिलाषा को अनुच्छेदों के माध्यम से व्यक्त करते हुए कहा है कि:

"रसोईघर के दरवाजे से गर्म भात की गंध आ रही थी। ब्राह्मण लोग भात की हांड़ी में कितना घी डालते हैं! दूध डाल कर सफेद लौकी की तरकारी बनाते हैं और मूली, बड़ियां और नारियल का

कितना अच्छा घट बनाते हैं!"

बागदीनी का पुत्र चीनिवास जो बहुत ही गरीब दरिद्र परिवार से था। जिसे कभी भी बहुत अच्छा भोजन तो दूर की बात है पेट भरने के लिए भी उसकी मां व दादी बहुत मुश्किल से अन्न जुटा पाते थे। कभी उसे अच्छा भोजन मिल जाये इस आस में वह दर–दर भटकता गांव के ब्राह्मण सामंत परिवार के घर से आ रही भोजन की खुशबू उसे दरवाजे तक खींच लाती है और वह बाहर खड़े–खड़े ही उस खुशबू से अंदाज लगाता है कि ब्राह्मण लोग भात में बहुत अधिक मात्रा में घी का प्रयोग करते है। लौकी की सब्जी दूध डालकर पकायी जाती है। मूली, बड़ी और नारियल को मिला कर अच्छी सब्जी बनाई जाती है।

महाश्वेता देवी ने बागदीनी के परिवार की दुर्दशा को व्यक्त करते हुए लिखा है किः

"बड़ी आचार्यानी ने बेटा पैदा होने के लिए कितनी व्रत–पूजा की, फिर भी काले तिल से रंग वाली लड़कियों के अलावा एक भी बेटा न हुआ। तभी तो घर के मालिक छोटी आचार्यानी ले आये।"

वहीं चीनिवास सोचता है कि मुझे कभी चावल तक नसीब नहीं हुआ। किसी ब्राह्मण ने भी उसे भोजन नहीं करवाया। इसलिए वह ब्राह्मण परिवार के बिना आदेश के उनके घर पहुंचकर कार्य करने के लिए मनसा का पेड़ लेकर देने की इच्छा जाहिर करता हैं। लेकिन पंड़िताईन उसे साफ इंकार कर चले जाने को कहती हैं। अधूरी इच्छा लिए चीनिवास घर वापस आ जाता है जब चीनिवास पंड़िताईन को पुनः माँ–माँ पुकारता है और कहता है जग लाकर दूं क्या ? क्रोधित होकर पंडिताईन उसे जाने के लिए कहती है। चीनिवास के द्वारा बार–बार माँ–माँ सम्बोधन पंडिताईन के हृदय को जला रहा था। लेकिन चीनिवास की मजबूरी थी पेट की आग के कारण अपमान महसूस नहीं हो रहा था। पूरे गाँव में रूपसी बगदीनी की तरह गरीब न था। वह अपने पुत्र को पेट भर भोजन तक नहीं करा पाती थी।

अधूरी वेशभूषा सिर पर बालों की वहीं जटाये होने के बावजूद चीनिवास का स्वरूप देखते ही बनता था। वही धनी ब्राह्मण परिवार को कितना ही मन्नतो बाद देवी पूजा आराधना के बाद ही पुत्र नसीब नहीं था। इसी कारण ब्राह्मण ने दूसरा विवाह किया था। जिससे उन्हें पुत्र रत्न भी प्राप्त हुआ लेकिन वह सदैव बीमार रहता था। ब्राह्मण परिवार के घर पर किसी को आने की अनुमति नहीं थी, आंगन से थोड़ी दूरी पर लक्षमण रेखा बना दी गई थी। पूरे ग्रामीण उसी रेखा से दूर खड़े होकर पुकार लगाते थे।

"उसे एक पाव भूजा दे दीजिए न, बड़ी दीदी।" छोटी आचार्यानी ने कमरे के अंदर से ही पुकार कर कहा, "भूजा लेकर खुशी–खुशी चला जा। बेटा, मेरे बच्चे की तरफ मत देखना।"

चीनिवास की दोनों आंखे भूख मिटाने के लिए हर पल कुछ खोजती रहती थीं। पता नहीं उसे इतनी भूख क्यों लगती है?

चीनिवास की भूख भरी नजरों से परेशान होकर ब्राह्मण की पत्नी ने कुछ खाद्य सामग्री देकर जाने के लिए कहा लेकिन चीनिवास की आंखे अब भी खाने के लिए कुछ न कुछ खोज रही थी मानो वो सदा से भूखा था। कुछ खाद्य सामग्री मिलने के बाद भी वह संतुष्ट नहीं था। उसने बड़ी पंडिताईन से सवाल किया ब्राह्मण माँ दानदाता प्रभु के आने के बाद हम सभी लोग एक साथ बैठ कर प्रसाद ग्रहण करेंगे। इतना सुनते ही पंडिताईन क्रोधित हो गई और वह अपने पति को भी सुनाते हुए बोलती है हाँ तुम निचली जाति के साथ नाचने वाले लोग हो। वे ऋषि मुनि है या देवता हम क्या जाने ? लेकिन हमें तो इसी गांव में जीना और मरना है इसलिए मैं उनके साथ क्यों नाचूँगी? क्रोधित पंडिताईन चीनिवास एवं उसकी माँ को कोसती रही।

लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से स्पष्ट किया है कि भूख समाज की किसी भी प्राणी को परेशान कर सकती है। भूख को शांत करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति सभी सीमाओं को लांघ सकता है। महाश्वेता देवी की इस कहानी में एक ही समाज में दो वर्गो का

उल्लेख है एक वर्ग जिसके पास सम्पूर्ण खाद्य सामग्री है और इच्छा के अनुरूप उपलब्ध सामग्री में से चयन कर उसका भोग कर सकता है। जबकि दूसरा ऐसा वर्ग है जो सम्पन्न वर्ग की झूठन प्राप्त करने के लिए दर–दर भटकता है। इस दशक में लिखी गई कहानी की प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। हमारे देश में 21 करोड़ लोगो को भोजन नहीं मिल पाता है भूख एवं कुपोषण से मुकाबला करने के लिए केन्द्र राज्य एवं स्थानीय प्रशासन द्वारा भूखो तक भोजन पहुंचाने के लिए कई–कई सरकारी योजनायें चलायी जा रही है। इसके बावजूद भी भोजन नहीं मिलने के कारण हर वर्ष हजारों लोगो की मौत हो रही है।

रांग नंबर

रांग नंबर कहानी में वयोवृद्ध लेखिका महाश्वेता देवी ने उम्र का अंतिम सफर कर रहे समुदाय को समर्पित की है इस समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति जीवन के अंतिम पड़ाव को अपने नाती, पोतो, पुत्र–पुत्री एवं बहु के साथ खुशहाल जीवन जीने की कामना करता है, परन्तु आधुनिक परिवेश ने अपनो के मध्य लम्बा अंतराल पैदा कर दिया है एकल परिवार की चल पड़ी परम्परा में विकल्प के लिए स्थान नहीं रह गया है। रांग नंबर कहानी के माध्यम से एक बुजुर्ग दम्पति के पास शेष जीवन व्यतीत करने का एक मात्र विकल्प उनका पुत्र होता है उनके पुत्र के निधन होने व न होने की संभावना के बाद उत्पन्न परिस्थितियों को दर्शाया गया है। महाश्वेता देवी कहानी रांग नंबर मे लिखती है किः

दीपंकर की तस्वीरें, बचपन का दीपंकर, घुटा हुआ सिर, भोला–भाला चेहरा। मैट्रिक पास दीपंकर। ग्रैजुएट दीपंकर। लंबा छरहरा शरीर, भावुक और शांत चेहरा।

अस्पताल से दर्दनाक संदेश को लेकर आये फोन को सुनने के बाद तीर्थ बाबू और उनकी पत्नी सविता की नींद ही उड़ जाती है। नींद की गोली खाने के बाद भी लगातार अपने इकलौते पुत्र की

सलामती को लेकर उनके मन में चिंताएं उठने लगती है। बचपन से लेकर पढ़ाई के लिए दिल्ली जाने तक की सारे स्मृतियाँ उनके आँखों के सामने नजर आने लगती है। उनके मन में कई तरह के प्रश्न उठने लगते है। उनका पुत्र दीपंकर को लेकर वह स्वयं से तरह–तरह के प्रश्न करता है। इन्सान को संतान की चाहत, संतान से इतना अधिक प्यार क्यों? आदि।

तीर्थ बाबू जब तक जिंदा है, तभी तक वे संतान–कामना करते हैं–संतान पास रहे.....करीब रहे। मेरा दुख–दर्द समझ.....उसमें शामिल हो। उनके साथ एकमेक हो जाना सीखे।

गलत उम्मीद ! रांग होप !

अपनी पत्नी को किसी तरह समझा बुझाकर तीर्थबाबू शांत कराते है। रात भी काफी गुजर जाने के कारण दुखी सविता को नींद आ जाती हैं परन्तु स्वयं तीर्थ बाबू नहीं सो पाते। उनकी पत्नी द्वारा अपने पुत्र के सम्बन्ध में उठाये गये सारे सवाल मन मस्तिष्क में घुम रहे थे। एवं दीपंकर की सलामती के बारे में सोचते है। हर व्यक्ति अपनी संतान इसलिए चाहता है कि दीपंकर बुढ़ापे का सहारा बने मौत होने पर अग्नि दे सके। जब तक जीवित रहते है तब तक उम्मीद रहती है कि संतान मेरे ही पास रहे जो मेरा है वह सब कुछ ले ये सारी उम्मीद जीवन भर करता है।

कहीं एक अदद एक्सचेंज ! इसी शहर में कहीं एक अदद एक्सचेंज मौजूद है। वहां बैठा–बैठा, जाने कौन तो उन्हें गलत नंबर. .....रांग नंबर देता है। गलत शहर! गलत उम्मीद! व्ह कौन है? वह अदृश्य ऑपरेटर आखिर कहां है? वह नजर क्यों नहीं आता?

तीर्थबाबू के दिमाग में रांग नम्बर को लेकर कई प्रश्न उठने लगते है क्यों टेलीफोन विभाग ऐसे नम्बर बदलता है सब कुछ गलत हो जाता है टेलीफोन एक्सचेंज को चलाने वाले इस प्रकार की भूल क्यों करते है और यह सोचते–सोचते वह भी नींद की आगोश में चले जाते है। तीर्थबाबू का आश्रित बुढ़ापा अपने पुत्र की मौत को स्वीकार

करना नहीं चाहता है इसलिए तीर्थ बाबू के दृष्टकोण से उन्हे सूचना देने वाला टेलीफोन का विभाग उनके कानो तक पहुंचने वाले व्यक्ति की आवाज, शहर सब कुछ गलत नजर आता है। उनकी इस छोटी सी दुनियां में केवल वे ही सही है। इसलिए उनका पुत्र भी जीवित है शेष जीवन उसी के होने न होने के मध्य गुजारना चाहते है महाश्वेता देवी इस कहानी के माध्यम से स्पष्ट संदेश देना चाहती है कि व्यक्ति को अपने सम्पूर्ण जीवन काल में विकल्प रखना चाहिए। वह अपना सम्पूर्ण समय आसानी से गुजर बसर कर सके। विकल्प से उनका आशय रिश्तों की संभावनाओं से है और रिश्तों का महत्व संयुक्त परिवार में ही नजर आता है।

बांयेन

महाश्वेता देवी ने बांयेन कहानी के माध्यम से बताना चाहा है कि एक ग्रामीण महिला चण्डी एक परिवार तक सीमित है उस परिवार में वह मां एवं एक पत्नी की भूमिका का निर्वाहन ईमानदारी पूर्वक कर रही है। परन्तु समाज द्वारा रातो–रात एक सामान्य महिला को कु–प्रथाओं एवं अंधविश्वास के चश्में से देखते हुए चण्डी को बांयेन (डायन) बना दिया जाता है। इस कु–प्रथा के चलते एक मां को उसके पुत्र से, एक पत्नी को पति से दूर कर दिया जाता हैं। छल–छदम करने वाले इस समाज को मां की ममता तक दिखलायी नहीं पड़ती है। महाश्वेता देवी लिखती हैः

"कहीं बांयेन भी किसी की मां होती है? बांयेन भी क्या आदमी होती है? बांयेन तो मिट्टी खोद कर मरे बच्चे को निकाल लेती है, उसका दुलार करती है, उसे दूध पिलाती है। बांयेन की नजर पड़ जाये, तो खड़ा पेड़ मिनटों में सूख जाता है। भगीरथ तो एक जिंदा बच्चा है। वह कैसे बांयेन की कोख से पैदा हुआ?

भागीरथ के पिता मलिन्दर और उनकी पत्नी चण्डी के मध्य वार्तालाप सुनकर भागीरथ परेशान हो जाता है क्योंकि बांयेन के संबंध में जो सुना और जाना था कि उससे बात करने वाला अपने

प्राण खो देता है पिता के खो देने का दर्द उसे सता रहा था। चिन्तित पुत्र की परेशानी को समझकर पिता ने उसे समझते हुए कहा कि बांयेन बनने से पहले वह तेरी माँ थी। यह सुनते ही भागीरथ अवाक रह जाता है। उसके हृदय और मस्तिष्क में कई सवाल उभरने लगे क्या बांयेन भी कभी किसी की माँ हो सकती है ? क्या किसी की पत्नी हो सकती है? सोचने लगा।

बांयेन का चरित्र आम आदमी से हटकर होता है। जिस प्रकार से उसे समाज में बांयेन के संबंध में बताया था कि वह बहुत ही खतरनाक होती है। मरे हुए बच्चे के शव को जमीन के नीचे से खोद कर निकालती है और उसकी दृष्टि आदमी पेड़ या जानवर पर पड़ जाये तो वहीं मर जाते है। ऐसे में बांयेन किसी बच्चों को कैसे जन्म दे सकती है। ये सारे सवाल उसके मन–मस्तिष्क में लगातार घूम रहे थे उसके कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था। वह सोच रहा था कि आम महिला बांयेन कैसे बन सकती है?

महाश्वेता देवी ने आगे उल्लेखित करते हुए कहा है कि:

आश्चर्य की बात है कि बांयेन का लड़का होने पर भी कोई उसकी उपेक्षा नहीं करता था, वरन् उसकी ज्यादा ही खातिर होती थी। बांयेन के लड़के की खातिरदारी करने से बांयेन को यह बात मालूम हो जाता है। इसलिए वह भी लोगों को अच्छी निगाह से देखती है।

सभी गांव वालों को मालूम था कि भगीरथ ही चण्डी बांयेन का पुत्र है। इसलिए भगीरथ की पूरे गांव में अच्छी पूछ–परख थी और सभी लोग उसे प्यार देते थे। जो मांगता था उसे आसानी से मिलता था। लेकिन यह सब कुछ हर डोम प्रजाति के बच्चे के साथ नहीं होता। बांयेन पुत्र होने के कारण ही भगीरथ के साथ अच्छा व्यवहार किया जा रहा था, क्योंकि गांव वालो को डर था कि यदि बांयेन के पुत्र को सताया गया तो बांयेन उसके बच्चों के साथ दुर्व्यवहार कर सकती है।

"तू बांयेन है।" गांव के लोगों ने डर कर मंत्रोच्चार की तरह

कहा।

"कोई पहरा नहीं दे रहा था।" चण्डी ने कहा।

"तू बांयेन है।"

"यह मेरे पितारों का काम है। ये लोग क्या जानें ?"

"तू बांयेन है।"

जब चण्डी अपना पैतृक कार्य छोटे बच्चे की मौत के बाद लाश को दफनाने का कार्य कर रही थी। चण्डी को बांयेन बनाने की तीव्र इच्छा संजोये समाज के ठेकेदार वहाँ पहुँच कर बार–बार उसे बांयेन के नाम से सम्बोधित कर रहे थे लेकिन वह दुखी महिला इस सम्बोधन से चिड़कर वह बांयेन नहीं होने की बात कर रही थी। लेकिन बांयेन का चरित्र थोपने के लिए आतुर समाज उसे प्रेरित कर रहा था कि वह बांयेन ही है लेकिन चण्डी मानने को तैयार नहीं थी। तभी इस भीड़ में से एक व्यक्ति उसके पति को भी बुला लेता है। स्थल पर पति को देख दर्द से अविभूत चण्डी कहती है कि मैं बांयेन नहीं हूँ। मुझे आरोपित करने वालों को समझाइये आप तो सब कुछ जानते हो कि मैं एक आम महिला हूँ।

इसी तरह की बात कुँअर बेचौन ने मूल्यहीनता पर व्यंग्य करते हुए लिखी हैः

"प्यार पूजाधर था पहले अब तो बस बाजार है
जिसको देखो वो ही बिकने के लिए तैयार है।
हम थके थे इस कदर, बैठे तो उट्ठे ही नहीं
लोग कहते रह गए गिरती हुईदिवार है।
चंद घटनाओं से जो कहते हैं, तुमको पढ़ लिया,
उनके हाथों में कोई पुस्तक नहीं अघ्खबार है।
जिन्दगी जिसकी अंधेरों की तिजारत में कटी
कैसे कह दें वो उजालों का सही हकदार है।
मैंने पूछा तो बहुत, उत्तर न दे पाया कोई
आदमी बीमार है या जहनियत बीमार है।

तेरे घर से मेरे घर तक, एक खुशबू की लकीर
खींच दी जिसने उसी का नाम शायद प्यार है।"

मलिन्दर पत्नी की पुकार के बाद मौका पाकर उसे देखता रहता है। लेकिन वह तय नहीं कर पाता है कि उसकी पत्नी बांयेन है या चण्डी! और कुछ ही क्षण बाद वह भी समाज के झूठे आवरण में लिपटकर चण्डी का बांयेन होना स्वीकार कर लेता है। महाश्वेता देवी पुनः अपनी संवेदनाओं को इन पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त करती है।

"तुम अच्छे कपड़े पहनोगी?"

तब बांयेन के मुंह से बोल फूटे, "गंगापुत्र के बेटे, घर जाओ।"

"मैं.....मैं अब स्कूल में पढ़ने जाता हूं। मै। अच्छा लड़का बन गया हूँ।"

"मेरे साथ बात नहीं करते। मैं बांयेन हूं।"

"मैं छाया से बोल रहा हूं।"

भगीरथ के मन में अपने माँ से मिलने की तीव्र इच्छा जागृत होती है। पिता की अस्वीकृति व समाज में फैली भ्रांतियों के बाद भी भगीरथ अपनी माँ से मिलने गांव के बाहर बनी झोपड़ी के पास पहुंच जाता है सहज ही बात करते हुए मां से कहता है कि मां तुम नये कपड़े पहनोगी। अपनी पुत्र की बातों को सुनकर चण्डी बांयेन अपने आपको नहीं रोक पाती जबरदस्ती या जबरिया थोपे गये बांयेन के चरित्र से भयभीत होकर अपने पुत्र से कहती है मैं बांयेन हूँ। मुझसे दूर रहो। माँ की ममता से वंचित बच्चा दूर न जाने की हठ करते हुए कहता है कि मै आपसे नहीं आपकी छाया से बात कर रहा हूँ। यह सुनने के बाद भी उसकी माँ को विश्वास नहीं होता है। पुत्र को अंजाने में भी नुकसान न हो। इस बात का भय उसे सताता है और वह कहती है कि उसकी छाया को देखना व बात करना गलत है। भगीरथ कहता है कि मुझे इन सब बातों से डर नहीं लगता है। फिर भी उसकी मां उसे लगातार घर जाने के लिए प्रेरित कहती है। माँ का प्यार सिर्फ और सिर्फ प्यार है उसमें कोई मिलावट नहीं। हर माँ

जितनी निर्दोष होती है बांयेन भी उतनी ही निर्दोष है।

महाश्वेता देवी ने बांयेन कहानी के माध्यम से बताना चाहा है कि हमारे समाज में अंधविश्वास और कुप्रथाओं के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिए। जिस महिला को पूरे गांव द्वारा प्रेत आत्मा डायेन का नाम देकर समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है उस सामान्य महिला को अपने पुत्र एवं पति के प्रेम से रातो–रात वंचित कर दिया जाता है वह महिला समाज द्वारा लगाये गये लांछन को धोने के लिए अपने प्राणों की आहुति तक दे देती है। उसके द्वारा दी गई प्राणों की आहुति कई निर्दोष जिंदगी के लिए विघ्नहर्त्ता के रूप में प्रकट होकर प्राणों की रक्षा करती है कई कुप्रथाओं एवं किदवंतियों के आधार पर मानसिक रूप से विक्षिप्त समाज के समक्ष स्वयं को निर्दोष प्रमाणित करने के लिए एक मां एवं पत्नी को अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ती है। समाज द्वारा डायन बनाई गई महिला भी कभी प्राणरक्षक भी हो सकती है ऐसा परिणाम आने के बाद समाज का सिर शर्म से झुक जाता है लेखिका स्पष्ट करती है के ऐसे शर्मसार समाज द्वारा बनाई गई भूत पिशाच, डायन जैसी कुप्रथाओं का हमारे जीवन में मूल्य नहीं होना चाहिए।

बीज

महाश्वेता देवी ने बीज कहानी के माध्यम से कहा कि जमींदारी प्रथा के कुरूडा और हेसाड़ी गाँव में मजदूरों पर जमींदार द्वारा किये जाने वाले शोषण, अत्याचार एवं मजदूरों के संघर्ष को व्यक्त किया है।

कुरूडा और हेसाड़ी गाँव के उत्तर में जो जमीन है, वह एकदम सूखी और धूप में जली हुई है। उसकी ऊपरी सतह पानी की लहरों की तरह लहरदार है। बारिश के बाद भी यहां घास तक नहीं होती। यहां–वहां थोड़े से नीम के पेड़ हैं और मैदान के बीच–बीच में नागफनी के जंगल सांपों जैसे फन उठाये खड़े हैं। इसी जले हुए भूखण्ड के बीच में डोंगी के आकार की एक जमीन है, जो आधा बीघा के करीब होगी। दूर से वह जमीन दिखाई नहीं देती। सिर्फ वह जला

हुआ भू–भाग दिखाई देता है, जहाँ कोई भैंस भी चरती दिखाई नहीं देती। मगर थोड़ा ऊंचाई से देखने पर यह जमीन दिखाई पड़ती है और इस छोटी–सी जमीन पर हरे–पन का जो समारोह दिखाई देता है, वह एक नजर में भूतहा जैसा लगता है।

आसानी से मजदूरों की शर्त पर रोजी मजूरी देना जमींदार लछमन को कतई मंजूर नहीं था। इसलिए मजदूरों की इस क्रांति को समाप्त करने के लिए रात में जमींदार एवं उसके गुंडो ने करन के गाँव कमाडी के हरिजन बस्ती पर हमला किया और पूरी बस्ती मे आग लगा दी। इस हमले में हरिजन बस्ती जलकर खांक हो गई। कितने ही लोग जिंदा जलकर मर गये। लछमन सिंह के आदमी इन्ही लाशों के बीच से करन और उसके भाई बुलाकी की लाशों को घोड़े में लादकर दूलन के खेत में लेकर पहुंच गये। दूलन को पूर्व से निर्देश था कि वह अपने खेत में खड़ा रहे। खेत में पहुंचे लछमन सिंह और उसके आदमियों ने दूलन से करन एवं बुलाकी की लाशों को जमीन मे गाड़ने का आदेश दिया। बाहुबली लछमन के भय से दूलन सभी अनैतिक कार्य करता गया। लछमन सिंह ने अंत में चेतावनी भी दी कि ये सारी घटना के विषय में किसी से मत कहना नही ंतो तेरा और तेरे परिवार का भी यहीं हाल होगा। जमींन में गड़ी हुई लाशों की सुरक्षा भी तुझे ही करना होगा। क्योंकि सियार और लकड़बग्गा जैसे जानवर लाशों को जमीन से निकाल सकते है। अपने प्राणों की रक्षा के लिए दूलन ने सिर हिलाकर सहमति प्रदान की।

इस कहानी के माध्यम से लेखिका ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि बाहुबली शक्तिशाली स्वर्ण वर्ग के आगे सरकारी कानून, सरकारी अफसर एवं संविधान की घोषणाएं कोई मायने नहीं रखती है। ब्राह्मण एवं राजपूत अपनी मनमानी से ही ग्राम की व्यवस्था चलाते रहेंगे। ये बात निचली जाति के वर्ग को समझ लेना चाहिए।

महाश्वेता देवी आगे कहती है किः

पुलिस और लछमन सिंह के हिसाब से सात। अशर्फी का बाप एकदम हक्का–बक्का हो गया। उसके दो बेटे मोहर और अशर्फी लापता हो गये थे। चामा गांव के मधुवन कोयरी और बुरूडिहा के पारस धोबी का भी पता न था। .....

उन्होंने कहा, "जब तक मैं वारंट लेकर नहीं आता लछमन सिंह इज नॉट टू लीव होम।"

दूलन ने अशर्फी को लछमन से सावधान रहने के लिए कहा और बताया कि विरोध करने वाले करन एवं बुलाकी का आज तक पता नहीं चला है। पूरी मजदूरी की मांग करने वाले अशर्फी व उसके साथी लछमन के निशाने पर थे। बाहर से मजदूर लाकर लछमन अपना काम कराने लगा। अशर्फी और साथियों ने खेत पहुंचकर विरोध किया तब लछमन के आदमियों ने अंधाधुंध गोलियाँ चलायी। कितने मरे इसकी कोई जानकारी नहीं थी। दूलन और लछमन के हिसाब से सात की मौत हुई थी। अशर्फी के पिता भयभीत थे। उनके दोनो ही बेटो का पता नहीं था। मोहर और अशर्फी लापता थे। चामा गांव में मधुवन कोयरी और बुरूडिहा के पारस धोबी का भी पता नहीं था। एस.डी.ओ के घटना स्थल पहुंचने पर जो लापता थे उनके परिजन एस.डी.ओ के समक्ष गुहार लगा रहे थें। तब एस.डी.ओ ने ग्रामवासियों को आश्वासन दिया कि लछमन सिंह के खिलाफ पुलिस केस करेंगे। मीडिया में खूब खबरे छपी लेकिन लछमन सिंह को कुछ समय बाद न्यायालय ने भी बेकसूर ठहराकर बरी कर दिया था। बल्कि एस.डी.ओ को खेतीहर मजदूरों को मालिक के खिलाफ भड़काकर शांतिपूर्ण माहोल को खराब करने का आरोप लगाकर दोषी ठहराया गया। एक प्रकार से पूरा सरकारी तंत्र जमींदार लछमन सिंह की रखेल बनकर रह गया था।

इस कहानी में लछमन जैसे जमींदार दर्जनो मजदूरों की हत्या कर अपने ही खेतों में बनाये गये अघोषित शमशान घाट में लाशों को दफना देता है। अंत में जमींदारों के वफादार एवं इन सभी घटनाओं

के गवाह दूलन जमींदार की हत्या कर देता है। अधिकारों की लडाई के दौरान मारे गये साथियों के शवों को दफन किये गये खेत में दूलन फसल लेकर बीज बनाता है। इसी बीज को पूरे गांव में वितरित कर अपने साथियों को अमर बना देता है। लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से बताया कि जमींदारी प्रथा के साथ शुरू हुआ मजदूरों के शोषण व हत्या का सिलसिला आज भी जारी है। सरकारी तन्त्र द्वारा तय न्यूनतम मजदूरी वेतन का भुगतान नहीं करना पूर्व में जमींदार और आज के ठेकेदार व उघोगपति अपनी शान समझते है। छत्तीसगढ़ प्रदेश में भी ट्रेड यूनियन नेता शंकर गुहा नियोगी द्वारा भी भिलाई के निजी उघोगों में कार्यरत मजदूरों को सरकारी दर पर मजदूरी दिलाने के लिए आंदोलन शुरू किया गया था बाद में उघोगपतियों ने संगठित हो कर श्रमिक नेता शंकर गुहा नियोगी की हत्या करवा दी थी।

3.3 उत्कर्ष कालीन कहानियाँ

यों तो विकास कालीन हिन्दी कहानियों की परम्परा प्रेमचंद और प्रसाद के अस्तकाल (1936–37) तक बराबर चलती रही तथा उनके पश्चात् भी उनके कलासंस्थानों का अनुकरण करने वाले अनेक कलाकार बहुत आगे तक जाते रहे किन्तु सन् 1930 में स्वातंत्रय संग्राम के आरंभ के साथ देश में एक नवीन चेतना का जागरण हुआ जिसके परिणाम स्वरूप राजनीति, समाज, साहित्य आदि भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में क्रांति और विद्रोह की लहर चारों और तीव्रगति से फैल गई।

हिन्दी कहानियों के विकास क्रम में सन् 1930 से ही एक नवीन मोड़ मिलने लगता है जिसके आधार पर उत्कर्षकाल का आरंभ सन् 1930 से माना जाता है। वस्तुतः सन् 1930 से सन् 1937 तक का समय हिन्दी कहानियों का सक्रांति काल है जिसमें एक ओर पुरानी परम्परा (विकास–काल) के कहानीकार अपने पुराने मार्ग पर आगे बढ़ते दिखाई देते है और दूसरी ओर नए युग का संदेश देने वाले नवीन कलाकार अपनी कला–कृतियों द्वारा स्वतंत्र मार्ग निकालते सामने आते हैं।

उत्कर्ष काल सन् 1930 के भद्र अवज्ञा आंदोलन के साथ आरंभ होता है। उस समय सारे देश में असंतोष और विद्रोह की लहर फैली हुई थी। जगह–जगह पर नमक कानून भंग किया जाता था, विदेशी वस्त्रों की होली जलाई जाती थी, शराब बंदी और विदेशी वस्त्र–बहिष्कार के लिए दुकानों पर धरना दिया जाता था। एक ओर सत्याग्रह करने वालों का त्याग तथा बलिदान और दूसरी ओर सरकार का दमन बराबर बढ़ते जाते थे। बीच–बीच में साम्प्रदायिकता भी अपने भीषण रूप से सामने आई।

एक ओर यूरोपीय युद्ध के कारण देश की सुरक्षा संबंधी स्थिति भयावह होती जा रही थी और दूसरी ओर देश में साम्प्रदायिकता का विष फैलता जा रहा था। भारत छोड़ों प्रस्ताव (1942) ऐतिहासिक क्रांति (1942) देसाई लियाकत योजना (1944) केबिनेट मिशन, बिहार का हत्याकांड और अन्ततोगत्वा 15 अगस्त 1947 को हिन्दुस्तान पाकिस्तान का विभाजन आदि ऐतिहासिक घटनाएं देशवासियों और कहानीकारों, सबके लिए महत्वपूर्ण हैं विचार क्षेत्र में यो तो गांधी और गांधीवाद का प्रभाव समस्त उत्कर्षकाल में परिव्याप्त रहा किन्तु इस समय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नवीन प्रवृत्तियों का प्रस्फुटन दृढ़ सिद्धांतों के आधार पर व्यापक रूप में होने लगा था।

भारत में प्रगतिशील साहित्य का आरंभ सन् 1936 से नियमित रूप में मिलता है जिसके लिए सर्वप्रथम प्रयास डॉ. मुल्कराज आनंद की अध्यक्षता में प्रगतिशील साहित्यकारों का संगठन लंदन में करके किया गया। उत्कर्ष–काल की अधिकांश कहानियों में प्रगतिवादी विचारधारा की छाप मिलती है। इस समय के कुछ कहानीकार ऐसे भी हैं जिन्होंने स्वतंत्र विषयों तथा शैलियों में कहानी के भिन्न–भिन्न प्रयत्न तथा प्रयोग उपस्थित किए। उत्कर्ष काल में जो हिन्दी कहानियों सामने आई उनका वर्गीकरण इस प्रकार हैः

1. **पूर्व परम्परा (विकासकाल) की कहानियांः**

क. भावमूलक यथार्थवादी कहानियांः जयशंकर प्रसाद, चंद्रगुप्त विद्यालंकार, सियारामशरण गुप्त, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी

वर्मा।

ख. व्यावहारिक जीवन की व्याख्या और उसकी आलोचना करने वाली यथार्थवादी कहानियाः प्रेमचंद, उपेंद्रनाथ अश्क, भगवतीचरण वर्मा।

2. **मनोवैज्ञानिक तथा दार्शनिक (यथार्थवादी) कहानियांः** जैनेंद्र कुमार, अज्ञेय, इलाचंद्र जोशी।
3. **समाजवादी यथार्थवादी (प्रगतिवाद) की कहानियांः** यशपाल।
4. **प्रेम वासना का नग्न चित्रण करने वाली (यौनवाद संबंधी) कहानियांः** पहाड़ी।
5. **कल्पना और भावुकता प्रधान कहानियांः** मोहनलाल महतो वियोगी कमलाकांत वर्मा, चंद्रगुप्त विद्यालंकार, जैनेंद्र, अज्ञेय।
6. **भारतीय गृहस्थ और पारिवारिक जीवन की कहानियांः** कमलादेवी चौधरी, उषादेवी, होमवती देवी, व्यथित हृदय।
7. **हास्यरस की कहानियांः** अन्नपूर्णानंद, हरीशंकर शर्मा, भगवतीचरण वर्मा, उपेंद्रनाथ अश्क, राधाकृष्ण, अमृतलाल नागर।
8. **सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विकास की कहानियांः** राहुल सांकृत्यायन, उषादेवी मित्रा, कमलादेवी चौधरी।
9. **वैज्ञानिक कहानियांः** यमुनादत्त, उषादेवी, पहाड़ी।
10. **शिकारी जीवन की कहानियांः** श्रीराम शर्मा, रघुवीर सिंह।

जैनेंद्र की कहानियां और उनकी विशेषताएंः

उत्कर्ष कालीन कहानीकारों में जैनेंद्र कुमार का प्रमुख स्थान है। ये उपन्यासकार के साथ सफल तथा मौलिक कहानीकार भी है। इन्होंने लगभग 200 कहानियां लिखी हैं जिसमें फांसी, दो चिडियां, परख स्पर्धा, वातायन, एक रात, नीलम देश की राजकन्या आदि है। ये लगभग सन् 1928 से लगातार कहानी–रचना करते चले आ रहे है। इन्होंने सन् 1931 तक केवल 16, 17 कहानियां लिखी थीं, जिनमें

से 13 प्रकाशन वातायन में सन् 1931 में हुआ। उत्कर्षकाल के प्रथम उन्नायकों में जैनेंद्र कुमार मुख्य हैं जिन्होंने अपनी कहानियों द्वारा हिन्दी की विकास कालीन कहानियों की परम्परा को नवीन मोड़ दिया। यो तो इनकी कहानियों में व्यक्ति, परिवार, वर्ग तथा समाज का यथार्थ जीवन चित्रित हुआ है किन्तु इनके पीछे कहानीकार का दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण ही प्रमुख स्थान धारण किये हुए है।

सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्सायन अज्ञेय की कहानियाँ और उनकी विशेषताएँः

अज्ञेय हिन्दी के प्रतिष्ठित कथाकारों में से है। इनके तीन कहानी संग्रह विपथगा, परम्परा, कोठरी की बात–हिन्दी जगत में उपलब्ध है। ये कवि, आलोचक, उपन्यासकार तथा कहानीकार है। इनके जीवन का अधिकांश भाग जेल में बीता है जहां रहकर इन्होंने अपना सारा समय साहित्य सेवा में लगाया है। इनकी प्रकाशित कहानियों की संख्या 41 बतलाई जाती है जिनमें इनकी मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का प्रदर्शन हुआ है। कहा जाता है कि इनकी पहली कहानी सन् 1924 की स्काउट्स पत्रिका सेवा में प्रकाशित हुई है।

इनकी सामाजिक कहानियों में भारतीय समाज की दरिद्रता, पारिवारिक विषादमय वातावरण, गृहस्थ जीवन में पति–पत्नी का प्रेम आदि विषयों की अनेक रूपता है। अनाथ और दीन बच्चों के दुःखित जीवन (हरसिंगार) दरिद्र परिवार के दैनिक जीवन (रोज दुःख और तितलियां, शांति हंसी थी) तथा पति–पत्नी के प्रेम की व्याख्या (मंसो), इनकी सामाजिक कहानियों में व्यापकता के साथ मिलती है। इनकी इन कहानियों के विषय सामान्य तथा समकालीन हैं।

इलाचंद जोशी की कहानियां और उनकी विशेषताएंः

हिन्दी के वर्तमान कहानीकारों में इलाचंद्र जोशी का नाम प्रसिद्ध

है। इनके कई कहानी संग्रह–मोंपासा की कहानियों का हिन्दी अनुवाद (इण्डियन प्रेस लिमिटेड प्रयाग) ऐतिहासिक कथाएं (हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग) दिवाली और होली (हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग) धूप–लता (नवल किशोर प्रेस बुक डिपो, हजरतगज्ज, लखनऊ) आदि निकल चुके हैं। इनकी प्रसिद्ध कहानियों में मेरी डायरी, रक्षित धन का अभिशाप, रोगी, एक शराबी की आत्मकथा, चौथे विवाह की पत्नी, आदि है। इनकी सर्वप्रथम कहानी 'सजनवा' हिन्दी गल्पमाला में सन् 1920 में निकली जिसकी रचना द्वारा इन्होंने हिन्दी मनोवैज्ञानिक कहानियों को आरंभ किया। वर्गीकरण की दृष्टि से इनकी अधिकांश कहानियां मनोवैज्ञानिक एवं विषय की दृष्टि से सामाजिक कहानियों के अंतर्गत आती है।

इलाचंद्र जोशी व्यक्ति और समाज के हासोन्मुख जीवन का विश्लेषण और उसकी निरपेक्ष आलोचना करने वाले कहानीकारों में माने जाते है। मध्यवर्गीय समाज का नग्न–चित्रण और व्यक्ति के एकान्तिक भावना पर बौद्धिक प्रहार इनकी कहानियों की विषयवस्तु की विशेषताएं हैं। 'मेरी डायरी' पृष्ठ में जीवन का विश्लेषण और अध्ययन किया गया है। और दिनचर्या का वर्णन करते हुए इसमें बतलाया गया है कि संसार की प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशील है तथा असत्य है। अतएव उसका जीवन भी असत्य है। 'मिस्त्री' कहानी में स्त्री जाति से असंतुष्ट एक व्यक्ति की कथा है जिसकी यह दृढ़ धारणा है कि स्त्री स्वभावतः कंजूस होती है, वह अपने प्रति किए गए उपकार को शीघ्र भूल जाती है तथा उसकी दृष्टि में छोटे बड़े की लज्जा नहीं होती। इलाचन्द्र जोशी की कहानियों में व्यक्ति और समाज की भिन्न–भिन्न समस्याओं का विश्लेषण और बौद्धिक विवेचन मिलता है।

यशपाल की कहानियां और उनकी विशेषताएंः

समाजवादी यथार्थवाद के कहानीकारों में यशपाल का विशेष

स्थान है जिन्होंने लगभग 100–125 कहानियों की रचना की है। इनकी कहानियों के कई संग्रह–पिंजड़े की उड़ान, ज्ञानदान, वो दुनिया, चक्कर–क्लब, तर्क का तूफान, अभिशप्त, भस्मावृत चिंगारियां, फूलों का कुर्ता, धर्मयुद्ध निकल चुके हैं जिनका प्रकाशन हो चुका है। धर्मयुद्ध इनकी 1947 के बाद की रचना है, इनकी बहुत सी कहानियां रानी, माया, मनोहर कहानियां, हिन्दुस्तान, आज, विश्वामित्र आदि पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। इनकी कहानी के विषय सामाजिक, ऐतिहासिक, धार्मिक तथा पौराणिक, प्रतीकात्मक, हास्य तथा व्यंग्यप्रधान तथा विविध विषयक पर आधारित है।

प्रेतछाया

महाश्वेता देवी ने प्रेतछाया कहानी में माधवी का मन ही मन विजय से प्रेम करना और विजय द्वारा स्पष्ट प्रेम से इंकार कर देना और उसमें किसी प्रकार की रुचि न लेना आदि बातों को उजागर करते हुए लिखा है किः

लाचार माधवी को जरा और बेशर्म होना पड़ा,' फिर भी .....मेरी बात पूरी नहीं हुई, विजय! मुझे इस ब्याह में दिलचस्पी नहीं। फिलहाल, अगर तुम मुझे सिर्फ आश्वासन भर दे दो, तो.....'

विजय ने सपाट लहजे में जवाब दिया, 'तुमसे मेरा परिचय भर है, बस! इससे बाहर, तुममें मेरी कोई दिलचस्पी नहीं।'

आकर्षक व्यक्तित्व के कारण कॉलेज में सुन्दर युवती माधवी मन ही मन विजय से प्रेम करने लगी। परन्तु विजय को माधवी में कोई रुची नहीं थी। लेकिन माधवी अपने आपको नहीं रोक पाई और एक कदम आगे बढ़कर उसने अपने प्रेम का प्रस्ताव विजय के समक्ष रखा। विजय ने बिना बनावटी बात किये सीधे तौर पर माधवी को इंकार कर दिया और कहा कि तुम पर मेरी कोई दिलचस्पी नहीं हैं। फिर भी माधवी केवल स्पष्ट आश्वासन नहीं मांग रही थीं लेकिन विजय ने कहा तुमसे मेरा परिचय भर है और औरतों के बारे में मेरी स्पष्ट मंशा है कि वह केवल संतान उत्पत्ति की जरूरत है। इसके

अलावा महिलाओं की कोई अहमियत नहीं है। इस विचार को सुनने के बाद माधवी छोटा सा मुँह लेकर विजय की इस हरकत के लिए उसे कोसते हुए सदा के लिए विजय के जीवन से चली गयी।

महाश्वेता देवी आगे प्रेतछाया कहानी में लिखती है कि:

उन्हीं दिनों विजय के बापू का निधन हो गया। विधवा मां ने, छोटे–छोटे बच्चों का मुंह देखते हुए, विजय से आग्रह किया,'अब तू कोई नौकरी खोज, बेटा ! गिरस्ती चलाना मुश्किल हो रहा है।'

लेखिका ने प्रेतछाया कहानी के माध्यम से विजय द्वारा सपनो की दुनिया में खो जाने का जिक्र करते हुए बताया है कि:

विजय दास कॉलेज की पढ़ाई पूरी कर जब बाहर आया तो उसका उच्च सामाजिक लोगों के मध्य उठना–बैठना था। ये वे लोग थे जिनका समाज से कोई लेना देना नहीं था। उसने अपने आप को ऐसे ही लोगों के बीच व्यस्त कर लिया था। इसी बीच परिवार का अकेले भरण पोषण करने वाले पिता का निधन हो गया। विधवा हुई माँ विजय से दो छोटे भाईयों सहित परिवार का खर्च चलाने के लिए नौकरी करने की विनंती करती है परन्तु सपने की दुनिया में खो चुके विजय को यह मंजूर नहीं था। विजय के इस रवैये के बाद दोनों छोटे भाई नौकरी करने लगे।

लेखिका का युवा वर्ग को संदेश देने का प्रयास है कि, दुविधाओं में पढ़कर गुमराह हुए बिना अपने भविष्य को लेकर गंभीर रहना चाहिए अपनी रूचि के अनुरूप कैरियर के निर्माण को लेकर सचेत रहना चाहिए। भटकाव की परिणीति से विजय जैसा सुन्दर सुशील, ऊर्जावान युवा असफल होकर आत्महत्या के लिए मजबूर हो जाता है। अतः अवसर को बिना गवाये बेहतर विकल्प तलाशते हुए भविष्य का निर्माण करना चाहिए।

छुक–छुक, छुक–छुक आ गेल गाड़ी.....

महाश्वेता देवी ने इस कहानी में महाराष्ट्र के कोल्हाटी समाज की कुरीती को उजागर करते हुए उल्लेखित किया है कि यह समाज

अपने परिवार की ज्येष्ठ पुत्री को नीलाम कर होने वाली आमदनी से दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। नीलामी एक बार नहीं पुत्री की जवानी बरकरार रहते हुए कई बार उसके पिता मां एवं भाई द्वारा की जाती है। भले ही बाजार में नीलाम होने वाली युवती की इच्छा के खिलाफ हो।

छाबू, अब छाबू नहीं थी, मंदा हीरामन थी। अब वह जगमगाने लगी थी। किसी में इतनी हिम्मत नहीं थी कि उसकी छेरा उतराई के लिये बोली लगाता, अब वह जवानी के ऊफान में उमड़ती–बहकती, तीस साल बर्बर–आदिम औरत थी।

छाबू को मंदा हीरामन बनाने के लिए परिजनों द्वारा उसके लाख विरोध के बावजूद भी केवल चौदह वर्ष की उम्र में जब सब बच्चों के साथ उसके आंगन में मोहल्ले के अन्य बच्चों के साथ खेलने–कूदने के दिन थे, नीलाम कर दिया। तब उसका स्कूल जाने का समय था, और छुट्टियों में रेल गाड़ी पर चढ़कर अपने ननिहाल में मौज मस्ती करने का समय था। उस वक्त उसकी मर्जी के खिलाफ पुरानी रूढ़िवादी परम्परा को जारी रखते हुए इस कोल्हाटी परिवार में उसे नीलाम करने का निर्णय लिया। छाबू की खरीदारी के लिए दो बोलीदार ने बोली लगाना शुरू ही की थी। तभी उसके पहले छाबू के रूप को निखारने के लिए आकर्षक गहनों से एवं चमकदार वस्त्रों से उसे सजाया गया ताकि उसके यौवन को प्राप्त करने वाला व्यक्ति उसके माता पिता को ज्यादा से ज्यादा रुपये अदा कर सके। अन्ततः जब बोली तीस हजार के करीब पहुंची तो उसके पिता ने अपने बेटे के व्याह का हवाला दिया। साथ ही मकान बनाने, जमीन खरीदने और सैकड़ो खर्च गिनाते हुए अपने बेटी की इज्जत के दाम के रूप में पैतीस हजार रुपये की मांग की। यह अजीब दृश्य कोल्हाटी समाज में सदियों से चला आ रहा था। जब बचपन में खेलने–कूदने की उम्र में लड़की को उसके ही पिता द्वारा रुपये की लालच में एक अधेड़ उम्र के धनाड़य व्यक्ति को बेचा जा रहा था।

खरीदार की वासना की शिकार छाबू ने घायल अवस्था में समीप के नाले में छलांग लगाकर आत्महत्या की कोशिश की थी परन्तु गर्मी के मौसम के कारण नाला भी उसका साथ नहीं दे पाया। अचेत अवस्था में छाबू को नाले से बाहर निकाला गया। इस पर पुरानी मंदा हीरामन कटाक्ष करती हुई कहती है कि छाबू कितनी मूर्ख है जेठ के महिने में आखिर नाले में कितना पानी होता है जो उसमे डूब मरती। नाले से बाहर निकालने के बाद छाबू की बेहाशी टूटती है। उस का इलाज कर होश में लाया जाता है और इस घटना क्रम को देखने के लिए सारा समाज एकत्रित होता है। एक संवाद के माध्यम से स्थिति को हम भली प्रकार समझ सकते हैं:

क्यों ?अब फिर कोई ग्राहक पकड़कर ला रही हो?'

उसके इस सवाल का जवाब, बप्पा ने दिया, 'बे–शक! अभी तो तुझे कई–कई बार.....'

'क्यों? क्यों?'

'यह कोल्हाटी समाज है, छाबू! जिसके घर में ऐसी सुन्दरी बेटी हो, उसके मां–बाप–भाई कोई कामकाज नहीं करते।'

छाबू के माता पिता द्वारा पहली बार छेरा उतराई की रस्म छाबू के विरोध के बाद भी की जाती है। छाबू के जिस्म को बेचकर हजारों रूपये प्राप्त करने के बाद अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति पूरे परिवार द्वारा की जाती है। छाबू के जिस्म का खरीदार वह व्यक्ति था जिसकी खुद की बेटी छाबू के उम्र की थी। एक बार नीलामी के बाद भी उसके माता पिता का लालच खत्म नहीं होता। अपने ही गर्भ को नौ माह तक रखने वाली माँ छाबू को दुबारा बेचकर कमाई करने के लिए आमदा थी। इसलिए उसके शरीर को सौन्दर्यवान बनाने के लिए कई जतन करती। यहाँ तक की पहले छेरा उतराई से जन्मी सन्तान का पालन स्वयं करने लगी। नियम एवं परम्पराओं का हवाला देकर छाबू की माँ उसे व उसकी संतान को प्रेम से वंचित रखती। छाबू द्वारा बेचे जाने के सवाल करने पर उसकी ही कमाई पर पलने वाला बेशर्म पिता उत्तर देते हुए कहता है कि कोल्हाटी समाज में जिस माता पिता

की सुन्दर कन्या हो उसका परिवार अपनी ही बेटी को बेचकर होने वाली आमदनी से परिवार चलता है भले ही उसको अपनी बेटी को बाजार में बार–बार नीलाम ही क्यों न करना पड़े। समाज के जिस हालात का वर्णन महाश्वेता देवी जी करती है उसे, एक कविता से हम जीवित होते देख सकते हैं।

डॉ हनुमंत नायडू ने देश के सामाजिक जीवन की मर्यादाओं के टूटने तथा मूल्यों के विखंडित होने के दर्द को अपनी इन पंक्तियों में बया करते हुए कुछ इस तरह से लिखा है किः

"साड़ियाँ खींची गई हैं, आदमी आहत हुआ है
इस धरा पर अब कहीं, कोई महाभारत हुआ है,
सभ्यता की लाश जग को खून में डूबी मिली है
नाम घायल जिन्दगी का डर हुआ, दहशत हुआ है
देवता गीता सुना निश्चिंत हो चुपचाप बैठे
भीड़ में अभिमन्यु ही हर बार क्षत–विक्षत हुआ है।
जल गया मौसम, हवाएँ जल गई जीवन जला है।
बस्तियों में जब कहीं भी सांप का स्वागत हुआ है
मेमनों से छिन गया अधिकार जीने का सदा ही
भेड़ियों का जब किसी भी देश में बहुमत हुआ है।
जिस गली, जिस द्वार पहुँचा, लोग ठुकराते रहे हैं
प्यार लावारिस भटकता, बिन पते का खत हुआ है
मूल्य टूटे, नीतियाँ नंगी हुई चिंता किसे है
वे सदा कहते रहे जो कुछ हुआ विधिवत हुआ है।"

इस कहानी का अंत नहीं है अब भी युवतियों को बेचने खरीदने का कारोबार जारी है और आन्दोलन भी अर्थात् कोल्हाटी समाज में यौवन अवस्था में प्रवेश करने वाली हर युवती भी अपना घर बसाने का सपना हदय में संजोये रखती है परन्तु युवतियों की इच्छाओं के विपरित जनम के साथी उसके माता–पिता एक बार में ही उसके सपनो के घर को नष्ट कर देते है। कई–कई बार शरीर की नीलामी से पीडित युवतियों की आत्मा भी कांप जाती है। अंत में कहानी की

मुख्य पात्र समाज सुधारक आन्दोलनकर्त्ता की मदद से इस कु–प्रथा के खिलाफ अभियान चलाती हे। इस आन्दोंलन में कई–कई परेशानियों का सामना करने के बावजूद वह नहीं हटती है और वह सफल होती है ताकि युवास्था की दहलीज पर प्रथम कदम रखने वाली युवतियों की नीलामी को रोका जा सके।

————::::————

अध्याय 04 कहानियों का वर्गीकरण

कहानी क्या हैं ? इस प्रश्न का उत्तर केवल कहानी की परिभाषा देना पर्याप्त नहीं होगा। क्योंकि प्रवाहमान जीवन की तरह 'कहानी' में भी, जो जीवन की किसी मार्मिक घटना, मनोगत भावना, अनुभव या सत्य का चयन और कलात्मक रीति से संक्षेप में प्रतिबिम्बित करती हैं, इसमें इतनी विविधता आ गई हैं कि उसे किसी सरल परिभाषा में बताना एवं उसकी सीमा निर्धारित करना असम्भव है। कहानी की सबसे बड़ी परिभाषा यह है कि वह 'कहानी' है गल्प नहीं हैं, किसी घटना का चित्रण नहीं है, उसे रेखाचित्र, उपन्यास और नाटक की भी संज्ञा नहीं दे सकते। कहने का तात्पर्य यह हैं कि जीवन में जो घटनाएँ घटित होती हैं, उनका यथा–तथ्य सिलसिलेवार विवरण ही कहानी नहीं बन जाता, लेखक को इस विवरण में से सार्थक प्रसंगो का चयन करके उन्हें कहानी के रुप में ढ़ालना पड़ता हैं। जिससें मनुष्य प्रेरणा लेकर सामाजिक सुधार कर सके।

कहानी मात्र घटना या वार्तालाप का ज्यों–का–त्यों अंकन नहीं हैं, न केवल चुटकला है कि जिसे सुना दिया और हास्य का उद्रेक हो गया, क्योंकि चुटकले में कथा–वस्तु का जटिल उद्‌घाटन और नाटकीय प्रभाव सम्भव नहीं है। कहानी रेखाचित्र भी नहीं है, क्योंकि रेखाचित्र में किसी चित्र का अंकन ही प्रधान होता है। कहानी उपन्यास भी नहीं है क्योंकि उपन्यास का क्षेत्र समग्र जीवन है, कहानी मनुष्य के समग्र जीवन में से केवल किसी एक मार्मिक घटना क्रम को ही अपना विषय बनाती है। इसी प्रकार कहानी नाटक नहीं है, यद्यपि उसमें नाटकीय तत्व होते हैं। किसी निर्णायक घटना–सूत्र की ओर कहानी की कथा भी अनुवादित होती है। कहानीकार कथा को अपने उद्देश्य के अनुरुप जहाँ चाहे मोड़–तोड़ सकता है और घटनाओं और पात्रों को वातावरण की पृष्ठभूमि के सूक्ष्म प्रभावों से जैसे चाहे वैसे उभार सकता है।

सन् 1911–16 से लेकर आज तक हिन्दी में सहस्त्रों कहानियाँ लिखी जा चुकी हैं। हमेशा से ही हिन्दी पाठकों की रुचि स्वाभाविक रुप से कहानी पढ़ने की ओर रही हैं, दैनिक साप्ताहिक और मासिक पत्र–पत्रिकाओं में कहानियाँ हमेशा से ही प्रकाशित होती रही हैं। सैकड़ों लेखकों की कहानियों के संग्रह प्रकाशित हो चुके है। कहानी–साहित्य के इस विपुल भण्डार में यदि अधिकतर केवल सस्ते मनोरंजन के लिए लिखी गई अनगढ़ और तत्वहीन रचनाएँ हैं तो सैंकड़ो कहानियाँ ऐसी भी हैं जिस पर किसी भी भाषा के साहित्य को गर्व हो सकता है। सैंकड़ो कहानीकार जिन्होंने अपनी रचनाओं से हिन्दी कहानी को विश्व की अन्य उन्नत भाषाओं के कहानी साहित्य की सी प्रौढ़ता और समृद्धि प्रदान की है। प्रथम कोटि के ऐसे कुछ कहानीकार हैं जिन्होंने अपनी असाधारण रचनात्मक प्रतिभा से हिन्दी कहानी को विकास की अभिनव दिशाओं में मोड़ा है या उसे नई दृष्टि, जीवन शैली और क्षेत्र प्रदान किये हैं। ऐसी सर्वांगीण प्रतिभाओं में जयशंकर प्रसाद, मुंशी प्रेमचन्द, यशपाल आदि हैं। जिन्होंने विकसित और निर्धारित की हुई कथावस्तु जीवन शैली और टेकनीक की सीमाओं में बंधकर ही कहानियों की रचना की हैं। ऐसा भी हुआ है कि किसी–किसी ने इन सभी पद्धतियों को अपनाया है, किन्तु ऐसा उन्होंने ही किया है जिन्हें साहित्य की उपलब्धि और कहानी के क्षेत्र में स्वतन्त्र व्यक्तित्व बनाने में समय लगा। ऐसे कहानीकारों में चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक, इलाचन्द्र जोशी, उपेन्द्रनाथ अश्क, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' आदि हैं। हिन्दी कहानी का अध्ययन इन सब कहानीकारों की रचनाओं का अध्ययन हैं। अन्य लेखकों की प्रकाशित कहानियों में से यदि संकलन किया जाये जो दर्जनों कहानियाँ निकाली जा सकती हैं, और यह कम गर्व की बात नहीं है।

जयशंकर प्रसाद, मुंशी प्रेमचन्द, यशपाल आदि कहानी के राजपथों के निर्माता है जो अपने पद चिन्हों की एक अलग सी पगडण्डी बनाते चलते है, किन्तु राजपथ का निर्माण करने वाले की महत्ता अलग है।

अतः हिन्दी कहानी के विकास को समझने के लिए प्रतिभावान् कलाकारों की जीवन–दृष्टि और रचना–शैली का विवेचन और उनके कृतित्व के सन्दर्भ और पृष्ठभूमि में रखकर अन्य कहानीकारों की रचनाओं को भी जांचने की जरुरत है। इन कहानीकारों का वर्गीकरण उनकी रचना–शैली और विचार–प्रवृत्ति में कोई भेद नहीं है, किन्तु अन्य कहानीकार भी सर्वथा एक ही शैली या प्रवृत्ति का अनुकरण करने वाले नहीं है। पूरी तरह अनुकरण करने वाले कहानीकार कम ही हैं। उन्होंने केवल हिन्दी के इन शीर्षस्थानीय कहानीकारों से ही प्रभाव ग्रहण नहीं किये, बल्कि बँगला के रविन्द्रनाथ टैगोर, शरत्चन्द और फ्रांस के मोपासाँ जोला, रुस के तुर्गनेव, अंग्रेज के टॉमस हार्डी तथा अनेक दूसरे आधुनिक और वर्तमान कहानीकारों से भी प्रभाव ग्रहण किये हैं तथा हिन्दी कथा–साहित्य को अपने देश–काल की परिस्थितियों के अनुरुप नई–नई दृष्टियों से निखार, सँवार देने की चेष्टा की हैं। इसमें वे कभी सफल हुए हैं, तो कभी असफल। उन्होंने कहानी की रचना–शैली गड़ने में मदद की है। अतः ऐसे निश्चित वर्गीकरण की बात इस स्वच्छन्द वातावरण में केवल आलोचना की शास्त्रीय रीति–पद्धत्ति का मोह प्रकट करती है।

कहानी का स्वरुप

कहानी एक गद्य विधा हैं। इसमें समग्र जीवन का चित्रण न होकर किसी जीवनांश या घटना विशेष का चित्रण किया जाता हैं। कहानी का प्राचीन नाम संस्कृत में 'गल्प' या 'आख्यायिका' मिलता हैं, लेकिन आधुनिक युग में कहानी के नाम से जिन रचनाओं का अवतरण हुआ वे संस्कृत साहित्य में गल्प या आख्यायिका के नाम से मिलने वाली रचनाओं से अलग हैं। इसलिए कहा जाता है कि आजकल की हिन्दी कहानियाँ है तो भारत की पुरानी कहानियों की ही संतति किन्तु विदेशी संस्कार लेकर आयी है।

नये प्रकार की कहानी का जन्म वर्तमान युग की आवश्यकताओं में हुआ। यह भी स्वीकार करने में आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि यह विधा अपने वर्तमान रुप में, अंग्रेजी साहित्य से आयी। कहानी को

पश्चिम में शार्ट स्टोरी कहा जाता है। पाश्चात्य् देशों में 'एडगर एलिका पो' आधुनिक कहानी के जन्मदाताओं में प्रमुख माने जाते हैं। उन्होंने कहानी की परिभाषा देते हुए कहा है कि, "छोटी कहानी एक ऐसा आख्यान है, जो इतना छोटा है कि वह एक बैठक में पढ़ा जा सके और जो पाठक पर एक ही प्रभाव उत्पन्न करने के उद्देश्य से लिखा गया हो।" वह स्वतः पूर्ण होती है।

हडसन के अनुसार, "लघु कहानी में केवल एक ही मूल भाव होता है। उस मूल भाव का विकास तार्किक निष्कर्षो के साथ लक्ष्य की एकनिष्ठता से सरल स्वाभाविक गति से किया जाना चाहिए।"

एलेरी के अनुसार, "वह घुड़दौड़ के समान होती है। जिस प्रकार घुड़दौड़ का आदि और अन्त महत्वपूर्ण होता है उसी प्रकार कहानी का आदि और अन्त ही विशेष महत्व का होता है।"

उन सभी परिभाषाओं में कहानी की संक्षिप्तता और एक ही मूलभाव के विकास को आवश्यक माना गया है, तथा उसके आरम्भ एवं अन्त को महत्वपूर्ण कहा गया है। भारतीय विद्वानों के कहानी सम्बंधी दृष्टिकोण पर–बाबू श्याम सुन्दर दास का मत है कि "आख्यायिका एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को लेकर नाटकीय आख्यान है।" इस प्रकार उन्होंने कहानी में नाटकीयता पर अधिक बल दिया है किन्तु निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को वे आवश्यक मानते है। मुंशी प्रेमचन्द ने कहानी पर विचार करते हुए कहा हैं कि," कहानी (गल्प) एक रचना है जिसमें जीवन के किसी एक अंग या मनोभव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है। उसके चरित्र, उसकी शैली तथा कथा विन्यास सब उसी एक भाव को पुष्ट करते है।" मुंशी प्रेमचन्द उस कहानी को सर्वोत्तम मानते हैं, "जो किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर आधारित हो।"

बाबू गुलाब राय के अनुसार, "छोटी कहानी एक स्वतःपूर्ण रचना है जिसमें एक तथ्य या प्रभाव को अग्रसर करने वाली व्यक्ति केन्द्रित घटना या घटनाओं के आवश्यक परन्तु कुछ–कुछ अप्रत्याशित

ढ़ंग से उत्थान पतन और मोड़ के साथ पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने वाला कौतूहलपूर्ण वर्णन हो। सच तो यह है कि कहानी को किसी परिभाषा में बांध पाना इतना आसान नहीं हैं।

कहानी के कुछ लक्षण बताये गये है जो इस प्रकार हैंः

1. कहानी आकार में छोटी होनी चाहिए। एक घंटे या एक बैठक में पढ़ी जा सके।
2. कहानी में जीवन के एक तथ्य का, एक संवेदना अथवा एक स्थिति का प्रभावपूर्ण चित्रण होता है।
3. कौतूहल और मनोरंजन कहानी का आवश्यक गुण है।
4. कहानी में जीवन का यथार्थ होता है। वह यथार्थ ऐसा हो जो कल्पित होते हुए भी सच्चे लगे।
5. कहानी में तीव्रता और गति आवश्यक है।
6. कहानी में एक मूल भावना का विस्तार, आख्यानात्मक शैली में होता हैं, कथातत्व की प्रधानता होती है।

इन सभी लक्षणों को ध्यान मे रखकर यह कहा जा सकता है कि "कहानी कथा तत्व प्रधान ऐसा खण्ड़ प्रबन्धात्मक गद्य रुप है, जिसमें जीवन के किसी एक अंश, एक स्थिति या तथ्य का उत्कृट संवेदना के साथ स्वतःपूर्ण और प्रभावशाली चित्रण किया जाता है। इसमें साहित्यिक गद्य के रुप में गठन, तीव्रता और प्रभावान्विति का विशेष ध्यान रखा जाता है।"

हिन्दी कहानीकारों का संक्षिप्त परिचय

जयशंकर प्रसाद (1891–1937)

जयशंकर प्रसाद की कहानियों के पाँच संग्रह उपलब्ध हैं–जिसमें प्रमुख है छाया, प्रतिघ्वनि, आकाशदीप, आँधी और इन्द्रजाल। उनकी आरंभिक कहानियों पर बँगला कहानियों का प्रभाव अवश्य पड़ा है, किन्तु बाद में उन्होंने अपनी स्वतन्त्र शैली का विकास किया। अपने मूलतः रोमांटिक दृष्टिकोण के कारण जयशंकर प्रसाद ने अपनी

कहानियों में मानव हृदय के अंतः सौन्दर्य को चित्रित करना चाहा है। इससे अधिक कोई स्थूल प्रयोजन उनकी कहानियों में नहीं मिलता। व्यक्ति के साधारण जीवन में जो–कुछ मानवीय और असाधारण है, जहाँ निश्छल प्रेम और करुणा प्रवाहित है, उसको उभारकर सामने लाने का अटूट प्रयास किया है। वैरागी, भिखारिन, आँधी, परिवर्तन, चूड़ीवाली, आदि उनकी ऐसी ही कहानियाँ हैं। उनकी कुछ कहानियाँ ऐतिहासिक भी हैं, जैसे नूरी, सालवती, ममता आदि। परन्तु वह ऐतिहासिक कम और काल्पनिक आधिक हैं। प्रसाद जी से मिलती–जुलती भावना–प्रधान गद्य–काव्यात्मक शैली में राय कृष्णदास, विनोदशंकर व्यास, गोविन्द वल्लभ पन्त आदि ने भी कहानियाँ लिखी हैं। इनमें राय कृष्णदास सबसे अधिक सूक्ष्म भावचेतना के कलाकार हैं। आपकी कहानियों के दो संग्रह सुधांशु और अनाख्या उपलब्ध हैं। इनकी कहानियों में धार्मिक तथा ऐतिहासिक सभी प्रकार की कहानियाँ लिखी हैं। कहानियों में प्रयोजन भी निहित रहता हैं, जिससे पाठक को रंगीन चित्रों से अधिक भी कुछ हाथ लगता है। उनकी गहूला, प्रसन्नता की प्राप्ति, नर–राक्षस, भय का भूत आदि ऐसी ही श्रेष्ठ कहानियाँ हैं।

मुंशी प्रेमचन्द (1880–1936)

मुंशी प्रेमचन्द हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासकार ही नहीं, सर्वश्रेष्ठ कहानीकार भी थें। जिन दिनों भारत में सम्राट् की सत्ता ही सर्वोपरि थी, उन दिनों हिन्दी के श्रद्धालु और कृतज्ञ पाठकों ने उपन्यास क्षेत्र की इस अद्वितीय विभूति को उपन्यास सम्राट् की उपाधि दी। फिर कहानी के पीछे भी सम्राट् जुड़ने लगा। मुंशी प्रेमचन्द ने जयशंकर प्रसाद से पहले ही कहानियाँ लिखनी आरम्भ कर दी थीं लेकिन हिन्दी में लिखी उनकी प्रथम कहानी 'पंच–परमेश्वर' सन 1916 में ही प्रकाशित हुई। इससे पहले वह उर्दू में लिखते थे, और उर्दू में ही उनकी पाँच कहानियों का संग्रह 'सोजे–वतन' सन् 1907 में छपा था जिसे सरकार ने जब्त करके सारी कापियाँ जलवा दी थीं। उनकी उर्दू से अनुवादित कहानियाँ का पहला संग्रह 'सप्त सराज' के नाम

से सन् 1915 में छपा। इसके उपरान्त मुंशी प्रेमचन्द हिन्दी में ही लिखने लगे और अगले बीस वर्षो में उन्होंने लगभग 300 कहानियाँ लिखीं, जो लगभग बीस–पच्चीस संग्रहों में प्रकाशित हुई। अब उनमें से लगभग डेढ़ सौ कहानियाँ 'मानसरोवर' के आठ भागों में संग्रह कर ली गई हैं। मुंशी प्रेमचन्द ने यदि कहानी छोड़कर और कुछ नहीं लिखा होता तो भी भारतीय साहित्य में उनका स्थान सुरक्षित रहता।

मुंशी प्रेमचन्द में पीड़ित–दलित जनता के प्रति सहानुभूति और करुणा, गम्भीर देशानुराग और स्वतन्र्तता की आदर्शोन्मुख भावना थी। भारतीय जनता के मनोगत भावों को पहचान कर अभिव्यक्ति दे सकते थे। उनके जीवनानुभव का क्षेत्र भी विशाल था। उनके स्वर में प्रौढ़ता और जागृत विवक था। फिर भी प्रेमचन्द जीवन पर्यन्त एक जिज्ञासु बने रहे। उन्होंने अपने अनुभव और विचारों को कभी रुढ़ नहीं होने दिया, यद्यपि प्रारम्भिक काल की प्रवृत्तियाँ भी अन्त तक थोड़ी बहुत चलती रहीं। आर्यसमाजी समाज–सुधारक से बढ़ते–बढ़ते वह अपने अन्तिम दिनों में वर्ग–संघर्ष की अनिवार्यता को पहचानने लग गए थे और पूँजीवादी समाज और संस्कृति के बारे में उनके मन में कोई भ्रम या संदेह नहीं था। उनकी अपनी प्रगति की छाप उनकी कहानियों पर भी अंकित होती गई। मूलतः मुंशी प्रेमचन्द एक यर्थाथवादी कलाकार हैं, अर्थात् जीवन के यथार्थ–सत्य की खोज करना और उसका कलात्मक आकलन करना ही उनका उद्देश्य था। उन्होंने हर वर्ग और सामाजिक स्थिति के लोगों की कहानियाँ लिखी हैं, जिसमें सहज सरल शैली का प्रयोग किया है, कहानी के हर रुप–प्रकार का उपयोग किया है, उन्होंने घटना–प्रधान, चरित्र–चित्रण, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक–सभी प्रकार की कहानियाँ लिखी हैं।

पाण्डेय बेचौन शर्मा उग्र

पाण्डेय बेचौन शर्मा उग्र नई भाषा–शैली, क्रान्तिकारी भावना और राजनीतिक चेतना लेकर सन् 1922 में हिन्दी–कहानी में आये। इनके आगमन की तुलना किसी ने उल्कापात तो किसी ने धूमकेतु के उदय

जैसी आकस्मिक घटनाओं से की है। कोई तूफान और बवंडर का नाम भी लेते हैं। वास्तविक बात यह है कि उग्र एक विद्रोही कलाकार हैं। उग्र का विद्रोह राजनीतिक और सामाजिक विचारों और रूढ़ियों के विरुद्ध था, इसीलिए उन्होंने हिन्दी के सभी पाठकों को लेकर उन दिनों खूब लिखा और झकझोरा। देश प्रेम, त्याग, हिन्दू–मुस्लिम एकता आदि राजनीतिक विषयों को अपनी कहानियों में सबसे पहले तीव्र कलात्मक अभिव्यक्ति दी। उन्हें जिस कारण कुछ लोगों ने घासलेटी (अश्लील) साहित्य की रचना का आरोप लगाकर साहित्य–जगत् से बहिष्कृत करना चाहा, वह राजनीतिक कहानियाँ न थीं, बल्कि उनकी वह सामाजिक कहानियाँ और उपन्यास थे जिनमें उन्होंने समाज में फैली कुरीतियों और भ्रष्टाचारों की वीभत्सता का पूरा यथातथ्य चित्रण किया था। वे सन् 1922 से 1933 तक उग्र हिन्दी पाठकों के सर्वाधिक प्रिय कहानीकार और लेखक बने रहे। किन्तु कुछ समय बाद पाण्डेय बेचेन शर्मा उग्र की नई कहानियों का संग्रह 'सनकी अमीर' प्रकाशित हुआ। पूँजीवादी–सामन्तवादी आक्रोश और घृणा इनके मन में थी, इनके कहानियों में वह उतनी ही आवेगमयी, ओजपूर्णशैली और कलात्मक चरित्र–चित्रण में व्यक्त हुई है। इनके पहले कहानी–संग्रह दोजख की आग, चिंगारियाँ और बलात्कार हैं।

जैनेन्द्र कुमार

जैनेन्द्र कुमार हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कहानी लेखकों में से एक हैं। वह मुंशी प्रेमचन्द से ही द्वितीय समझे जाते हैं। कुछ लोगों का अनुमान है कि जैनेन्द्र ने हिन्दी–साहित्य में शरत्चन्द्र की क्षतिपूर्ति की है। जैनेन्द्र कुमार ने बाह्य और आन्तरिक जीवन के उभय पक्ष को पूरी मनोवैज्ञानिक सच्चाई के साथ समन्वित करने की कोशिश की है और हिन्दी–कहानी को एक नई अन्तर्दृष्टि संवेदनशीलता और दार्शनिक गहराई प्रदान की है, और इस प्रकार हिन्दी–कहानी के स्तर को भी ऊँचा उठाया है। आधुनिक जीवन की जटिलता उनकी कहानी में भी प्रतिबिम्बित हुई है। उन्होंने असाधारण परिस्थितियों में पड़े असाधारण

व्यक्ति की मानसिक क्रिया, प्रक्रिया और अन्तर्द्वन्द्वों का चित्रण किया है, और इसके माध्यम से ही उन्होंने समाज के वैशम्य को भी प्रतिबिम्बित कर दिया है। एक विचारक की हैसियत से जैनेन्द्र कुमार समाजवादी नहीं, व्यक्तिवादी थे। भौतिकवाद की अपेक्षा अध्यात्मवाद की ओर उनका सहज आकर्षण था तथा उनका मार्ग संघर्ष का नहीं समन्वय या समझौते का था। इन्होंने जीवन मर्म की गहराइयों में डुबकी लगाकर एक ऐसी श्रेष्ठ प्रणाली देकर हिन्दी–कहानी को समृद्ध किया है, जिसके द्वारा पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उभार कर वस्तु–सत्य की मार्मिक अभिव्यक्ति की जा सकती है।

इलाचन्द्र जोशी

इलाचन्द्र जोशी और सच्चिदानन्द वात्स्यायन अज्ञेय में मनुष्य की मनोगत दिशाओं और अन्तर्द्वन्द्वों का चित्रण कम फ्रॉयड की प्रणाली से किया गया मनोविकारों का विश्लेषण अधिक है। इन्होंने कुण्ठाग्रस्त पात्रों के विक्षिप्त मानस को मनोवैज्ञानिक औचित्य प्रदान किया और सामाजिक कृत्यों को भी अपनी रचनाओं में उभारा है। उनके पात्र भी असामाजिकता, स्वार्थपरता और आत्म–केन्द्रित उत्तरदायितवहीनता को ही सामाजिक विद्रोह और क्रान्तिकारी जीवन–दर्शन का पर्याय मान लिया है। इलाचन्द्र जोशी के कहानियों के संग्रह मे रोमाण्टिक और छाया, आहुति और दीवाली, होली और ऐतिहासिक कथाएँ है।

यशपाल

यशपाल की कहानियों के लगभग कई संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं–जिसमें अभिशप्त, वो दुनिया, ज्ञानदान, पिंजरे की उड़ान, तर्क का तूफान, फूलों का कुर्ता, धर्म–युद्ध, उत्तराधिकारी और चित्र का शीर्षक। यशपाल ने हिन्दी–कहानी की सामान्य मानववादी परम्परा को नई सामाजिक राजनीतिक चेतना देकर ऊँचे धरातल पर उठाया है। कुछ प्रारम्भिक कहानियों को छोड़कर यशपाल की कुछ कहानियाँ मूलतः यथार्थवादी है। उनकी कथावस्तु और चरित्र–चित्रण मार्मिक और भाषा शैली प्रौढ, गम्भीर और व्यंगपूर्ण होती है। यशपाल अपनी

कहानियों में सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन के विविध चित्रों द्वारा मौलिक समस्याएँ उठाते हैं, और एक कलाकार की रीति से उनका समाधान भी खोजते हैं, ये समस्याएँ मौलिक हैं क्योंकि मनुष्य–जीवन के व्यापक सत्य से अविभूत हैं। उनकी रचनाओं मे ऊँचे विचार नीच करतूतो, पर तीखे प्रहार किये गये हैं।

4.1 विषय वस्तु के आधार पर

किसी व्यक्ति, वस्तु अथवा राष्ट्र के निर्माण में वे सभी आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितयाँ जिम्मेदार होती हैं, जिनके बीच से उसे अपने अस्तित्व का मार्ग खोजना पड़ता हैं। स्वाधीनता–प्राप्ति के लिए भारत को जिन परिस्थितियों में मूल्यों से जूझना पड़ा वे महत्वपूर्ण है। ये सशक्त मूल्य भारतीय इतिहास में स्वाधीनता–राष्ट्र संघर्ष के अधिकृत आँकड़े है। भारत की आजादी में विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनों एवं संघर्षो की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। स्वातन्त्र्योत्तर भारत में देश विभाजन और साम्प्रदायिकता की समस्या ने देश को झकझोर दिया। ब्रिटिश शासन की समाप्ति के बावजूद उनकी संसदीय प्रणाली, भाषा प्रशासनिक ढाँचा, कानून–पद्धति, चिकित्सा पद्धति, अर्थव्यवस्था एवं सैन्य पद्धति इत्यादि कारणों से राष्ट्र गुलाम ही बना रहा यद्यपि, देश को आजादी तो मिली लेकिन तात्कालीन समस्याओं से देश नहीं बच सका। भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के मूल में दीर्धकालिक संघर्ष और बलिदानों का इतिहास निहित है। जिसको विस्मृत कर स्वतन्त्रता के अर्थ को नहीं समझा जा सकता है। अट्ठारह सौ सत्तावन के प्रथम आन्दोलन, सत्याग्रह, दंडी यात्रा, बंग–भंग का विरोध, जलियांवाला बाग काण्ड, किसान–मजदूर आन्दोलन, भारत छोड़ो आन्दोलन एक लम्बे संघर्ष की दास्तान है। पन्द्रह अगस्त उन्नीस सौ सैंतालीस को विभाजित राष्ट्र भारत के स्वतन्त्र होने पर अनेक समस्याओं ने पैर पसारे। साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष समाप्त हो गया था। लेकिन अनेक समास्याएँ जिन्हें अंग्रेज छोड़ गए थे, उनका सामना देश को करना पड़ा। ऐसे में साहित्यकारों, रचनाकारों, कवियों एवं पत्रकार समुदाय की भूमिका

मार्गदर्शक बनकर प्रशासन के सामने आई। अपने लेखों एवं रचनाओं में समाज, देश हित एवं निर्माण के लिए आवश्यक विषय को शामिल किया गया। जिससे की एक सशक्त राष्ट्र का निर्माण हो सकें।

बंगाल की साहित्यकार महाश्वेता देवी भी ऐसी ही साहित्यकार है जिन्होंने रचनाओं के माध्यम से समाज एवं राष्ट्र निर्माण में अपनी अग्रणी भूमिका अदा की। समाज की मुख्यधारा से अनभिज्ञ आदिवासी समुदाय के साथ वर्षो तक बिहार और बंगाल के घने कबाइली इलाकों में रही हैं। उन्होंने अपनी रचनाओं में इन क्षेत्रों के अनुभव को अत्यंत प्रामाणिकता के साथ उभारा है। महाश्वेता देवी एक थीम से दूसरी थीम के बीच भटकती नहीं हैं। उनका विशिष्ट क्षेत्र है दलितों और साधनहीनों के हृदयहीन शोषण का चित्रण और इसी संदेश को वे बार–बार सही जगह पहुँचाना चाहती हैं ताकि अनन्त काल से गरीबी–रेखा से नीचे साँस लेनेवाली विराट मानवता के बारे में लोगों को सचेत कर सकें। महाश्वेता देवी की रचनाएं बंगला साहित्य तक सीमित न रह कर अन्य भाषओं में भी अनुदित है। महाश्वेता देवी की रचनाओं का लोहा हिन्दी साहित्य ने भी माना है।

सामाजिक कहानियाँ

महाश्वेता देवी की लेखन शैली केवल बंगाल तक ही सीमित नहीं रही अपितु वह बंग्ला साहित्य की सीमाओं को लांघकर अन्य राज्यों के साहित्य में सीधा प्रवेश कर गई है। उनकी कहानियों में जीवंतता होने के कारण उनकी रचनाएं हिन्दी साहित्य के अलावा अन्य भारतीय भाषाओं में अनुदित होकर पाठकों तक पहुंची है। समाज में सुधार एवं सामाजिक चेतना ही उनके लेखन शैली का विषय है। उनकी रचनाओं में आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक क्षेत्र की अव्यवस्था प्रमुख है। महाश्वेता देवी द्वारा अपनी कहानियों में उठाये गये मुद्दों में महिला उत्पीड़न, आदिवासियों के मूलभूत अधिकार, भूख, गरीबी, सामाजिक कु–प्रथाऐं, विधवा–विवाह, अंधविश्वास, काम–काजी महिलाओं का शरीरिक शोषण, वर्णव्यवस्था, युवा वर्ग में भटकाव आदि क्षेत्रों में शासन–प्रशासन एवं समाज को विस्तृत रुप से

आज भी कार्य करने की आवश्यकता है। उनकी रचनाएं सामाजिक अव्यवस्था के आस–पास ही केन्द्रित रही।

महाश्वेता देवी की प्रत्येक रचना समाज में संदेश वाहक का कार्य करती है। अव्यवस्था को उजागर करने के कारण सदैव से उनकी रचना को एक मार्गदर्शक के रूप में देखा जाता रहा है। उन्हीं की रचना के आधार से फिल्म जगत भी अछूता नहीं रहा है। फिल्म जगत को भी उनकी रचनाओं में विषय नजर आने पर रूदाली, संघर्ष, 1084 की माँ आदि फिल्म का निर्माण किया गया। फिल्म रूदाली में समाज के सामंत वर्ग द्वारा निचली जाति के लोगों के साथ किये गये शोषण को बड़ी ही मार्मिकता से दर्शाया गया है। महाश्वेता देवी ने फिल्म रूदाली में भारतीय समाज में व्याप्त जाति व्यवस्था को समाज के उस दायरे में लाकर खड़ा कर दिया है।जहां मानव प्रगति के सभी रास्ते ही बंद कर दिये हो।

भारतीय सामाजिक व्यवस्था इस आधुनिक काल में भी पिछड़ी जातियों में विभक्त है भले ही सख्त कानून के भय से इसका प्रदर्शन खुले आम देखने को नहीं मिलता परन्तु सामन्त वर्ग के हृदय में ये देश आज भी पनपता है। आज भी राजस्थान प्रदेश की खाप पंचायते तुगलगी आदेशों के लिए जग प्रसिद्ध है। रूदाली कहानी भी हमारे देश के राजस्थान प्रान्त से है जहाँ वर्ण व्यवस्था के तहत सुविधाभोगी ऊंची कहलाने वाली जातियां है तो दूसरी ओर जीवन की मूलभूत आवश्यकता से जूझती तथा कथित नीची जातियां इन्हीं नीची कहलाने वाली जातियों में एक जाति है रूदाली। महाश्वेता देवी में अपनी कहानी रूदाली में इसी जाति विशेष को अपनी रचना में उभारा है।

महाश्वेता देवी ने उजागर किया है कि सामंत वर्ग का जन्म इस धरती में केवल भोग, विलास एवं ऐश्वर्य के लिए हुआ है। हमारे देश में यह परम्परा रही है कि शोक के समय दुखी परिजनों द्वारा अपनो के खोने के विलाप में आंसू बहाये जाते है। परन्तु राजस्थानी सामंत वर्ग के द्वारा ऐश्वर्य को ध्यान में रखते हुए अपनों की मौत पर रोने

वाली प्रजाति रूदाली का ही निर्माण कर दिया। अपने माता–पिता भाई–बहन रिश्तेदारो की मौत पर दिखावे के लिए शोक की घड़ी में इन निचली जातियों के गरीब को पकड़कर रूलाया जाता था। जिसके लिए सामंत वर्ग ही उत्तरदायी था। सामंतो द्वारा इन निचली जाती की औरतों को राजमहल में ही पनाह दी गई। जब किसी राजा महाराजा के यहां मौत होती तब इन्हें ही रोने के लिए आगे कर दिया जाता। शेष अवसर पर पूरे महल में निवास रत पुरूष वर्ग द्वारा इन महिलाओं के साथ अनैतिक संबंध स्थापित किया जाता था। इस अनैतिक संबंध में राजे महाराजाओं की उपभोग की वस्तु बनकर रूदालियाँ रह जाती थी। निचली जाती की होने के कारण वे राज घराने की बहु नहीं बन सकतीं थी।

यह रचना पूर्णतः भारतीय समाज की असमानता पर आधारित है जहाँ एक ओर सम्पन्न वर्ग है तो दूसरी ओर विपन्न। जहाँ रूदाली अपनी दहाड़ से राजमहल के बाहर राजमहल के शोक संदेश पहुंचाती थी वहीं महल में उसके साथ अनैतिक कार्य किया जाता था। भारतीय समाज के इस घिनौने स्वरूप को इस कहानी में उजागर किया गया है।

बाढ़

दो सौ वर्ष की गुलामी और बढ़ती हुई आबादी एवं आजादी के पश्चात् सम्पूर्ण देश प्राकृतिक आपदाओं के कारण भूख और गरीबी जैसी ज्वलंत समस्याओं का सामना कर रहा था। भोजन कुछ वर्ग तक ही सीमित था। बल्कि खाद्य सामग्री जरूरत से ज्यादा उनके पास थी। वही 80 फीसदी आबादी भूखी थी। तब सामाजिक चेतना के लिए महाश्वेता देवी की कलम से बाढ़ जैसी कहानी निकलकर सामने आई। जो कि भूख के लिए आज तक प्रेरणा दायक कहानी है। महाश्वेता देवी बाढ़ कहानी मे लिखती है किः

"तेरी मां उस समय छोटी–सी लड़की थी। देखने में बड़ी सुंदर थी। उन दिनों उसकी सुंदरता पर रंग चढ़ रहा था। सवेरे से ही

झीसियां पड़ रही थीं, जैसे हवा में रूई उड़ रही हो। और हवा में क्या आवाज थी!"

चीनिवास अपनी दादी से बाढ़ की कहानी सुनाने के लिए जिद करता है। चीनिवास के आग्रह को स्वीकार करते हुए उसकी दादी बाढ़ की कहानी बताना शुरू करती है। कहती है जब बाढ़ आई थी तब तेरी माँ की उम्र बहुत कम थी। देखने में बहुत सुन्दर थी। महाश्वेता देवी आगे अनुच्छेद के माध्यम से जीवन और मृत्यु के संघर्ष को बड़े ही मार्मिक ढ़ग से प्रस्तुत करते हुए कहा है किः

"बाढ़ आने पर हम सभी लोग बड़े आचार्य जी की दालान में चढ़ गये। कितने लोग पेड़ों पर चढ़ गये, कितने ही लोग बह गये। आदमी कीड़े–मकोड़े की तरह मर रहे थे। यह देख कर बामनों ने सभी को अपनी दालान और आंगन में जगह दी।"

चीनिवास अपनी दादी से गांव में वर्षो पूर्व आयी बाढ़ के वृतान्त को सुनना चाह रहा था। बच्चे द्वारा लगातार की जा रही जिद को पूरी करने के लिए दादी ने बाढ़ की घटना को सुनाना शुरू किया और बताया की परेशानी की इस घड़ी में चारो ओर नदी में पानी भर गया। पशुओं और आदमी इस धार में बहकर मर रहे थे। सभी अपने जीवन को बचाने के लिए ऊंचा स्थान ढुंढ रहे थे। कई लोग पेड़ पर चढ़ कर अपने प्राणो की रक्षा में लगे थे। जीवन एवं मृत्यु के इस संघर्ष को देखकर समृद्धशाली ब्राह्मण वर्ग द्वारा नीची जातियों को कभी अपने घर के आंगन में प्रवेश तक नहीं करने दिया जाता था। उन्हीं पीड़ितों को ऊँचे स्थान पर स्थापित अपने घर के आंगन में आश्रय दिया।

बांयेन

बांयेन कहानी भारतीय समाज की कु–प्रथाओं पर आधारित कहानी है जिसमें समाज द्वारा बिना किसी प्रमाण व वैज्ञानिक आधार पर सामान्य स्त्री को केन्द्रित कर डायन, बांयेन या टोनही करार घोषित कर दिया जाता है। अंध विश्वास से ओतप्रोत होकर इन बेकसूर महिलाओं को समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है और

मानवता की सभी सीमाओं को लांघ कर हत्या कर दी जाती है आजादी के 68 वर्ष बाद भी भारतीय समाज में यह बुराई स्थापित है। महाश्वेता देवी बांयेन कहानी में इन अनुच्छेदों के माध्यम से कहती है कि:

"क्यों आयी है ?" भगीरथ के पिता ने धीमे से फुफकारकर पूछा था।

"मेरे पास सिर का तेल नहीं है, गंगापुत्र। घर में केरोसिन नहीं है। मुझे अकेले डर लगता है, जी।"

बंयेन रो रही थी। पानी के ऊपर चण्डी बांयेन की छाया की आंखों से आंसू चू रहे थे।

चण्डी बांयेन अपने पति के घर जरूरत का सामान लेने पहुँचती है तब उसके पति भागीरथ को अच्छा नहीं लगता। वह क्रोधित होकर समाज से निकाले जाने के बाद घर पर आने का कारण पूछता है। तब वह असहाय महिला जिसका व्यक्तित्व डायन से बढ़कर है, पति के सामने मजबूर होकर अपनी आवश्यक वस्तुओं में सिर में लगाने का तेल, सूनसान स्थान पर गांव के बाहर लोगो द्वारा बनाई गई झोपड़ी के धूप अंधेरे को दूर करने के लिए मिट्टी का तेल मांगती है जिस बांयेन से पूरा समाज व पूरा गांव डरता है। वह भी अंधेरे से डरने की बात अपने पति को बताती है और इस दर्द को व्यक्त करते हुए रोने लगती है। जबरदस्त मिथ्या एवं अंधविश्वासों के जरिये पूरा गांव चण्डी को प्रताड़ित करने से नहीं चुकता। उसका पति असीमित प्रेम करता था। उसे इसी महिला ने संतान तक दी थी। उसके आंखों से बहते आंसू चण्डी के सामान्य होने का प्रमाण दे रहे थे। बावजूद उसके पति ने स्वीकार नहीं किया।

"पैसे लेगी? ले।"

"मुझे सामान बेचेगा कौन?"

"मैं खरीद दूंगा, तू अब जा।"

"मैं अकेली नहीं रह सकती।"

"तो बांयेन क्यों हुई? जो कहता हूं, कर।"

सिर में लगाने का तेल व केरोसिन प्राप्ति के लिए मलिन्दर अपनी बांयेन बन चुकी पत्नी को पैसे देने की बात कहता है। परन्तु वह अबला नारी अपनी बात कहती है कि एक बांयेन बनाई गई महिला को भला सामान कौन देगा? न तो उससे कोई सामान लेता है और न कोई देता है। इसलिए पति कहता है कि दोनों ही सामग्री लेकर दें देंगें अब तू चली जा। अब पुनः अपनी व्यथा व्यक्त करते हुए कहती है कि मैं अकेली नहीं रह सकती। इस पर मलिन्दर कहता है कि तुम बांयेन क्यो बन गई? बांयेन भी उसे यही समाज बनाता है और कहता है बन गई। अपने पति के साथ सटे हुए बच्चे को देखकर कहती है यह मेरा पुत्र है क्या ? इस पर माँ और पुत्र की ममता के बीच आते हुए निर्दयता पूर्वक पति द्वारा अपनी ही पत्नी पर कीचड़ फैक कर भागने पर मजबूर कर देता है।

आश्चर्य की बात है कि बांयेन का लड़का होने पर भी कोई उसकी उपेक्षा नहीं करता था, वरन् उसकी ज्यादा ही खातिर होती थी। बांयेन के लड़के की खातिरदारी करने से बांयेन को यह बात मालूम हो जाती है। इसलिए वह भी लोगों को अच्छी निगाह से देखती है।

सभी गांव वालों को मालूम था कि भगीरथ ही चण्डी बांयेन का पुत्र है। इसलिए भगीरथ को पूरे गांव में अच्छी पूछ–परख थी, सभी लोग उसे प्यार देते थे। जो मांगता था उसे आसानी से उपलब्ध करा दिया जाता था। लेकिन यह सब कुछ हर डोम प्रजाति के बच्चे के साथ नहीं होता । लेकिन भगीरथ बांयेन पुत्र होने के कारण ही उसके साथ अच्छा व्यवहार किया जा रहा था क्योंकि गांव वालो को डर था कि यदि बांयेन के पुत्र को सताया गया तो बांयेन उनके बच्चों के साथ दुर्व्यवहार कर सकती है।

मूर्ति

मूर्ति कहानी में महाश्वेता देवी ने उल्लेखित किया है कि भारतीय समाज की रूढ़िवादी परम्पराओं के कारण ग्रामीण युवक को प्रेम से वंचित होना पड़ता है। दीनदयाल किसी सामान्य किशोरी से नहीं

बल्कि बाल विवाह के कारण विधवा किशोरी के साथ प्रेम विवाह करना चाहता था। उसे नरकीय जीवन से उभार कर एक सामान्य वैवाहिक जीवन प्रदान करना चाहता था। परन्तु संकीर्ण मानसिकता वाले समाज ने उसे गांव छोड़ने पर मजबूर कर दिया।

छातिमवासी पहले भी गरीब थे, यह वे भूल गये हैं। गाँव के चिर अन्धकार की अवस्था जनित स्थिति के कारण ही वे ठाकुर परिवार के संत्रास की बात भूल गये हैं। ठाकुर–परिवार का ग्राम–त्याग और दीनदयाल को फाँसी–बात 1924 की है। चौवन साल पहले की घटना अब अन्य लोकगाथाओं की तरह किवदन्ती होकर रह गयी है।

निरक्षर, गरीब आदिवासियों अनुसूचित जाति के रहवासी का ग्राम छातिम के लोगों ने स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी, दीनदयाल ठाकुर को भुला दिया। ग्रामवासी यह भी नहीं जानते की वह शहीद था। स्वतन्त्रता संग्राम की लड़ाई में उनके ग्राम के एक युवा का भी संघर्ष रहा है सन् 1924 में दीनदयाल ठाकुर को फाँसी हुई थी इसकों भी नहीं जानते है। उनके लिए यह लोक गाथा के समान ही रह गई है और ग्रामवासी अपनी सोच के अनुरुप इस शहीद की कहानी को अभिव्यक्त करते है।

राजनैतिक कहानियाँ

राजनैतिक स्तर पर देखा जाये तो महाश्वेता देवी ने मूर्ति कहानी के माध्यम से राजनीति पर तीखा प्रहार करते हुए कहा है कि जिस गांव ने दीनू की भावनाओं की हत्याकर गांव से निकाल दिया उसे प्यार पाने से वंचित रखा। अंततः प्रेम में असफल दीनू देश भक्ति के मार्ग पर चल कर वीरगति को प्राप्त हुआ। ग्राम छातिम के लोग दीनू के बलिदान का लाभ प्राप्त करना चाहते है। ग्राम में मूलभूत आवश्यकताओं के पूरे होने का स्वप्न देखा जा रहा है। जिस दीनू को गांव ने बेइज्जत कर निकाल दिया था उसे आधार बनाकर ग्राम छातिम के विकास की राह में ले जाने की राजनीति की जा रही है। जीवित रहते अपमानित किया गया। अब मूर्ति स्थापित कर सम्मानित

किया जा रहा है ताकि अपना स्वार्थ पूर्ण किया जा सके।

नवीन ने कहा है, "रास्ते का नाम होगा–शहीद दीनदयाल ठाकुर रोड। रास्ता होने पर ही धीरे–धीरे गाँव में स्कूल, हेल्थ–सेंटर–सब बनेंगे। स्कूल का नाम होगा–दीनदयाल स्मृति विद्यालय।"

शहीद दीनदयाल की मूर्ति की स्थापना दुलाली के भतीजे नवीन के हिसाब से महत्वपूर्ण नहीं है। नवीन के अनुसार गाँव के लिए सड़क जरूरी है। यह रास्ता शहीद दीनदयाल की मूर्ति स्थापना से ही शुरू होगा। इस मार्ग का नाम शहीद दीनदयाल ठाकुर मार्ग होगा और इस रास्ते के बनने से गाँव का विकास होगा। धीरे–धीरे गाँव में स्कूल, प्राथमिक स्वस्थ्य केन्द्र आदि बनेंगे। इस स्कूल का नाम भी दीनदयाल विद्यालय होगा। यह नवीन की सोच थी, वास्तविकता नहीं।

भारत वर्ष

भारत वर्ष कहानी में महाश्वेता देवी ने वर्णन किया है कि अटाई गाँव की साधन हीनता की जानकारी सरकारी नौकरशाह को थी परन्तु सरकारी नौकरशाहों के समूह से मदभेद रखने वाले अधिकारियों एवं कर्मचारियों को दण्ड स्वरूप अटाई गाँव में नियुक्त किया जाता था। इसी कारण से अटाई गाँव को विकास से कोसो दूर रखा गया। ताकि गंदी राजनीति के खेल को जारी रखा जा सके।

उसी प्रकार महाश्वेता देवी ने भारत वर्ष कहानी में अटाई गांव की सत्यता को अपने भाषा शैली में व्यक्त किया है। कहती है पूर्णतः अविकसित अटाई गाँव की सच्चाई से शासन तंत्र पूर्णरूप से परिचित था क्योंकि जो सरकारी कर्मचारी अथवा अधिकारी अपने अफसरों के विरूद्ध कार्य करता था। उसकी नियुक्ति सजा के तौर पर अटाई गाँव में की जाती थी। अटाई गाँव में सरकार का कोई दफतर था तो वह रामंदा स्वास्थ्य केन्द्र, यहां का डॉक्टर नवीन प्रसाद था। जो अपने मातहत अफसरों की विरोध की सजा के कारण भेजा गया था। उसके द्वारा मेहतरो के घरों में पखाना नहीं होने के कारण आवाज

उठाई इसलिए सजा के तौर पर स्थानान्तरण रामन्दा स्वास्थ्य केन्द्र में किया गया था। अटई गाँव पूरी तरह वन जंगल का इलाका है सभी निर्धन परिवार एवं गरीब परिवार ही रहते है। आबादी बहुत कम है। शाम होते ही सन्नाटा छा जाता है। समय गुजारने के लिए एक मात्र साधन ट्रांजिस्टर ही था।

हरिया घास के रेशे बेहद सख्त और खुरदुरे होते है। बकरियां भी इन्हें चबा नहीं पातीं। बड़े–बूढ़े अपनी हंसिया से इसके किनारे छील डालते हैं और पत्तों को चीरकर चटाई बुनते हैं। बेहद पिछड़ा ग्राम अटाई के बासिंदो के भरण पोषण के लिए कोई भी व्यवसाय नहीं था। आधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति यह आदिवासी समुदाय जंगलो से पूरी करता था परन्तु उन्हें नकद रूपयों की आवश्यकता जरूर महसूस होती थी। इसलिए क्षेत्र में हरिया घास की बहुतायात पैदावार थी जिसे जानवर तक नहीं खाते थे। यहां के निवासी इसी हरिया घास के माध्यम से चटाई बुनकर हाट बाजार में बेच दिया करते थे। जहां खरीददार तक नहीं मिलते थे। पिछले साल से आदिवासी कुटीर शिल्प सहकारी संस्था बाजार में ये चटाई कुछ पैसों में आदिवासियों से खरीदने लगे है। लेकिन सच्चाई अटाई वासियों को नहीं मालूम की संस्था द्वारा चटाई खरीदी के मद में तीन लाख रूपए सालाना दिखाया जाता है। संस्था के सारे अफसर आदिवासियों के अधिकार के इन रूपयों को आपस में बाँटकर मजे करते है। महाश्वेता देवी ने खोखली अव्यवस्था एवं आदिवासियों का हक बांटखाने पर तीखा प्रहार किया है।

दुष्यंत कुमार ने भारतीय राजनीति के खोखलेपन तथा आम आदमी की पीड़ा को बड़े ही मर्मस्पर्शी ढ़ंग से व्यक्त किया है। वे कहते है किः

"एक बूढ़ा आदमी है मुल्क में या यों कहें
इस अँधेरी कोठरी में एक रोशनदान है।
कल नुमाइश में मिला वो चीथड़े पहने हुए

मैंने पूछा नाम तो बोला कि हिन्दुस्तान है।
जिएँ तो गैर की गलियों में गुलमोहर के लिए
मरें तो गैर की गलियों में गुलमोहर के लिए।
मुझमें रहते हैं करोड़ों लोग चुप कैसे रहूँ
हर गजल अब सल्तनत के नाम एक बयान है।"

4.2 प्रवृत्ति के आधार पर

आज के सामाजिक परिवेश में अपनी निजी पहचान कायम करने, अपने स्वाभिमान एवं स्वतन्त्र व्यक्तित्व का एहसास कराने और पुरुष की दास्ता से मुक्त होने के लिए संघर्षरत नारी–जीवन को लेकर लिखे गये कई छोटी–बडी कहानियाँ देखने में आई है। वर्ग–स्तरों एवं सामाजिक परिवेशों में परम्परा और आधुनिकता के बीच होने वाली टकराहटों को झेलते हुए नारीत्व की सार्थकता की तलाश में संघर्षरत हैं। आज के पुरुष–प्रधान समाज में नारी–संघर्ष की दिशा क्या हो? आज की घोर व्यावसायिक जिन्दगी में उपभोगवादी व्यवस्था के शीर्ष पर बैठा हुआ पुरुष क्या सचमुच नारी को मुक्त देखना चाहता है? क्या आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त कर लेने मात्र से नारी अपने स्वाभिमान की रक्षा में समर्थ हो जाती है? क्या नारी की आत्मनिर्भरता का कोई जैविक पक्ष भी है? क्या आर्थिक दृष्टि से आज जो नारियाँ आत्मनिर्भर हैं उन्हें इस प्रक्रिया में कहीं किसी स्तर पर समझौते नहीं करने पड़े हैं? क्या आज की सफल नारी चरितार्थता का अनुभव कर पाती है? क्या सफलता की उपलब्धि के साथ या उपलब्धि के लिए आज के पुरुष–प्रधान समाज में उसे कहीं कुछ खोना तो नहीं पड़ रहा है। ऐसे अनेक प्रश्न हैं जो इन कहानियों के माध्यम से उभरे हैं? आज के रचनाकार की मानसिकता में काफी कुछ परिवर्तन आया है और वह नयी दृष्टि से आज की नारी के संघर्षशील जीवन की मीमांसा में प्रवृत हुआ है। आर्थिक दृष्टि से सफल और आत्मनिर्भर होने पर भी आज की नारी कहीं कुछ बहुत मूल्यवान के खो देने के दंश से पीड़ित होकर मानसिक रिक्तता का अनुभव करती हैं।

भूख

प्रथम दो विश्व युद्ध विश्व में साम्राज्य स्थापित करने के उद्देश्य से हुए थे। परन्तु बुद्धि जीवियों का मत है कि भविष्य में होने वाला तृतीय विश्व युद्ध भूख और पानी के लिए ही होगा। महाश्वेता देवी ने बाढ़ कहानी में भूख की व्यथा को बड़े ही मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है। महाश्वेता देवी बांढ़ कहानी में इस अनुच्छेद के माध्यम से कहती है कि:

"अन्न के बिना परानी मर रहे थे, यह देख कर बामनों ने बोरे के बोरे चूड़ा, भूजा, बताशा देकर सब की जान बचायी। जिन्हें खाना पकाने की जगह मिल गयीं, उन्हें उन्होंने चावल–दाल दिये।"

सुरक्षित जगह के आश्रय देना जीवन की रक्षा के लिए नाकाफी था। बिना पानी भोजन के लोगों की मौत हो रही थी। इस स्थिति को समझने में बिना देर किये ब्राह्मण वर्ग के बोरो में भरा हुआ चुवड़ा, भुजा और बताशा सभी को दिया। जिन लोगों को खाना बनाने के लिए जगह मिल गई थी। उन्हें चावल एवं दाल भी दिया गया। ताकि वे भोजन कर अपने प्राणों की रक्षा कर सके। बाढ़ की इस प्राकृतिक आपदा ने बरसो पूर्व धर्म के आधार पर सवर्ण एवं निचली जाति के मध्य भेदभाव, छुआछूत की रूढ़िवादी परम्पराओं की खाई को पाट दिया था। जो स्वर्ण जातियाँ इन निचली जाति की प्रथा को पीने का पानी तक तालाबों एवं कुओं से भरने नहीं देती थीं। मंदिरों में देव दर्शन से वंचित रखती थी। आज वे ही ब्राह्मण जाति के लोग इन नीच जाति के लोगों को मुसीबत की घड़ी में प्राणों की रक्षा के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभा कर मानवता का सबसे बड़ा उदाहरण प्रस्तुत कर रहे थे।

लेखिका ने इस पक्ष को बड़े ही सत्यता के साथ उठाते हुए उल्लेखित किया है कि सभी प्राणी एक समान है। परन्तु समय के बदले हुए परिवेश एवं प्राकृतिक आपदा से उत्पन्न परिस्थितियाँ मानव द्वारा निर्मित मदभेद उत्पन्न करने वाली दीवारों को ध्वस्त कर देती

है। जिन लोगों को पूरी उम्र उपेक्षा का दंश झेलना पड़ता था। आज उन्हें ही आगंतुक की भांति सेवा प्राप्ति का अवसर मिल पाया है।

समारोह में शामिल होने के लिए चीनिवास अपनी माँ रूपसी को संदेशा देता है तथा उसकी दादी समारोह में शामिल होने की तैयारी करती है। तीनों ही आचार्य के घर की ओर चल पड़ते है। रूपसी को महसूस होता है कि चौतन्य प्रभु गौरांग आ गये। इसलिए संतान की सारी इच्छायें पूरी होना का आभास होता है और वो अपने भूखे पुत्र चीनिवास को प्यार करते हुए करुणावश छाती से लगा लेती है। उसे एक पल महसूस हुआ कि उसके सारे दुखो का निराकरण हो गया। आज उसके पुत्र को भोजन की लालसा प्रसाद प्राप्ति के बाद पूरी हो जायेगी। लेकिन गौरांग साधु संत समारोह में नहीं पहुंचे।

"लोग आचार्यजी के घर के सामने काफी देर बैठे रहे। वे केवल गौरांग दर्शन के लिए नहीं आये थे। पेट की आग बड़ी भयानक होती है। पेट भर खाने के लिए मां–बेटे, बुड्ढ़े–बुढ़िया, काने–कुतरे सब बैठे रहे।.....

सभी इस आशा में बैठे रहे कि कभी न कभी प्रसाद लेने के लिए बुलावा आयेगा।"

आचार्य जी के घर के सामने आमंत्रित पूरा गांव साधु सन्यासियों के दर्शन के लिए आतुर बैठा थे। काफी देर तक साधु संतो के नहीं आने पर भी सभी लोग इंतजार कर रहे थे। साधु संतो के दर्शन की अपेक्षा लोगो को अपनी भूख शान्त करने की ज्यादा चिंता थी। इसलिए साधु संतो के आने और न आने का उनके लिए महत्व नहीं था। वो तो इस समारोह की आड़ में वितरित होने वाले प्रसाद प्राप्ति का इन्तजार कर रहे थे। पेट की भूख से बढ़कर और कुछ नहीं होता है। पेट भर खाने के लिए माँ बेटे, बुजुर्ग, महिलाओं, पुरूष, बच्चे, विकलांग सभी बैठे रहे उसी दौरान जोरदार वर्षा होने लगी। पानी में भीगते हुए लोग अपने आराध्य से प्रार्थना करने लगे कि और जोरदार वर्षा हो जाये। ऐसे ही पानी के प्रभाव में बाढ़ आती है और पुनः बाढ़

की स्थिति बनने पर पिछली बार की तरह उन लोगों को प्रसाद जरूर प्राप्त होगा।

दिन भर बरसते पानी में इंतजार करने के बाद भीड़ शाम तक डटी रही। तभी आचार्य के नौकर पहुंचे और सभी से विन्रम आग्रह करते हुए नौकर ने कहा कि साधुसंत नहीं पहुंच पाये इसलिए अब आप लोग लौट जाओ। यहाँ खड़े रहकर समय व्यतीत करने से कोई लाभ नहीं मिलने वाला प्रसाद के रूप में नौकरों के द्वारा बताशे का वितरण किया जा रहा था। इस पर गांव वालों ने पूछा कि साधु संतो के गांव नहीं पहुंचने पर बताशे क्यों बाँटे जा रहे है। प्रसाद मिलेगा इसका वादा किया गया था। इस कारण इसका वितरण किया जा रहा है। यदि साधु संत पहुंचते तो निश्चित ही प्रसाद बंटता और कीर्तन भी होते। आप सभी को महाप्रसाद भी खाने को मिलता इसके लिए आचार्य जी ने सारी व्यवस्था की थी। महाप्रसाद बनाने के लिए सभी सामग्री की खरीदी भी की गई थी। लेकिन साधु संतो के नहीं आने के कारण प्रसाद नहीं बनाया गया इसलिए जो मिल रहा है वो ले लो। इस पर लोगों ने कहा कि हम भोजन करने की आशा पर आये थे। तब नौकरों ने कहा कि तुम सब की बाते सुनने से लगता हैं कि सन्यासी के दर्शन के लिए नहीं अपितु खाना खाने के उददेश्य से आये थे। नौकर ने खीज कर कहा कि जो मिल रहा है ले लो। मैं तुम लोगों के साथ बहस नहीं कर सकता क्योंकि तुम लोगों के लिए संयासी दर्शन से ज्यादा महत्वपूर्ण भोजन प्राप्त करना है। संयासी की अपेक्षा भोजन बड़ा हो गया है और यही कारण है कि तुम लोगों का दुख कभी समाप्त नहीं होगा, भुजा बताशा लो और जाओ यहाँ से।

महाश्वेता देवी यही बात कहना चाहती है कि भूखे को भोजन दे कर जिंदा रखने से बड़ा कोई आदर्श, कोई धर्म नहीं हो सकता।

वृद्धावस्था की पीड़ा

रांग नंबर कहानी में महाश्वेता देवी ने डर को उजागर करते हुए कहा है कि अपने युवा पुत्र की अर्थी को कांधा देने की कल्पना कोई

भी बुजुर्ग पिता सपने में भी नहीं कर सकता लेकिन तीर्थ बाबू के साथ यह सब कुछ यर्थाथ में हो रहा था।

"तुम बीमार हो। स्वाभाविक है, तुम्हारा बीमार होना स्वाभाविक है..."

"क्यों? मेरे लिए बीमार होना स्वाभाविक क्यों हैं?"

"तुम्हारा लड़का तो....."

"हमारा लड़का क्या?"

"घर में नहीं है।"

"मनोज, मैं नहीं जानता तुमसे किसने बताया हैं। मेरा लड़का दीपंकर अपने कजिन के पास लखनऊ में है। वहां से दिल्ली पढ़ने जायेगा दीपंकर।"

"ओह गॉड।"

मनोज जैसे बड़ी यंत्रणा और दुख से बोलता है। उसके सीने में से एक लंबी सांस बाहर आती है। तीर्थ को क्या हो गया है? उसके दोस्तों में से सबसे ठंडे दिमाग वाला और सबसे अच्छा लड़का था तीर्थ।

डॉक्टर द्वारा बार–बार पूछने के बाद भी अपनी बनाई हुई दुनिया में देखे गये स्वप्न को नहीं बताने पर डॉक्टर कहते है तुम बीमार हो और तुम्हारा अस्वस्थ्य होना जायज होता है। डॉक्टर के इस टिप्पणी पर तीर्थ बाबू तुरन्त सवाल करते हैं कि मैं बीमार क्यों हूँ भाई ? इस पर डॉक्टर के मुंह से निकलता है कि मुख्य कारण तुम्हारे लड़के का इतना कहकर अपने आप को रोक लेते है। पुनः तीर्थ अपने बच्चे से जुड़ी हुई कोई भी बात को जानने के लिए आतुर हो जाते है और उनका त्वरित सवाल होता है मेरा लड़का क्या? और उनका यह सवाल जैसे किसी अनिष्ट को सुनना नहीं चाहते हो। इसको समझते हुए डॉक्टर शांतिपूर्वक कहते है। दीपंकर घर पर नहीं है लेकिन वे इससे संतुष्ट नहीं होते है और कहते है मनोज मेरे लड़के के यहां न होने की जानकारी तुम्हें किसने दी, मैं नहीं जानता टेलीफोन! दीपंकर अपने चचेरे भाई के घर लखनऊ में है और वहाँ से वह आगे की

पढ़ाई के लिए दिल्ली जायेगा। तीर्थ बाबू ये सारी जानकारी पूरे विश्वास के साथ इस प्रकार कह रहे थे कि दीपंकर के साथ उनका नियमित पत्र व्यवहार है। परन्तु लम्बे समय से दीपंकर के साथ उनकी चर्चा नहीं हुई और न ही उनके भतीजे नीरेन ने कुछ बताया था। इतना सुनकर डॉक्टर मनोज एक लम्बी गहरी सांस लेने के बाद दुख के साथ कहते है मेरे दोस्त तीर्थ को क्या हो गया? वह सबसे अच्छा और शांत व्यक्ति था।

तीर्थ बाबू दवा की शीशी लेते हैं और बाहर आ जाते हैं। मनोज दरवाजे तक उनके साथ आता है, फिर कहता है, "तुम्हारे पास बोस तो फिर नहीं गया था?"

"नहीं, क्यों पूछ रहे हो?"

"मैंने उसे मना किया है।"

"तुम क्या समझते हो वह आये तो मैं उसे घर में घुसने दूंगा? बेकार में आकर सविता से आलतू–फालतू बातें करता है।"

डॉ. मनोज तीर्थ बाबू दवा की शीशी लेकर उनके दवाखाने से बाहर निकलते है। डॉक्टर मनोज भी उसे बाहर दरवाजे तक छोड़ने जाते है और दीपंकर से संबंधित सत्यता को परखने के लिए दीपंकर की मौत की खबर देने वाने व्यक्ति बोस के बारे में सवाल करते है कि तुम्हारे पास बोस दुबारा आया तो नहीं था। तीर्थ बाबू कहते है नहीं लेकिन यह सवाल क्यों पूछ रहे हो। फिर बोस के सम्बंध में कहते है कि मैंने उसे मना कर दिया था वह दोबारा नहीं आयेगा लेकिन यह सवाल तुम क्यों कर रहे हो? तुम क्या समझते हो? बिना वजह की बात करने वाले व्यक्ति को मैं अपने घर के अन्दर आने दूंगा। घर पर आकर वह सविता के साथ बिना वजह की बातें करता है उनका कहने का आशय था कि दीपंकर के संबंध में गलत सूचनाएं देगा। तीर्थ बाबू अपने पुत्र के मोह में इस कदर डूब चुके थे कि वह किसी भी स्थिति में सच्चाई को अपनी जुबा पर नहीं लाना चाहते थे।

दूर–दूर भीषण प्रांतर में
मरूभूमि में, दुरंत श्मशान में–

यहां तेरा नहीं स्थान।
दुर्गम कांतार में, तुषारावृत,
चल पापराज्य त्यज ,
पति तेरा पुत्रघाती अराति का है साथी।
चल पुत्रशोकातुरा।.....

तीर्थ बाबू अपने पुत्र दीपंकर के न होने और होने के सवाल के मध्य इस कदर डूब चुके है कि वह सच्चाई का सामना नहीं करना चाहते हालाकि उनके पुत्र से संबंधित यह सच्चाई बार–बार उनके आंखों के सामने सोते जागते आती रही है। जिसे वे रांग नम्बर, रांग सिटी, रांग होप की संज्ञा देकर टालते रहे है। दीपंकर से जुड़ा हर पहलू चेतन एवं अचेतन दोनों ही अवस्था में स्वप्न के रूप में आ रहा था। उसकी मौंत से जुड़ा यह परिदृश्य जिससे कलकत्ता शहर की छवी उन्हें नजर आती है जिसमें एक वृद्ध महिला सड़क दुर्घटना में अपने पुत्र प्रवीर की मौत होने के बाद विलाप करते हुए नजर आती है और इस पूरे स्वप्न को देखने के बाद पुनः उनके मन में यही वाणी निकलती है कि शी इस इन द रांग सिटी। पुत्र से संबंधित सत्यता को बताने वाला हर वह स्थान, व्यक्ति व परिस्थितियाँ तीर्थ बाबू की दृष्टि से गलत थी। यह प्रवृत्ति उनके मन मस्तिष्क में इसलिए विकसित हो चुकी थी क्योंकि उनका पुत्र दीपंकर ही शेष जीवन जीने का एक मात्र साधन था। दीपंकर के खो जाने का भय ही उन्हें सत्य को स्वीकार करने से ठुकराता रहा है।

युवा वर्ग में भटकाव

प्रेतछाया कहानी में लेखिका महाश्वेता देवी ने युवा वर्ग को संदेश दिया है कि समय रहते अपनी प्रतिभा को पहचानते हुए पूर्ण निष्ठा के साथ उसी राह पर चलना चाहिए। जिससे आसानी से मंजिल प्राप्त हो सके। लेखिका महाश्वेता देवी कहती है किः

उस किताब की समालोचना का जिम्मा, दस्तूर मुताबिक, वैज्ञानिकों के हाथों में सौंपा गया।

उन लोगों ने कड़े लफ्जों में अपनी राय जाहिर की, 'किसी भी विषय में प्राथमिक ज्ञान के बिना ही.....'

प्रेत छाया कहानी में लेखिका ने अनुच्छेदों के माध्यम से यह बताना चाहा है कि विजय बिना प्राथमिक ज्ञान के न्यूक्लियर फिजिक्स पर एक किताब लिखता है और उस किताब की समालोचना की जिम्मेदारी वैज्ञानिकों को दी गई। विषय के ज्ञानी वैज्ञानिकों ने अपने सुझाव दिये कि, किसी भी विषय पर पुस्तक लिखने के पूर्व उसका प्राथमिक ज्ञान लेखक को आवश्य होना चाहिए। परन्तु विजय की प्रशंसक मंडली ने वैज्ञानिकों के इस सुझाव को अनसुना कर दिया। विजय को महान लेखक ठहराते हुए समारोह आयोजित कर सम्मानित किया गया। विजय ने प्रशंसक मंडली के इस सम्मान से अविभूत होकर संगीत में और उसके बाद साहित्य में लिखना शुरू किया। इस प्रकार से वह जीवन के यथार्थ से भटकर अज्ञानता पूर्वक सपनों की दुनिया में जीता रहा।

'अब तुम चाहे जो भी कहो। हम सब में तुम ही सबसे ज्यादा गुणी थे। अनादि, अरुण ,प्रणव..... इन सबकी तुम किस कदर उपेक्षा करते थे! अब, देख, यह साबित हो गया न, कि प्रतिभा को काम में लगाना होता है..... उसका इस्तेमाल करना होता है। मेहनत भी करना पड़ती है।' तुम पर जाने कैसी तो निर्ममता सवार हो गयी थी,' तुम कुछ करो विजय कुछ करों।

विजय के मित्र प्रदीप दत्त ने वर्षो बाद हुई भेट के दौरान कहा कि हम मित्र मंडली में अरुण महान गायक, प्रणव की पेंटिंग प्रदर्शन दिल्ली हाई कोर्ट गैलरी में लगाई गई है और दिलीप का ब्याह हो चुका है। सभी दोस्त लगन व परिश्रम से स्थापित हो चुके है। तुम हम सब में सबसे ज्यादा प्रतिभाशाली गुणी थे। तुम सभी की उपेक्षा करते थे लेकिन सभी अपने पेशे के शिखर पर है क्योंकि सफलता के लिए प्रत्येक व्यक्ति को अपनी प्रतिभा को सही दिशा देना जरूरी है। इसलिए तुम भी कुछ करों प्रतिभा का मतलब वह नहीं होता की घर बैठकर सबसे ज्यादा स्वयं को महान समझों। स्वयं को ज्ञानी और

दूसरों को मुर्ख समझने से कुछ नहीं होता। हमें अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करना होगा तभी सफलता प्राप्त होगी। परन्तु प्रतिभा पर अहम हावी होने पर असफलता का मार्ग प्रशस्त होता है। विजय के साथ भी ऐसे ही हुआ। अंततः कुंठा से ग्रसित विजय ने आत्महत्या कर ली।

विधवाओं को विवाह का अधिकार

महाश्वेता देवी द्वारा रचित मूर्ति कहानी भी असफल प्रेम गाथा का वर्णन है जिसमें बाल विवाह के उपरान्त विधवा हुई किशोरी दुलाली एवं ब्राहमण पुत्र दीनू एक दूसरे से प्रेम करते थे। विधवा विवाह के लिए आतुर दीनू को गांव में अपमानित होना पड़ता है। प्रेमी दीनू और छातिम ग्राम में शहीद दीनदयाल के काँसे की मूर्ति की स्थापना को दर्शाया गया है।

छातिम ग्राम के शहीद दीनदयान की काँसे की मूर्ति की स्थापना करने का संकल्प कलकत्ता महाधिकरण ने किया था और मूर्ति–स्थापना काफी धूम–धड़ाके, बाजे–गाजे के साथ होगी, यह खबर समाचारपत्रों में भी छपी। लेकिन छातिम ग्राम के लोग स्वभाववश ही यह नहीं जान पाये। ग्राम तो फॉर फ्रॉम मैड़िंग क्राउड है। लैटेराइट मिट्टी के द्वारा ज्यादा लोगों का भरण–पोषण नहीं हो सकता। छातिम और उसके साथ के सात गाँवों की जनसंख्या तीन हाजार से भी कम है। आदिम जातियाँ और उपजातियाँ रहती हैं यहाँ–संथाल, और मुडा वगैरह। अनुसूचित जातियाँ भी हैं–भुइयाँ, हाड़ि, मोची, गूँड़ी, बाउरी। यही हैं यहाँ की जन–संख्या। इन आठों गाँवों में साक्षर लोग तीस से ज्यादा नहीं होगें। जो साक्षर हैं, वे भी निरक्षरों की तरह पेट के धंधे में व्यस्त हैं। समाचार–पत्र न कोई रखता है, न कोई पढ़ता है। निकटस्थ थाना ग्यारह मील दूर है। शहर सात मील दूर। वहीं ब्लॉक डेवेलपमेंट ऑफिस, पोस्ट–आफिस, जंगल–ऑफिस, स्वॉयल वर्कर ट्रेनिंग ऑफिस स्कूल–सब–इंसपेक्टर का ऑफिस, हेल्थ सेंटर, धान –गोला या कोठारी और कृषि कार्यो के लिए स्थापित केन्द्र हैं। यानी पूरा उद्देश्यपूर्ण पेराफरनेलिया है।

श्रम की विजय

बीज कहानी में बाहुबली जमींदारों द्वारा गाँव के मेहनतकश मजदूरों से श्रम कानून का उल्लंघन करते हुए कम मजदूरी देकर ज्यादा काम लेने की प्रवृत्ति को दर्शाया हैं और इस श्रम कानून विरोधी कार्य की मुखालफत करने पर मजदूरों की हत्या कर दी जाती थी। कानून का उल्लंघन करना जमींदारों की मनोवृत्ति बन चुकी थी जिसमें सरकारी महकमा भी जमींदारों का साथ देता था। जिसमें लछमन सिंह जमींदार द्वारा लगातार कमजोर वर्ग का शोषण उसकी पीढ़ा को इस अनुच्छेद के माध्यम से प्रस्तुत किया हैः

लछमन सिंह जमींदार द्वारा लगातार किये जा रहे अन्याय से परेशान होकर इस बार विरोध के स्वर को मुखरित करने वाला और कोई नहीं हरिजन दुलन का बड़ा लड़का धतुआ था। उसने कहा कि मजदूरी का पच्चीस पैसा कमीशन ठेकेदार को नहीं देगे। यह बात नहीं मानने पर कोई भी मजदूर फसल नहीं काटेगा। बाहर के मजदूरों को भी हम खेतों में काम नहीं करने देंगे। धतुआ की इस धमकी से लछमन सिंह आक्रोशित था लेकिन दूलन का पुत्र होने के कारण वह उसे छोड़ देता है। दूसरे दिन लछमन के मना करने के बाद भी गुंडो द्वारा चलायी गई गोली से धतुआ की मौंत हो जाती है।

महाश्वेता देवी ने आगे अनुच्छेद में लिखा है किः

बीज छीटते–छीटते दूलन मंत्र की तरह बोल रहा था, " तुम लोगों को मैं एलो और कुटुस नहीं रहने दूंगा। तुम्हें धान बनाऊंगा।"

उस खेत में जब चारा उगा तो सभी लोग झुण्ड बांध कर देखने गये। मक्खन, रामलगन और लछमन सिंह की उपजाऊ जमीन में भी ऐसा पुष्ट और तेजवान चारा नहीं उगा था।

धतुआ की मौत ने दूलन को हिला कर रख दिया था उस पर बदले की आग का पागलपन सवार था। वह जानता था कि लछमन ने उसके बेटो को भी अघोषित कब्रिस्तान में गाड़ दिया। लछमन सिंह की धतुआ को मारने की स्वीकारोक्ति के बाद दूलन ने तय किया कि

अब लछमन का अंत करके ही मैं करण, अशर्फी, बुलाकी, धतुआ को अमर कर पाऊंगा। वह खेत में लगे नागफनी के पेड़ो एवं कटीले झाड़ियों को कांटता चला गया। कई दिनों के मेहनत के बाद जमीन पर बीज बोने लगा। दूलन के अथक परिश्रम के बाद फसल लहलहाने लगी। मानो आज तक इतनी अच्छी फसल किसी के खेत में नहीं हुई थी। इस दौरान दूलन कह रहा था। करन से लेकर धतुआ तक की प्राणो की आहुती बेकार नहीं जायेगी। आप सभी लोगो को मैं नागफनी नहीं बनने दूंगा बल्कि प्राणदायक धान बनाऊंगा। खेत में लहलहाती फसल को देख सभी ग्रामीण फसल को कांटने की मांग करने लगे लेकिन दूलन ने सभी को मना कर दिया। दूलन के संघर्ष ने लक्ष्मण सिंग द्वारा बनाई गई लंका को ध्वस्त कर दिया और इस संघर्ष में मरने वाल मजदूरों और दोनों ही बेटों की कब्र पर पैदा की गई फसल के दानों को बीज बना दिया। इन्हीं बीजों को ग्रामीणों के मध्य वितरित कर संघर्ष के दौरान मारे गये सभी मजदूरों को अमर कर दिया गया।

महाश्वेता देवी इस कहानी के माध्यम से चेतना जागृत करती है कि शोषणकर्ता को खत्म करना कठिन है नामुमकिन नहीं दृढ़ संकल्प के द्वारा अधिकारों का हनन करने वाले व्यक्ति पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

महिलाओं का शोषण

महाश्वेता देवी ने शनीचरी कहानी में गरीबी के कारण उत्पन्न होने वाली लाचारी को व्यक्त किया है। गरीब प्रवृत्ति के कारण पालक बेबस हो चुके थें। घर की इज्जत पर खतरा मंडरा रहा था।

"कपड़ों के बगैर जवानियाँ जंगलों में छिपती फिरीं। और ऐसे समय में गोहुमन बीवी का अवतरण देवी–सरीखा हुआ। बोली, "नये कपड़ें पहनाकर तुम्हें ले जाऊँगी कलकत्ते के ईंट–भट्टों पर। मेहनत करना, खाना, पैसा कमाना। चलो, चलो!" लड़कियों के दल के दल ने गोहुमन का जूठा खाया। अब तो गोहुमन बीवी अकेली नहीं है।

मौका देखकर हजारों साँपिनें घूम रही हैं। अब कुशलता की आशा व्यर्थ है।"

बिहार मिल्ट्री पुलिस के अत्याचार से आहत युवतियों ने जंगलों में आश्रय लिया था। खाने और पहनने को उनके पास कुछ नहीं था और ऐसे ही समय का लाभ उठाना ईंट भट्टो के मालिक जानते थे। इन क्षेत्रों में प्राकृतिक आपदाओं में बाढ़ अकाल सदैव आता रहे। यह हमेशा ही ईंट भट्टों मालिकों की मंशा रही है ताकि वे इस अवसर का लाभ उठाकर बड़ी सरलता से युवतियो को अपने ईंट भट्टों में ले जाकर शारीरिक वं मानसिक शोषण कर सके। बिहार मिल्ट्री पुलिस के अत्याचारों की गाथा जानने के बाद गोहुमन बीवी की जैसी कई महिलायें इन क्षेत्रों में शिकार के लिए पहुँच गई। मजबूर लड़कियों को भरपेट भोजन कराया और पहनने के लिए कपड़े दिये। दोनों ही आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद ग्रामीण गेहुमन बीवी के जाल में फंस चुके थें। इस भावनाओं को जानने के बाद लडकियों को ईंट भट्टों में ले जाने का प्रस्ताव पालकों के समक्ष रखते हुए सहमति के लिए एक सादे कागज पर अंगूठा भी लगवा लिया। दूसरे दिन कलकत्ता जाने के लिए रवाना हुए।

लेखिका ने यहाँ यह उल्लेखित किया है कि एक नरक में से इन युवतियों को निकालकर दूसरे महानरक में ले जाने के लिए थाना पुलिस जी.आर.पी के कई बड़े अफसरों ने गोहुमन बीवी के साथ साँठ–गाँठ कर आर्थिक लाभ प्राप्त कर इन नव युवतियों को भेजने में मदद की। लेखिका ने कहा है कि यदि ये अफसर चाहते तो इन गरीब नव युवतियों को ईंट भट्टों के नरक में जाने से रोक सकते थें। इस मुसीबत की घड़ी में गोहुमन बीवी शनीचरी को अपने साथ ले जाने में सफल रहीं। शनीचरी सहित गाँव की तमाम युवतियों को गोहुमन बीवी ईंट भट्टों तक पहुंचापाने में सुरक्षा व्यवस्था के सरकारी तन्त्र रेल्वे के सुरक्षा बल के सहयोग से सफल रही। इस अनैतिक कार्य में सबकी अपनी–अपनी हिस्सेदारी के अनुरूप आर्थिक लाभ भी मिला।

महाश्वेता देवी ने इस कहानी में शनीचरी के माध्यम से गीत प्रस्तुत किया हैः

मेरी बच्ची बच जाती खा के कंद–मूल।
मेरी बच्ची पहनती कानों में पत्ते के दूल
बन में लेकिन साड़ियाँ नहीं फलतीं,
तभी तो उसने कहा है मुझे–
ईंट–भट्टे जा रही हूँ, ओ माँ!
ईंट–भट्टे जा रही हूँ।

ईंट–भट्टो में रेजा कार्य के लिए बिहार से कलकत्ता लाई गई मजबूर लड़कियों को जिस प्रकार सपने दिखाये जाते है उसके ठीक उलट परिस्थितियाँ रहती है। ईंट–भट्टो में बनाये गये आवास किसी जेल खाने से कम नहीं होते है। सभी युवतियों को नौ माह तक ईंट–भट्टे मे कैद कर लिया जाता है। बाहरी दुनिया से इनका कोई संपर्क नहीं होता । कठिन परिश्रम के बाद एक हफ्ते के मात्र पंद्राह रुपये दिये जाते है। रात में थककर चुर हो चुकी इन रेजाओं के शरीर पर मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ता है। ईंट–भट्टे के गुंडे इज्जत को नीलाम करते है। इन युवतियों को ईंट–भट्टो का कोई गुंडा ड्राइवर या फिर मुंशी अपनी हवस का शिकार बनाता है। उनकी अस्मत रोज तार–तार की जाती है। महिलाओं पर हो रहे अत्याचारों को रोकने वाला कोई नहीं होता है। इन ईंट–भट्टो में बिहार एवं बंगाल सरकार का कोई कानून लागू नहीं होता था क्योंकि कानून भट्टे मालिकों की रखेल बन गया था। पुलिस एवं गुंड़ो को पैसो से तौल दिया गया था। ऐसे में भट्टे मालिक समानान्तर सरकार चलाकर मनमानी कर रहे थे। रोकने वाले खुद बिक चुके थे। घर से अकेली ईंट भट्टो में पहुँची युवतिया नौ माह बाद वापसी में बिना विवाह किये अपने गर्भ में संताने लेकर लौटती है। इन संतानों को पैदाइश के बाद परिवार एंव समाज युवतियों और संतान को अपनाता नहीं है।

कुप्रथा का अंत

छुक–छुक,छुक–छुक आ गेल गाड़ी..... कहानी में महाश्वेता देवी ने कोल्हाटी समाज में प्रचलित कुप्रथा जिसके अनुसार परिवार की सबसे बड़ी लड़की को खुद उसके माता–पिता द्वारा बेचे जाने का उल्लेख किया है। ऐसी कुप्रथा जिसे परम्परा बता कर आर्थिक लाभ प्राप्त करते है। समाज की इस प्रवृत्ति के पीछे केवल अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए रुपये प्राप्त करना ही मकसद रहता है। इन रुपये की लालच ने बाजार में बिकने वाली लड़कियों के माता पिता को एक तरह से अंधा बना दिया । जिन्हें सामाजिक परम्परा के नाम पर अपनी ही बच्चियों के साथ हो रहे अत्याचार दिखलायी नहीं पड़ते है। इस कहानी कें माध्यम से समाज में हो रही इस कु–प्रथा का चित्रण किया है।

उसका पहला चाबुक, अम्मी–बप्पा पर पड़ा, उसके बाद नरसी पर! भाई के माथे से खून टपकने लगा। वे सब गिरते–पड़ते भागने की राह खोजने लगे। छाबू सालों से जमा, अपना आक्रोश मिटाती रही।

नाबालिग छाबू को दो बार बाजार में नीलाम करने के बाद भी जन्मदाता माता पिता तीसरी बार भी बेचने के लिए ग्राहक लेकर आये। दो बच्चों की माँ को तीसरी बार छेरा उतराई ना पसंद थी उसके दूसरे खरीदार भालेराव द्वारा दिये गये चाबुक से अपनी माँ, पिता एवं भाई एवं ग्राहक पर हमला करती है। कोल्हाटी समाज की इस अमानवीय परम्परा ने उसके ह्रदय को कचोट कर रख दिया था। माँ, पिता, भाई, नाते–रिश्तेदार एवं खून के संबंधो को भुलाकर सारी सीमाओं को लांघते हुए उसके जिस्म को बार–बार बेचने वालो पर पूरी ताकत के साथ हमला करती है। ताकि वह स्वयं को तीसरी बार बाजार में बिकने से बचा सके। भविष्य में कोल्हाटी समाज की बेटियों को बेचने की प्रथा बन्द हो सके। इसी भाव के साथ किया गया विरोध एक आंदोलन के रूप में परिपक्व होता है। छाबू को समाज सुधारको का साथ भी प्राप्त होता है। सामाजिक संस्था के सहयोग

से इस कु–प्रथा को कुचलने में सफल होती है।

दुष्यंत कुमार ने बड़ी ही निर्भीकता के साथ कहा है किः

"सभ्यता का हर दिखावा व्यर्थ है
सामने नंगी खड़ी हो जब सदी।"

————::::————

अध्याय 05 महाश्वेता देवी की हिन्दी में अनुदित कहानियों में सामाजिक चेतना का विश्लेषण

हिन्दी कहानियों पर पश्चिमी कहानीकारों की कहानी–कला का प्रभाव प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों रूप में परिलक्षित होता है। हिन्दी कहानीकारों को बंगला व अंग्रेजी माध्यम में लिखी कहानियों से प्रेरणा मिली हैं। यद्यपि स्वतः बंगला कहानियों पर पश्चिमी कहानी–साहित्य का प्रभाव व्यापक रूप पड़ा, किन्तु हिन्दी के बहुत से कहानीकारों ने अपनी कहानियों का आधार सीधे बंगला कहानियों को भी बानाया। पश्चिम में कहानी–साहित्य का विकास अमेरिका, फ्रांस, रूस तथा इंगलैंड में अपनी स्वतन्त्र विशेषताओं को लेकर हुआ। हिन्दी की बहुत सी कहानियों में इनका प्रतिबिंब स्पष्ट रूप में देखा जा सकता हैं।

बंगला कहानियों का प्रत्यक्ष प्रभाव अज्ञेय, जैनेन्द्र कुमार, इलाचन्द्र जोशी आदि अनेक कहानीकारों की रचनाओं में देखा जा सकता है। बंगला कहानियों की नाटकीयता, गम्भीर मानव संवेदना तथा मानवीय संवेदना, प्रेम आदि का व्यापक प्रभाव हिन्दी की बहुत–सी कहानियों में मिलता है।

बंगला कहानियों में भारतीय तथा पश्चिमी दोनों कथा–साहित्यों का प्रभाव पड़ा। कहानी–कला के जो भिन्न–भिन्न प्रयोग इस समय हुए उनकी विशेषताएँ ये हैः

1. संस्कृत कहानियों के आधार पर ग्रहित कथाएँ।
2. लम्बे आख्यान वाली रचनाओं के प्रयोग।
3. संक्षिप्त रेखाचित्र।
4. कथावस्तु के विधान में जटिलता।
5. घटनाओं की प्रधानता।

अस्तु हिन्दी कहानियों की पृष्ठभूमि में भारतीय कथा साहित्य का जो इतिहास उपलब्ध है उसमें विषय, प्रतिपादन शैली तथा स्वरूप विकास की स्वतन्त्र तथा महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। इससे आगे हिन्दी कहानी का साहित्य क्रमिक रूप से आरम्भ हो जाता है।

बंगला से अनुदित इन कहानियों में व्यावहारिक भाषा का सुन्दर प्रयोग किया गया है, जिसमें संस्कृत तत्सम शब्दों की प्रधानता है तथा उर्दू शब्द भी कहीं–कहीं ग्रहण कर लिए गए हैं। यथा–

"शेखर ने एक बार अन्तःपुर के झरोखों की और अपनी कटाक्ष दृष्टि दौड़ाई। समझ गए कि वहाँ से आज सैकड़ों मृगनयनियों की कौतूहलपूर्ण वयग्र दृष्टियाँ इस जनता पर लगातार बरस रही हैं। कवि का ह्रदय एक बार एकाग्र भाव से उस ऊर्ध्व लोक में पहुँच कर अपनी विजय लक्ष्मी की वन्दना कर आया और मन ही मन बोला–यदि मेरी आज विजय हुई तो है देवी अपराजिते उससे तुम्हारे ही नाम की सार्थकता होगी।"

प्रयोग–काल (सन् 1900–1910) के इन दस वर्षो में मौलिक तथा अनुदित दोनों प्रकार की कहानियों की रचना हुई किन्तु मौलिक कहानियों का समय अनुदित कहानियों की अपेक्षा कुछ बाद में आता है। अनुदित कहानियाँ अंग्रेजी, संस्कृत तथा बंगला भाषाओं से ग्रहण की गई।

बंगला से अनुदित हिन्दी कहानियाँ और उनकी विशेषताएँ

बंगला साहित्य के भिन्न भिन्न अंगों का विकास तथा अनुदित दोनों रूप में हिन्दी की अपेक्षा कुछ पहले हुआ। 19 वीं शताब्दी के आसपास अंग्रेजी तथा संस्कृत कथा साहित्य की पूरी छाप मिलती है। कहानीकारों में बंगला कहानियों से पूरी प्रेरणा ग्रहण की है। जब सरस्वती ने सन् 1900 ई. में हिन्दी कहानियों का प्रकाशन किया तो बंगला कहानियों के हिन्दी अनुवाद भी हिन्दी पाठकों के समक्ष आने लगे।

बंगला साहित्य की विषयवस्तु, प्रतिपादनशैली, तथा कला संस्थान

की दृष्टि से हिन्दी अनुदित कहानियों में अधिक स्पष्ट तथा व्यापक रूप में सामने आता है। प्रेमचन्द, विश्वम्भरनाथ कौशिक, सुदर्शन, चतुरसेन शास्त्री, जैनेन्द्र कुमार, इलाचन्द्र जोशी आदि अनेक कहानीकारों पर पश्चिमी कहानी–कला का प्रभाव पड़ा है। प्रेमचन्द तथा अन्य विकास–कालीन कहानीकारों की कहानियों में, जो समकालीन समाज का चित्रण सुधारवादी दृष्टिकोण से किया गया है तथा वर्ग–संघर्ष के विविध रूपों को स्थान मिला है, वह सब रूसी तथा फ्रांसीसी कहानी–कला के प्रभाव के परिणाम–स्वरूप है। उपेन्द्रनाथ अश्क, जैनेन्द्र कुमार व इलाचन्द्र जोशी आदि की कहानियों में कथा–विधान तथा कथानक–निर्माण का जो कलात्मक चमत्कार है, चरित्र–चित्रण, चरित्र–विश्लेषण तथा आलोचना में जिस सूक्ष्म मनोवैज्ञानिकता की प्रधानता है तथा प्रतिपादन शैली की जो विविधता है, उन पर पश्चिमी कहानयों का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा है। अस्तु हिन्दी कहानियों के विवेचनात्मक अध्ययन में पश्चिमी कहानीकारों की कहानी–कला के प्रभाव का विशेष स्थान है।

किसी भी साहित्यिक कृति का उद्देश्य केवल मनोरंजन करना नहीं हैं, बल्कि जीवन की व्याख्या करना है। सामाजिक अवस्थाओं को उजागर कर समाज में चेतना जागृत करता है। कहानीकार कहानी के माध्यम से जीवन की व्याख्या करता है। यह व्याख्या उपन्यास की तरह विषद् नहीं होती ,बल्कि लेखक जीवन के प्रति एक दृष्टिकोण प्रस्तुत करने की कोशिश करता है। महाश्वेता देवी जीवन दर्शन के लिए प्रतिबद्ध कथाकार हैं, इनकी कहानियों में उनकी अन्तर्दृष्टि एवं विशिष्ट उद्देश्य व्यक्त हुए हैं। महाश्वेता देवी ने अपने कहानियों, उपन्यासों, कविताओं से अपनी विचारधारात्मक यात्रा को साकार किया। इनका पूरा रचना–संसार बहुत विशाल हैं। इनके पात्रों में जीवन के विविध रुप–रंग दिखाई पड़ते हैं।

एक क्रांतिदृष्टा साहित्यकार का रचना संसार समाज के लिए प्रेरणा–स्रोत होता हैं। मुंशी प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, निराला आदि इस मायने में विस्तृत फलकवाले लेखक साहित्यकार थे। इनका

व्यापक रचना–संसार था। वे सीमित और संकीर्ण विषयों पर रचना नहीं किया करते थे। उनका लेखन समाज के लिए दिशा देने का काम करता था। उत्तम कोटि का लेखक दार्शनिक एवं वैचारिक चिन्तन में अग्रगामी होता है। वह अपनी रचनाओं में न केवल समाज को देखता है बल्कि समाज भी उसकी रचनाओं खुद के प्रतिबिम्ब को देखता, समझता और तदनुरुप सुधार करता हैं।

महाश्वेता देवी जो एक महान रचनाकार हैं उन्होंने, अपनी रचनाओं में विचारों, सिद्धान्तों व सामाजिक बातों को समय और व्यवहार की कसौटी पर कसा। सबसे बढ़कर उन्होंने प्रत्येक सिद्धान्त को जनसामान्य की दृष्टि से निकर्ष पर तोला। जो सिद्धान्त उन्हें जनता से ज्यादा निकट वैज्ञानिक और प्रगतिशील लगे, उसे अपनी रचना संसार का आधार बनाया। महाश्वेता देवी की विचारधारात्मक यात्रा भी दुनिया को बदलने मे विश्वास करती है। इन्होंने समाज के संघर्ष को अपने रचनाकार्य में अभिवयक्त किया है।

महाश्वेता देवी द्वारा लिखी गई मूल रचनाओं ,कहानियों, उपन्यासों, सम्पूर्ण भारत वर्ष के बुद्धजीवी वर्ग ने महसूस किया। अलग–अलग जाति समुदाय वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले, इस देश के गरीबों, आदिवासियों, दलितों के लिए सोच रखने वाले प्रत्येक भाषा–भाषी साहित्यकार ने महाश्वेता देवी की रचनाओं का गहन अध्ययन करने के बाद इन रचनाओं को प्रत्येक वर्ग में पहुँचाने का बीड़ा उठाया। देश में बंगाली भाषा में रचित इन रचनाओं के ज्ञान के प्रकाश को सभी तक पहुँचाने के लिए कन्नड़, मलयालम, तेलगू, गुजराती, मराठी, उड़ीया, हिन्दी, आदि भाषाओं में अनुवादित किया गया है।

महाश्वेता देवी के साहित्य में समाहित ज्ञान का प्रकाश केवल देश तक ही सीमित नहीं रहा। अध्ययनशील समाज में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अनेक भाषाओं में प्रकाशित किया गया। उनकी कहानी 'ऑपरेशन बसाई टुडु' इतालवी और फ्रेंच भाषा मे भी अनुवादित है। बंगला भाषा में लिखी गई झांसी की रानी सागरी और मंदिरा सेन गुप्ता द्वारा अंग्रेजी में अनुवाद किया गया। देश में सर्वाधिक बोली एवं

पढ़ी जाने वाली हिन्दी में उनके कार्यो का प्रकाशन, रामकृष्ण प्रकाशन एवं वाणी प्रकाशन द्वारा किया गया है।

मूलरूप से बंगाली भाषा में लिखी गई 1084 की माँ उपन्यास का अरण्येर अधिकार में लीला सरकार द्वारा किस भाषा में? अनुवादित किया गया है (जिसका प्रकाशन हैदाराबाद बुक ट्रस्ट हिमायत नगर हैदराबाद द्वारा किया गया) तेलगू में श्री श्री गणेश महिमा 1084 की माँ, गीता रंगस्वामी द्वारा अनुवादित है। गुजराती भाषा में सुकन्या जवेरी द्वारा 'अरण्येर अधिकार' का अनुवाद किया गया है जिसका प्रकाशन एस.ऐ.डी.बी प्रकाशन, अहमादाबाद द्वारा किया गया है।

मराठी में उनकी कई उपन्यास श्री विद्या प्रकाशन अष्टभुजा रोड पुणे में उपलब्ध है। अनन्त महापात्रा द्वारा उड़िया भाषा अरण्यर अधिकार का अनुवाद किया गया है। जिसका प्रकाशन ग्रंथ मंदिर कटक है। गायत्री चक्रवर्ती द्वारा भी अंग्रेजी में कहानियों का अनुवाद किया गया है। शमीक बंधोपाघ्याय द्वारा अंग्रेजी में नाटकों का अनुवाद किया गया है। साथ ही 1084 की माँ, उर्वशी, बयान आदि शामिल है। यह रचनाएं 1986 से 1997 के मध्य रची गई। गायत्री चक्रवर्ती और शमीक बंधोपाघ्याय द्वारा अंग्रेजी के 'ऑपरेशन बासई टुडु' और 'द्रोपदी' इन दो प्रसिद्ध कहानियों का अनुवाद किया गया।

कन्नड़ भाषा में द्रोपदी, स्तन दायनी, मकर शवर नामक श्रीमती एच.एस द्वारा अनुवादित है। जिसका प्रकाशन सन् 1996 में बेली चुक्की प्रकाशन द्वारा किया गया। इसके द्वारा हजार चौरासी की माँ एवं रूदाली उपन्यास का प्रकाशन श्रीमती एच.एस द्वारा प्रकाशित है। जिसका प्रकाशन अंकिता प्रकाशन 1998 में किया गया और कर्नाटक साहित्य अकादमी 1998 में इस रचनात्मक कार्य के लिए सबसें अच्छे अनुवाद के रूप में पहला स्थान दिया गया है। कुलपुत्र बेटे हंट, दौलती, पैटरोडेटिकल वर्ष 2006 में श्रीमति एच.एस द्वारा अनुवादित है।

उनकी आदिवासी पत्रिका बोर्तिका में लिखित कई बंगाली रचनाओं

का अंग्रेजी भाषा में सम्पादन मैत्रीय घटक द्वारा 1989 में किया गया। क्यों–क्यों लड़की आदिवासी लड़की मायना पर आधारित 'क्यों–क्यों लड़की' का अनुदित हिन्दी, मलयालम, कन्नड़, गुजराती, अंग्रेजी, मराठी में उपलब्ध है। तमिल में गिरीष कर्नाड द्वारा अनुवादित किया है।

सन् 1984 में प्रकाशित अपने श्रेष्ठ गल्प की भूमिका में महाश्वेता देवी ने लिखा है "साहित्य को केवल भाषा, शैली की कसौटी पर रख कर देखने के मानदण्ड गलत हैं। साहित्य का मूल्यांकन इतिहास के परिप्रेक्ष्य में रख कर न देखने से उसका वास्तविक मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। मैं पुराकथा, पौराणिक चरित्र और घटनाओं को वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में फिर से यह बताने के लिए लिखती हूँ कि वास्तव में लोक–कथाओं में अतीत और वर्तमान एक अविच्छिन्न धारा के रुप में प्रवाहित होते हैं। यह अविच्छिन्न धारा भी वायवीय नहीं है, बल्कि जात–पात, खेत और जंगल पर अधिकार और सबसे ऊपर सत्ताधारी वर्ग की ,सत्ता के विस्तार तथा उसे कायम रखने की, पद्धति को केन्द्र में रख कर निम्न वर्ग के मनुष्य के शोषण का क्रमिक इतिहास हैं।"

लेखिका की अधिकतर कहानियों के केन्द्र बिन्दु आदिवासी मनुष्य हैं, जो समाज की मूल धारा से विच्छिन्न होकर संस्कार तथा इतिहास के राज्य में निर्वासित हैं। इन कहानियों के ये पात्र कभी बहुत निची जात के हैं, तो कभी अत्यंत उपजाति के। इस देश में आर्थिक शोषण ने बहुत दिनों से धार्मिक संस्कारों के मायाजान का विस्तार किया है और उसकी आड़ से लेकर शोषक वर्ग शोषितों को एक मायावी अंधकार से आच्छन्न करने में समर्थ हुआ हैं। जनजातियों में लोक–विश्वास का यह भयंकर प्रतिगामी आकर्षण महाश्वेता देवी को विशेष रुप से चिंतित करता है। अपनी कहानियों में जिस समाज को वे चित्रित करती हैं और जिसके प्रति क्रमशः उनका आग्रह–इधर और अधिक बढ़ा है, उनके जीवन के यथार्थ और इतिहास की खोज में वह जितना ही उनके पास गयी हैं, उतना ही उनके जीवन, जीविका और

अधिकारों के आन्दोलनों के साथ जुड़ गयी है। उस समाज की संस्कृति के साथ प्रत्यक्ष परिचय के सूत्र से ही उन्होंने इस विश्वास से जगत को देखा और जाना है। इस विश्वास में जो गौरव–बोध है, वही गुलामी की जंजीरों और प्रवंचना को आशीर्वाद मान कर स्वीकार करने की युक्ति बन जाता हैं। मिथ अथवा पुराकथा और लोक कथा को रमणीय बना कर दिखाने की जो प्रवणता इस देश में एक अद्‌भूत अनैतिहासिकता का आश्रय लेकर जीवित है, अथवा कभी मार्क्सवादी तरीके से औपनिवेशिक उत्तराधिकार के विरोधी अन्य उत्तराधिकार के रुप में जिसका सम्मान किया जाता है और धुंधले ऐतिहासिक–विलास की आड़ में निर्मित जिस सुरंग में एक और विज्ञान–चर्चा की भाषा के रूप में अंग्रेजी के शब्दों का प्रचुर प्रयोग दूरस्थ सत्ता–सूत्र के अदृश्य शासन का द्योतक है, तो दूसरी ओर वह गांव और शहर की संस्कृति के बीच व्यवधान का भी प्रमाण प्रस्तुत करता है।

बसंत के ग्राम–दर्शन और उसके दृष्टिकोण के बीच एक लम्बे समय तक जो दूरी विद्यमान थी, उसी का परिचय देता है बंगला के वाक्यों में विजातीय अर्थात अंग्रेजी शब्दों का बाहुल्य–"यहां पर अपुष्ट, क्षयप्राप्त प्रतिरोधहीन मानव शरीर और कालाज एघ्बंडनिंग, ओबलाइज, "रिजीत", "एकेडेमिक आकर्षण"। इस तरह के शब्द बसंत की चर्चित बौद्धिकता के संस्कार से उठ कर प्राचीन निम्नवर्गीय अभिज्ञता के साथ संपर्क स्थापित करने के उसके प्रयासों को जैसे एक निर्दिष्ट मात्रा में अवरुद्ध करना चाहता हैं। यह व्यवधान दो व्यक्तियों के बीच के घनिष्ठ आदान–प्रदान और उसमें से उभरते हुए मानवीय संपर्क को तोड़ देता है। जैसे बांयेन कहानी में, वैसे ही बेहुला कहानी में भी यह प्रक्रिया दोहरायी जाती है। दोनों ही कहानियों में संस्कारों के बीच से उभरते हुए अन्यतम समाजबोध का यह जो दीप्त उत्ताप है, उसे एक संस्कारमुक्त अन्यतम पवित्रता अथवा मर्यादा के स्तर पर प्रतिष्ठित करने के लिए ही जैसे महाश्वेता देवी इन्हें एक जीवनदायिनी मृत्यु में पर्यवसित करती हैं। बेहुला कहानी एक भयमुक्त, संस्कार–विरोधी वातावरण में समाप्त होती हैः

"गाँव के लोगों का शोक ,कालाज के प्रति उनका भय, है दो नश्कर के प्रति उनका गुस्सा सब कुछ उस प्रज्वलित अग्नि की तरह उनके दिलों में प्रज्वलित क्रोध में बदलते गये। शायद इसीलिए आग और भी जोर से धू–धू कर जल उठी। "अपनी मृत्यु के समय श्रीपद जिस मुक्त, मर्मभेदी दृष्टि को लेकर, देखते–देखते, जानते–जानते और समझते–समझते मृत्यु को वरण करता है, उसी मृत्यु में इस मुक्ति का अहसास निहित था।

5.1 सकारात्मक चेतना पर आधारित कहानियाँ

सकारात्मक पक्ष जीवन एवं समाज का परिवर्तनशीलता का भाव है। इसके माध्यम से उर्जा, जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा एवं भविष्य निर्माण के लिए व्यक्ति दृढ़संकल्पित होता है। महाश्वेता देवी की कहानियों के मुख्य पात्रों में बांयेन की चण्डी ने ट्रेन दुर्घटना को बचाकर डायन कुप्रथा को समाप्त करने की सकारात्मक चेतना जागृत की। महाश्वेता द्वारा लिखित कहानी मूर्ति के दीनू ठाकुर ने विधवा–विवाह के लिए युवाओं को प्रेरणा दी। बीज में मुख्य पात्र दुलन गंजु ने मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी वेतन के अधिकार से वंचित करने वाले जमींदारी प्रथा को समाप्त किया। छुक–छुक आ गेल गाड़ी कहानी में छाबू द्वारा वेश्यावृत्ति को समाप्त करना। रांग नंबर कहानी में संयुक्त परिवार की स्थापना उसी प्रकार प्रेतछाया कहानी में युवाओं को भविष्य निर्माण को लेकर चयनित विषय पर गंभीरता पूर्वक कार्य करने एवं शनीचरी कहानी में ईंट भट्टों मे महिलाओं के साथ होने वाले दैहिक शोषण को समाप्त करने के लिए सकारात्मक पक्ष को उजागर किया है। ताकि समाज में व्याप्त अव्यवस्थाओं को समाप्त किया जा सकें।

बांयेन

इस कहानी में डकैत ट्रेन लूटने के लिए पटरी पर बांस का पहाड़ बना कर अवरोध उत्पन्न करते है। जिसे रात के अंधेरे में भी चण्डी डकैतो के इस अपराधिक कृत को देख लेती है। रेल को इस दुर्घटना

से बचाने के लिए पूरी ताकत के साथ डाकुओं का विरोध करती है और बांस के पहाड़ को पटरी से हटाने का आदेश डाकुओं को देती है। चण्डी को आभास था कि ट्रेन की टक्कर बांस के पहाड़ से हुई तो निश्चित रूप से इस दुर्घटना में कई लोगों की जान जायेगी। दूसरी ओर चण्डी की यह सोच उसके सामान्य महिला होने का प्रमाण था।

"तुम लोग गाड़ी के सामने बांस डाल रहे हो, गाड़ी को गिराना है क्या? और फिर भागे जा रहे हो? क्यों? मेरे डर से? पहले ये बांस परे फेंको, नहीं तो सर्वनाश हो जायेगा।"

वे लोग रेल लाइन पर से सारे बांस नहीं हटा पाये। अब सर्वनाश को रोक पाना संभव न था। समाज हमेशा से यही करता आया है। इन्हीं में से एक दिन एक आदमी ने ढोल लहरा कर उसे बांयेन बना दिया था।

कामकाजी महिला चण्डी डोम जिसे समाज के ही कुछ अंधविश्वासी लोगों द्वारा बांयेन बनाया था। इन्हीं में से कुछ लोग डकैत बन ट्रेन को लूटने की नियत से पटरियों पर बांस का पहाड़ बना दिया था। रेल पटरियों के किनारे गाँव से भगाई गई चण्डी रहती थी। बांयेन डकैतो के इस कृत्य को देखकर उसी ओर दौड़ पड़ती है। अंधेरे लालटेन की रोशनी पर चण्डी को देख डकैत भाग खडे होते है। ये वही लोग है जिन्होंने सामान्य महिला को बांयेन बनाया था। इस भयानक अंधेरो को चीरते हुए डायन की आवाज डकैतो को पुकरती है। क्या कर रहे हो ? गाड़ी को गिराना चाहते हो। चण्डी को चिन्ता खाये जा रही थी इस बांस के पहाड़ से टकराकर ट्रेन दुर्घटनाग्रस्त हो जायेगी और कई बेकसूरों की जान चले जायेगी। ट्रेन के बांस के पहाड़ से टकरा जाने की घटना को लेकर सामान्य महिला से बांयेन बनी चण्डी सोच रही थी लेकिन एक बांयेन के मन में यह सवाल कैसे उठ रहे थे? उसे लग रहा था इस सर्वनाश को रोक पाना संभव नहीं है। लेकिन इस समाज से ही बने डकैत खुद के लाभ के लिए कितनो ही बेकसूरों का जीवन छीन लेते

हैं। इन्हीं लोगों ने एक सीधी–साधी पारिवारिक महिला को भूत प्रेत वाली बांयेन बना दिया। ढोल की आवज से पूरे गाँव में चण्डी के बांयेन होने की घोषणा कर दी थी और वही चण्डी आज ट्रेन में सवार बेकसूरों की जान बचाने के लिए परेशान थी।

वह सचमुच बांयेन है, तो उसके पाले हुए भूत–प्रेत आकर आज ट्रेन को रोकते क्यों नहीं? समाज तो यह कर सकता हैं। मगर वह तो यह भी नहीं कर सकतीं। कितनी असहाय है चण्डी ! अब क्या करे?

लालटेन एक हाथों में उठाये चण्डी लाइन पर दौड़ने लगी और दूसरे हाथ से गाड़ी को रोकने का इशारा करने लगी। वह चीखी, "आना मत, और आगे मत आना, यहाँ पहाड़ जैसा बांसों का टीला. ....."

अपने बांयेन होने का एहसास होता है और वह सोचती है कि अगर सचमुच ही वह बांयेन है तो उस मुसीबत की घड़ी में बांयेन के साथ में रहने वाले भूतप्रेत क्यों नहीं आ रहे? यही भूतप्रेत ही ट्रेन को क्यों नहीं रोक लेते? बार–बार यह सवाल उसके हृदय में उठ रहे थे परंतु वपत्ति की इस घड़ी में कोई भी उपाय नहीं सुझ रहा था। चंड़ी के कंधो पर समाज द्वारा लादा गया बांयेन का बोझ भी काम नहीं आ रहा था। वह लांछन भी अब इस मुसीबत की घड़ी में काम नहीं आ रहा था। उसे समाज केवल आरोपित कर रहा था। चंड़ी का एक ही लक्ष्य था किसी तरह वह रेलगाड़ी को पटरी पर डाकुओं द्वारा बनाये टीले से टकराने से रोक सके। इसलिए लालटेन को हाथ में उठाकर चण्डी अपने प्राणों की चिन्ता किये बगैर रेलपटरी पर तेजी से दौड़ने लगी और पूरी ताकत से चिल्लाकर दूसरा हाथ हिला–हिला कर ट्रेन को रोकने का असफल प्रयास कर रही थी। उसके मन की तीव्र इच्छा थी कि किसी तरह ट्रेन रूक जाये और पटरी पर बने बांस के पहाड़ नुमा टीले से टकराने के पहले ही रूक जाये।

ट्रेन रूक नहीं रही है। किसी दुदाँत बालक की तरह कोई बाधा

न मानती हुई वह आकर एकदम से चण्डी के ऊपर चढ़ गयी।

प्राण देकर ट्रेन को दुर्घटना से बचाने के लिए चण्डी का नाम बहुत दूर तक पहुंचा, सरकार के पास तक थी।

पटरियों पर दनदनाते हुए दौड़ती ट्रेन को रोकने की कोशिश में चण्डी के सारे प्रयास असफल हो चुके थे। लेकिन ट्रेन को रोकने की कोशिश में चण्डी पटरियों पर ही दौड़ती रहीं, एक पल ऐसा आया कि ट्रेन चण्डी पर चढ़ने के बाद रूकी। तब तक चण्डी के प्राण निकल चुके थे। समाज से अपने माथे पर बांयेन का लांछन लिए बहिष्कृत समाज की सताई हुई असहाय निर्बला एक सामान्य महिला ने अपने प्राण की आहुति देकर कई बेकसूरों का जीवन बचा लिया। ट्रेन डकैतों द्वारा पटरी पर बनाये बांस के टीले से टकराती तो न जाने कितने ही ट्रेन पर सवार लोग मौत को गले लगाते। चण्डी ने अपने प्राण देकर ट्रेन को दुर्घटना से बचाने के इस महान कार्य का नाम दूर–दूर तक पहुंचा सरकार तक भी इसकी जानकारी हुई। समाज व सरकार दोनों ही सोचने पर मजबूर थे कि भूत प्रेतों की साथी सामान्य महिला से समाज द्वारा बनाई गई बांयेन लोगों की जान कैसे बचा सकती है।

"बड़े साहस का काम है। उसने बड़े साहस का काम किया। हमारे महकमे के सभी लोग उसकी तारीफ कर रहे है। वह तुम लोगों के परिवार से थी?"

सभी चुप रहे। समाज का हर आदमी एक–दूसरे का मुंह ताक रहा था। सिर नीचा किये जमीन में आंखे गड़ाये किसी ने कहा, "जी। हमारी ही जात की थी।"

चण्डी द्वारा मानव हित में किये गये इस कार्य पर पुलिस के दरोगा ने गांव में आकर डोम प्रजाति के लोगो को बताया कि तुम लोगो की कहानी मुझे मालुम है। लेकिन चण्डी ने साहस का काम किया है। सरकार से लेकर प्रत्येक व्यक्ति जिसने भी सुना चण्डी की तारीफ करता रहा। चण्डी को सम्मानित करने के लिए शासन ने

अफसर भेजा है क्योंकि वो तुम लोगों की प्रजाति की थी। चण्डी के इस कार्य को जानने के बाद चण्डी को समाज से बहिष्कृत करने वाले सभी लोगों को इस अपराध का बोध हो रहा था। अपने इस कृत के कारण सबकी नजरे झुक गई थी। किसी एक ने हिम्मत करके स्वीकार किया कि वह हमारे ही बिरादरी की थी। तभी चण्डी पुत्र भगीरथ आश्चर्य चकित होकर उसकी माँ को समाज से निकालने वालो को देखने लगा क्योंकि इन्हीं लोगों ने उसकी माँ को समाज से और अपनी जाति से निकाल दिया था। लेकिन आज उसकी माँ ने अपने प्राण त्याग कर किये गये महान कार्य के आगे पूरा समाज स्वयं गर्व महसूस कर रहा है। अर्थात् यह कहा जा सकता है कि चण्डी को निकालने वाले समाज ने कर्म प्रधान चण्डी को स्वीकार कर लिया।

"तुम सभी लोगों को तो सरकार मैडल नहीं देगी।"
"सर। मुझे दीजिए। भगीरथ आगे आया।"
"तू कौन है?"
"वे मेरी मां थी।"

लेकिन भगीरथ कहीं न कहीं दुखी था कि उसकी माँ की इसी समाज ने उपेक्षा की थी। इसलिए वह दरोगा व सरकारी कर्मचारी के समक्ष कहता है कि पूरे समाज को सरकार सम्मानित नहीं करेगी इसलिए यह मैडल रूपी सम्मान को पाने का मैं ही अधिकारी हूँ। तभी सरकारी अफसर उनसे पूछते है कि यह दावा करने वाले बालक तुम कौन हो। इस पर पूरी ताकत व पूरे गर्व के साथ कहता है कि चण्डी उसकी माँ थी।

गांव वालों ने जबरदस्ती चण्डी को बच्चों का खून पीने वाली बांयेन बना दिया था। बांस के पहाड़ से ट्रेन को टकराने के पूर्व चण्डी ट्रेन को रोकने के लिए इंजन के सामने कूद पड़ती है। ट्रेन दुर्घटना को रोकने के पुरजोर कोशिश में चण्डी को अपनी जान गवानी पड़ती है। कई निर्दोषों की जान बचाने के इस महान कार्य के लिए मरनोपरांत चण्डी का सम्मान सरकार द्वारा किया जाता है। चण्डी के

इस महान कृतव्य ने बांयेन बनाने वाले निर्लज्ज समाज को शर्मसार कर दिया। मर कर भी चण्डी समाज को यह संदेश देने में सफल रही कि एक महिला जो किसी की पत्नी, माँ होती हैं वह कभी भी डायन या टोनही नहीं बन सकती।

यह विडम्बना समाज में आज भी कायम है। बिना किसी वैज्ञानिक प्रमाण के अंधविश्वासी समाज द्वारा टोहनी एवं डायन के नाम पर महिलाओं को प्रताड़ित किया जाता है। महाश्वेता देवी के सकारात्मक पक्ष बांयेन टोनही या डायन जैसी चरित्र को पूरी तरह झुठला दिया। इन चरित्र का जीवन और समाज में न तो कोई स्थान है और न हीं कोई अस्तित्व है। बांयेन कहानी का सकारात्मक पहलू समाज द्वारा ठुकराये जाने के बाद भी महिला में किसी भी प्रकार का आवेश, द्वेश या बदला लेने की प्रवृत्ति नजर नहीं आती है। पूर्णतः समाज के प्रति समर्पित महिला द्वारा अपने प्राणों की आहूति देकर भी सैकड़ों हजारों लोगों का जीवन बचा लेती है।

बीज

बीज कहानी पूर्णतः खेतीहर मजदूरों एवं जमींदार के मध्य होने वाले विवादों के संघर्ष की कहानी है। जमींदार द्वारा सरकारी अधिकारियों तक की पहुंच का लाभ उठाते हुए लगातार मजदूरों के हक का हनन किया जाता हैं। श्रम के निर्धारित घंटों से ज्यादा कार्य करवाकर तय मजदूरी नहीं दी जाती। लेखिका ने इस प्रसंग में उल्लेखित किया है किः

"बहुत कमजोरी है, करन भूल मत करना। सभी सरकारी लोग लछमन की मदद करेंगें। वह बंदूक उठायेगा, तो देखेंगें भी नहीं और तुम लोग लाठी उठाओगे तो पकड़े जाओगे। हरिजन सेवा संघ में मदनलाल जी है। सच्चे आदमी हैं। सभी उनको पहचानते हैं। उन्हें अपने साथ रखो।"

जमींदार लछमन सिंह के बढ़ते अत्याचार एवं मजदूरो के अधिकारो के हनन तथा उसके खिलाफ संघर्ष के लिए दूलन गंजू ने

तामाड़ी ग्राम के हरिजन जाति के करन को अपने गाँव कुरूड़ा लाया ताकि मजदूरो को उसका हक दिलाया जा सके। करन हरिजन प्रमुख था। जिसके द्वारा दो सौ किसानों के साथ संघर्ष करते हुए आठ आने मजदूरी के लिए ग्राम तामाड़ी में लछमन सिंह के गेहूँ के फसल को आग लगा दी थी। इस आरोप के कारण बिहार के हजारी बाग जेल में दो साल सजा कांट कर लौटा था। संघर्ष के पूर्व दुलन ने करन को बताया कि हम लोग कमजोर है क्योंकि सरकारी अफसर बी.डी.ओ, एस.डी.ओ और दरोगा सभी लछमन सिंह के हाथों बिक चुके है। जमींदार के बंदूक उठाने पर भी कोई कार्यवाही नहीं होगी। जबकि हम लोग लाठी भी उठायेगें तो पकड़े जायेंगें। इसलिए हरिजन सेवा संघ के मदन लाल ने अपने साथ रखा जिसका लाभ भी ग्रामीणों को मिला। बिना विवाद के मक्के की फसल कांटी गई। सभी को आठाने रोज की मजूरी भी मिली।

महाश्वेता देवी इस कहानी में आगे कहती है किः

वैकल्पिक नौकरी की व्यवस्था करके आये थे, इसीलिए एस.डी.ओ. साहब ने बड़े उत्साह से खेत–मजदूरों को बताया कि वे लोग पांच रुपया अस्सी पैसे की दर से मजदूरी पाने के हकदार हैं। यही बात उन्होंने जमीदारों को भी बतायी। .....

तो फिर क्यों हम लोग चालीस पैसे और भात पर फसल काटें? पांच रुपए अस्सी पैसे चाहिए। भात नहीं चाहिए।

इसी बीच नये एस.डी.ओ. की नियुक्ति तोहरी अंचल मे होती है। वे भी जमींदारों के प्रभाव से परिचित थे। इसलिए अपनी दूसरी सरकारी नौकरी की व्यवस्था कर चुके थे। इसके बाद उन्होंने ग्रामीणों को सरकार द्वारा तय मजदूरी का सच बताते हुए कहा कि खेतिहर मजदूर सरकारी दर पांच रुपये अस्सी पैसे प्रतिदिन प्राप्त करने के अधिकारी है। यही जानकारी नये एस.डी.ओ. ने लछमन सिंह व उसके जमींदार साथियों को भी बताया। लछमन सिंह की जमीने तोहरी अंचल के सभी गांव में थी। पुरूडिया गांव के प्रधान के लड़के अशर्फी महतो ने कहा कि करन की बात याद है तीन साल

हो चुके लेकिन इस बार एस.डी.ओ. अच्छा अफसर लगता है। इस बार चालीस पैसे और थोड़ा अनाज के बदले फसल नहीं काटेंगें हमें अनाज नहीं चाहिए। पूरी मजदूरी पांच रुपये अस्सी पैसे की दर पर काम करेंगें।

लछमन के अघोषित कब्रिस्तान में दूलन द्वारा फसल लगाये जाने की बात लछमन को पता चलते ही वह सीधे दूलन के पास खेत से पहुंच गया। लछमन दूलन को क्रोध में गालियाँ बक रहा था। दूलन ने उसका पैर खींच कर घोड़े से सीधे खींचकर नीचे पटक दिया। लछमन की बंदूक भी उसके हाथ से छूटकर दूर जा गिरी थी। तब तक दूलन ने बंदूक उठा ली। बंदूक के बट से लछमन पर जोरदार प्रहार कर उसका दाहिना हाथ तोड़ दिया। असहाय जमीन पर पड़ा लछमन इतना कुछ होने के बाद भी एक हरिजन के सामने अपने प्राणो की रक्षा की भीख मांगना नहीं चाहता था। दूसरे हाथों से पत्थर उठाकर दूलन को मारने का प्रयास किया। दूलन ने उसी पत्थर से लछमन के सिर पर वार करता रहा जब तक की उसकी जान न निकल जाये। और उसकी लाश को घोड़े से बांधकर दौड़ा दिया। दूलन को लछमन सिंह के आदमियों का और मौत का भय नहीं था लछमन सिंह जैसे अत्याचारी को मार कर अपने छाती से सात लाशों के बोझ को कम करने की ठान चुका था।

लछमन सिंह की लाश एक गड्ढे में गिरने के बाद उसे पत्थरों से भर दी। लछमन सिंह की लाश के ऊपर नागफनी एवं कटीले झाड़ियों को लगाया। लछमन की खोज हुई पर वह लापता रहा। लछमन सिंह के मौत के बाद पूरे गाँव को इस समस्या से छुटकारा मिल चुका था तब दूलन ने कहा कि अब सभी लोग मेरे खेत का धान कांट सकते है। लेकिन इसका उपयोग अनाज के रूप में नहीं किया जायेगा बल्कि बीज बनाकर सभी अपने–अपने खेतो में फसल की पैदावार करेंगे। ऐसा क्यों? पूछने पर कारण वश दूलन ने कहा कि इसके पीछे लम्बी कहानी है। मैने बहुकिमती खाद का प्रयोग कर पैदावार ली है। इसलिए यह धान नहीं बीज है।

लेखिका ने जमींदारी जैसी सामाजिक अव्यवस्था को मुख्य पात्र दुलन के माध्यम से समाप्त करवाया ताकि श्रम की जीत हो सके और मजदूरों को उनका अधिकार शासन द्वारा निर्धारित न्यूनतम वेतन मजदूरी वेतन के रूप में प्राप्त हो सके। लेखिका ने यह सकारात्मक पक्ष को उजागर करते हुए स्पष्ट किया है कि श्रममेव जयते अर्थात् श्रम की सदा विजय हो। जिन मजदूरों द्वारा जमींदारी अथवा बंधुवा मजदूर प्रथा समाप्ति के लड़ाई में अपना बलिदान दिया उन्हें भी सदैव के लिए अमर बना दिया है।

मूर्ति

सकारात्मक पहलू के अंतर्गत दीनू दुलाली से प्रेम करना और उस प्रेम को अपने चरम तक पहुँचाने के लिए बाल विधवा से विवाह करना चाहता था परन्तु इस असफलता के बाद स्वयं को मातृभूमि की रक्षा के लिए क्रांतिकारी बन स्वतन्त्रता संग्राम की लड़ाई में अपने प्राण न्योछावर कर आहुति दी थी। आजादी के 30 वर्ष पश्चात् दीनू अर्थात् दीनदयाल ठाकुर की स्वतन्त्रता संग्राम की लड़ाई में संघर्ष की गाथा ज्ञात होने पर सरकार द्वारा उसके गृह ग्राम छातीम में शहीद स्मारक बनाकर दीनदयाल ठाकुर की मूर्ति स्थापना किया जाना।

दीनू के बाप की आँखे अप्रकृतिक हैं। किसी कारणवश जीवन का केंद्र–बिंदु विस्थापित हो गया है। बोले, "दीनू ने कहा है कि विधवा–विवाह शास्त्र और कानून–सम्मत है। वह दुलाली से विवाह करेगा।"

दीनू एवं दुलाली के मध्य प्रेम संबंध का खुलासा होने पर दीनू के पिता पुरोहित ने दुलाली के पिता से कहा कि दीनदयाल विधवा–विवाह करना चाहता है और शास्त्रों एवं कानून भी इससे सहमत है और यह विधवा–विवाह दुलाली से करेगा। कुछ समय तक दोनों ही दीनू के विचार को लेकर शान्त रहे लेकिन विवाह को लेकर राजी न हुए। दोनों एक दूसरे के बच्चों को दोषी ठहराते रहे। कुछ देर बाद दुलाली के पिता ने पुरोहित से कहा कि इस समस्या का एक ही

उपाय है। आप दीनदयाल की शादी कर दीजिए। मैं अपनी लड़की को काबू में कर लूँगा। बीमारी के कारण दीनदयाल का दिमाग खराब हो गया है वह बाल विधवा–विवाह की बात करता है इस विधवा–विवाह को पंचायत, समाज और हम दोनों के परिवार कभी भी स्वीकार नहीं करेंगे। ये प्रेम आदि का कोई मतलब नहीं है।

महाश्वेता देवी ने इस कहानी के माध्यम से समाज को अवगत कराना चाहा कि बाल विवाह अनुचित है कम उम्र में ही विवाह के उपरान्त पति की मृत्यु हो जाने से बाल–वधु को पहाड़ जैसा जीवन अकेले ही गुजर बसर करना पड़ता है। उस बाल वधू के हृदय में भी सुख–मय जीवन व्यतीत करने की मंशा रहती है। इसलिए उनके द्वारा मुख्य पात्र दीनू के माध्यम से विधवा प्रेम विवाह को इस सामाजिक समस्या के निराकरण के लिए उचित ठहराते हुए सकारात्मक पहल की है।

कुँअर बेचौन ने कल्पना के माध्यम से अपनी अनुभूतियों को इन पंक्तियों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

"दो चार बार हम कभी जो हँस हँसा लिए
सारे जहाँ ने हाथ में पत्थर उठा लिए
रहते हमारे पास तो ये टूटते जरूर
अच्छा किया जो आपने सपने चुरा लिए।
अब भी किसी दराज में मिल जाएगें तुम्हें
वो खत जो तुम्हें दे न सके लिख लिखा लिए।
जब हो सकी न बात तो हमने यही किया
अपनी गजल के शेर कहीं गुनगना लिए।"

प्रेत छाया

प्रेत छाया कहानी में भी महाश्वेता देवी ने युवा वर्ग को संदेश देने का प्रयास किया है कि भविष्य निर्माण को लेकर वे गंभीर रहे। अनुशासन का पालन करते हुए रूचि वाले क्षेत्र में लगन एवं परिश्रम के सहारे आगे बढ़े।

घोर अपमान से मर्माहत, विजय अपने घर लौट आया। जो काम उसने कभी नहीं किया, अखबार देखकर, भारत के बाहर, कहीं नौकरी के लिये दरख्वास्त भेज दी। भारत से बाहर, सूडान की तेल–खदान में नौकरी! अगर यह नौकरी मिल जाये, तो गनीमत! वह चला जायेगा वहां। यह जिंदगी यहीं फेंक जायेगा। वहां नये सिरे से जिंदगी शुरू करेगा।

चौतरफा असफलता के बाद विजय अधेड़ उम्र में अपनो के द्वारा विवाह के लिए किये गये व्यंग्य के बाद घर से बाहर निकलकर सर्वप्रथम प्रशंसक मंडल की लतिका राय साहित्य जीवन की अनुरागिनी, द्वीपान्विता के दरवाजे जा पहुंचा। उसे सिवाय दुतकार के कुछ न मिला। सभी दोस्त मित्रों के द्वारा विजय को उसके पूर्व रवैया के कारण ठुकरा दिया जाता है। उसे अपने ऊंचे कद से बनी छाया देखकर डर लगने लगता है और अपमान के बाद वह अखबार पढ़कर भारत से बहार सुडान की तेल खदान में नौकरी के लिए आवेदन करता है। ताकि नये सिरे से अपना जीवन शुरू कर सके।

लेखिका ने इस कहानी में सकारात्मक पक्ष रखते हुए स्पष्ट किया है कि अपने व्यक्तित्व में छिपे अहम को कभी भी प्रतिभा पर हावी नहीं होने देना चाहिए। अहम प्रधान होने पर व्यक्ति को नुकसान एवं असफलता प्राप्त होती है।

बाढ़

लेखिका महाश्वेता देवी ने बाढ़ कहानी के माध्यम से संदेश दिया है कि धरा पर प्रत्येक प्राणी के लिए भोजन अनिवार्य है। बिना भोजन के जीवन की कल्पना नही की जा सकती एक भूखा व्यक्ति भोजन प्राप्ति के लिए मान सम्मान को एक कोने में रख कर हर प्रकार से प्रपंच करता है। ताकि पेट की भूख रूपी ज्वाला को शांत कर सके। बाढ़ कहानी का मुख्य पात्र चीनिवास गरीबी एवं भूखमरी से त्रस्त था। स्वादिष्ट भोजन प्राप्ति के लिए दर–दर भटकता है।

चीनिवास की आजी सिर हिलाते–हिलाते कुछ कहते–कहते रुक

गयी। और तभी उन्हें ढोल की आवाज सुनाई पड़ी।.....

बाप रे। सचमुच क्या ब्राह्मण लोग सभी को बुला रहे हैं, सभी को खाना देंगे? चीनिवास की दादी कुछ समझ कर, कुछ बिना समझे बार–बार सिर हिलाने लगी। लगता है, यह बाढ़ भी गंगा की उसी बाढ़ की तरह है? सभी एक जगह उठेंगे, बैठेगे और एक साथ चूड़ा, भूजा बांट कर खायेंगें?

गाँव के सबसे बड़े ब्राह्मण आचार्य द्वारा भेजा गया निमंत्रण ढोल बजा कर उनके संदेश वाहको के द्वारा ग्रामीणों तक पहुंचाया जा रहा था। मुनादी से ग्रामीणों को बताया जा रहा था कि बड़े आचार्य जी के घर पर कीर्तन होगा देवी देवताओं की पूजा होगी। इसके बाद प्रसाद का वितरण सभी लोगों के मघ्य किया जायेगा और इसके पश्चात् आचार्य जी के घर आने वाले साधु संतो के सभी लोगों को दर्शन लेने एवं आशीर्वाद लेने का अवसर प्राप्त होगा। इस आयोजन में सभी को निमंत्रण है ऊँचे और निचली जाती के साथ कोई भेदभाव नहीं होगा ब्राह्मण एवं बागदी सभी इस समारोह में शामिल हो सकते हैं इस निमंत्रण को पाकर चीनिवास की दादी आश्चर्य चकित हो जाती है। सभी को खाना दिया जायेगा यह प्रश्न चीनिवास अपनी दादी से कहता है सिर हिलाकर दादी चीनिवास को सहमति प्रदान करती है। लगता है कि यह समारोह भी गंगा की बांढ़ की तरह ही होगा जहाँ सभी लोग एक साथ बैठकर भोजन करेंगें। चुड़ा और भुजा बांट कर खायेंगें। लेकिन खाना खाने की अभिलाषा के कारण चीनिवास चुड़ा एवं भुजा तक सीमित नहीं रहना चाहता वह आगे होकर दादी से कहता है कि नहीं दादी इस समारोह में भात पकेगा, दाल में घी मिलाया जायेगा और नारियल के साथ कुमड़े की सब्जी भी होगी एवं ग्वाले की महिलाओं ने इस समारोह में बहुत अधिक मात्रा में दही भी बनाया है जो समारोह मे शामिल होने वाले लोगों को खाने के सभी व्यंजनों के साथ परोसा जायेगा।

लेखिका ने बाढ़ कहानी में स्पष्ट किया है कि भूख कोई जाति

नहीं होती। भूख अमीर और गरीब के मध्यम की खाई जातिगत ऊंच नीच के भेदभाव को समाप्त कर देती है। भूख के कारण बाढ़ के पानी में मानव समाज द्वारा बनाई गई सभी सीमायें बह कर समाप्त हो जाती है।

छुक–छुक, छुक–छुक आ गेल गाड़ी.....

महाश्वेता देवी ने बताया कि छुक–छुक, छुक–छुक आ गेल गाड़ी. .....कहानी पूर्णतः सत्य घटना है। महाराष्ट्र के जामा खेड़ा, नागौर, फालट्न, डिकशूला, डोका क्षेत्र के कोल्हाटी समाज द्वारा समाज की व्यवस्था के तहत रोटी एवं रोजगार के लिए घर की बड़ी बेटी को कई–कई बार बाजार में बोली लगाकर नीलाम किया जाता था। इस सामाजिक व्यवस्था का विरोध करने पर पंचायत नायिका छाबू को तेजाब डाल कर मारने के लिए आतुर हो जाती है।

लेखिका ने इस अनुच्छेद मे लिखा है कि–पंचायत में तय हुआ कि छाबू को जान से घ्खत्म करने के लिये उस पर तेजाब उड़ेल दिया जाये। जब वह मर जाये, तो उसे उलटा करके जला डाला जाये।

कोल्हाटी समाज में सदियों से परिवार की सबसे बड़ी बेटी को नीलाम करने की परम्परा का विरोध करने वाली छाबू पंचायत की नजर में अपराधी बन चुकी थी। छाबू नाबालिग उम्र में ही अपने मां–पिता द्वारा दोबार बेची गयी। तीसरी बार बेचे जाने का विरोध करती है। माँ–पिता एवं भाई ने छाबू को जम कर पीटा। इसी अमानवीय परम्परा के समर्थन में खड़ी होने वाली पंचायत इसी रीति रिवाज को जारी रखने के लिए छाबू पर तेजाब डाला जाये। उसकी मौत हो जाने के बाद उल्टा करके जला देने का आदेश देती है। ताकि कोल्हाटी समाज के हाथ लड़कियों के साथ किये जाने वाले घोर पाप की इस प्रवृत्ति का दुबारा कोई विरोध न कर सके। कोई और कोल्हाटी समाज की बड़ी लड़की अपना भविष्य न गढ़ सके। लेकिन भटकन विमुक्त जाति मोर्चा के समाज सेवी लक्ष्मण गायकवाड़ की पंचायत में उपस्थिति को यह मंजूर नहीं था और पंचायत के इस

फैसले को लक्ष्मण गायकवाड़ ने मानने से साफ इंकार कर दिया और भरी पंचायत को धमकाया कि यदि किसी भी प्रकार का दबाव बनाया गया तो पुलिस प्रशासन के माध्यम से दण्ड दिलवाऊँगा।

महाश्वेता देवी ने कहा कि नायिका ने समाज सेवी लक्ष्मण गायकवाड़ को पंचायत का निर्णय मंजूर नहीं था। लक्ष्मण के साथ मिल कर छाबू ने समाज में लड़कियों को विक्रय करने की प्रथा के खिलाफ आन्दोलन चलाया। किशोरियों को इच्छा के विपरित नीलाम करने वाले समाज से इस प्रथा का अंत करना होगा। महाश्वेता देवी की नायिका मैट्रिक पास नहीं थी। फिर भी जन नेता बन कर सामाजिक बंधनों को चीर कर इस कुरीती की धज्जियां उठाकर खत्म करने में सफल रहीं। अनगिनत मंदाहीरामन छाबू के स्थापित ड्रामा थियेटर में काम कर रही है। दुःसाहसी मंदाहीरामन ने सुंदरी होने के साथ–साथ संगठन के पुरूष कार्यकत्ताओं के साथ कंधे से कंधा मिलाकर आत्मसम्मान की रक्षा करते हुए ऐसी प्रथा पर अंकुश लगा पाने में सफल रही।

भारत वर्ष

कुष्ठ रोग ठीक भी हो सकता है। रोगी कोढ़–मुक्त होकर समाज में रह सकता है, यह हकीकत उसे किसी ने कहीं बतायी। बड़ी सड़क पर आज भी चिराग नहीं जलते। रामांदा एक अभिशप्त ब्लॉक है। अटाई तो खैर, विस्मृत, परित्यक्त गांव है।

अटाई गाँव के सर्वाधिक कक्षा चार तक पढ़े लिखे रघुबर को कुष्ठ रोग हो जाता है इस रोग से पीढ़ित व्यक्ति रोग मुक्त होकर समाज मे रह सकता है। लेकिन इस सच्चाई से रघुबर अंजान था। इस कारण से वह आत्महत्या करना चाहता था। रामन्दा एक अभिशप्त ब्लॉक है और उसका अटाई गाँव परित्यागता गाँव है और इसके स्वास्थ्य केन्द्र में इस रोग से संबंधित दवाई होना तो दूर की बात है। जागरूकता के लिए एक पोस्टर तक नहीं था। कुष्ठ रोग की दवा बहुत महंगी आती है। इसलिए इस दवा को तैयार करने के लिए

किसी संस्था ने इच्छा जाहिर की। कहानियों की सकारात्मक चेतना से समाज का हित होता है। लेखिका द्वारा कहानियों के माध्यम से किया गया सकारात्मक चित्रण से नई ऊर्जा का संचार होता है।

5.2 नकारात्मक चेतना पर आधारित कहानियाँ

अपढ़ता, अज्ञानता, निरक्षरता के कारण शमशान घाट में क्रिया करम करने वाली प्रजाति डोम समाज बाहुबली वर्ग द्वारा एक मौत के लिए गृहस्थ पारिवारिक महिला को जवाबदार ठहराते हुये जबरिया बहिष्कृत कर, डायन रूपी बांयेन बना दिया जाता। इस पूरी कहानी में लेखिका द्वारा समाज के दो नकारात्मक पहलूओं को उल्लेखित किया गया है। एक गृहणी जो अपनी सम्पूर्ण जीवन का निर्वाहन करते हुए अपने पूरे परिवार का भरण पोषण कर रही थी। उसे गृहस्थ जीवन में लांछन लगाकर समाज से बाहर कर दिया गया। दूसरा पहलू न केवल उसे समाज से बाहर कर दिया गया बल्कि उसे मानव प्रजाति से बाहर कर भूत–प्रेत की प्रजाति में शामिल कर उसे बांयेन बना दिया। बांयेन वह चरित्र है जो किसी मासूम बच्चों के प्राण हरती है। अर्थात् उसे अमनुष्य की श्रेणी में डाल दिया। जाने–अनजाने में डोम समाज ने प्रकृति के खिलाफ कार्य करते हुए सामान्य महिला को भूत प्रेत की प्रजाति में शामिल कर लिया।

महाश्वेता देवी के शब्दों में समाज में उत्पन्न नकारात्मकता ही उनके कहानियों के विषय बने है। उन्होंने कहा कि एक पूरा साल, अनगिनत नामहीन, बेचेहरा, अंग–अवयवहीन यायावर लोगों को न देखती, तो कहती कि कहानी लिखने का बेचौन तकाजा, अपने अंदर हरगिज महसूस नहीं करती। यह बात तो मैं बखूबी जान गई थी कि इस राज्य के लोधा, खेडिया, शवर, ढिकोरा वगैरह कबीलों के बारे में आम–इंसान को भला दिलचस्पी कहां है? (19.12.99) दिल्ली विश्वविद्यालय में वहां के यायावार और विमुक्त सान्सी, कंजर, नट, छरा वगैरह कबीलों के बारे में चर्चा हुई है। मेरे अतिशय प्रिय, सज्जन और सुलेखक, एक कवि ने फरमाया–उन लोगों को मैंने नहीं देखा, देखने की कभी कोशिश भी नहीं की। यूं देखकर भी अनदेखा करना,

पहचानने की कोशिश से बचना–इस संदर्भ में महज आदिवासियों के प्रति ही क्यों, तमाम पिछड़ी उपेक्षित जातियों के प्रति, हजारों–हजार सालों से यही रवैय्या कायम है।

हम सब इसी उदासीनता, इसी तटस्थता का मोल चुका रहे हैं, अभी और चुकायेंगे। आदिवासियों के प्रति समाज की नकारात्मकता को उजागर किया।

बांयेन

समाज में अंधविश्वासी लोगों द्वारा बिना किसी वैज्ञानिक प्रमाण के कुतर्क के सहारे प्राकृत्तिक रूप मानव को अमानव बना दिया था। बांयेन कहानी का सबसे बड़ा नकारात्मक पहलू है। लेखिका ने इस कहानी के अनुच्छेद में सपष्ट किया है कि:

"बापू। आदमी को बांयेन कौन बनाता है?"

"विधाता।"

मलिन्दर ने अच्छी तरह देख लिया था कि भगीरथ के आस–पास दोपहर की धूप में कोई छाया चल रही है या नहीं? बांयेन तरह–तरह के रूप धर सकती है। हाट–बाजार में फूल और मक्खन बेचने वालों की तरह वह कई तरह के छल–प्रपंच जानती है। मान लो किसी छोटे बच्चे को बांयेन लेना चाहती है। अब वह चलता है तो चारों और धूप पड़ने पर भी उसके चेहरे पर छाया रहती है। अदृश्य होकर बांयेन अपने आंचल की छाया बच्चे के सिर पर डाल कर चलती है। बच्चे के मर जाने पर अगर कोई जोर देता है तो बाँयेन मुस्कुरा कर कहती है, "मैं क्या जानूं? उसे धूप में आते देख कर मैं तो सिर्फ छाया देने गयी थी। तुम्हारा बच्चा कोई नमक का पुतला था कि हाथ लगाते ही गल गया?"

चण्डी पुत्र भगीरथ पूछता है। बापू आदमी को बांयेन कौन बनाता है? चण्डी बांयेन का पुत्र भागीरथ के मन में बांयेन का पूरा चरित्र समा गया है। उसके दिमाग में लगातार एक ही सवाल बार–बार आ रहा था कि आखिर बांयेन कौन है ? और यह सारे सवाल अपने पिता

से करता है। उसके पिता पुत्र को उत्तर देते है ईश्वर ही बांयेन बनाता है। लेकिन ये स्पष्ट है कि ईश्वर किसी को डायन या बांयेन नहीं बनाता केवल अंधविश्वासी समाज द्वारा ही मन गढ़न्त संदेह को आधार बनाकर किसी भी एक भले इंसान को ऐसा रूप दे दिया जाता है। बांयेन के सम्बंध में हो रही लगातार चर्चा को लेकर मलिन्दर डर जाता है कि कहीं उसके पुत्र को नुकसान न हो जाये क्योंकि बांयेन वह महिला है जो कभी भी किसी भी प्रकार का रूप धारण कर नुकसान पहुँचा सकती है और इसका पता किसी को चलता भी नहीं है उसके पास हर प्रकार का छल और प्रपंच है। बांयेन जिस किसी बच्चों को मारना चाहती हैं कितने भी सुरक्षा प्रबन्ध किया जाये मार ही देगी। ऐसी मन गढ़न्त कहानियाँ पूरे समाज में फैली हुई है। जो किसी समझाये नहीं समझती। वह सोच रहा था कि पुत्र को बांयेन से कैसे बचा सके।

महाश्वेता देवी इस अनुच्छेदो में कहती है किः

"भागीरथ जब खूब छोटा था, तभी उसकी माँ चण्डी को बांयेन ने धर लिया था। बांयेन के धरने के बाद लोगों ने चण्डी को गाँव के बाहर कर दिया। बांयेन को मारा नहीं जाता, क्योंकि बांयेन के मरने से गांव के बच्चे जिंदा नहीं बचते। अगर किसी को डाइन धर ले तो उसे जला का मार देते हैं, पर बांयेन के धरने पर उसे जिंदा रखना होता है।"

बांयेन प्राकृतिक पैदाइश नहीं बल्कि मानवीय समाज की उपज है। अंधविश्वासी व्यक्तियों का ऐसा पात्र है जो समाज के लिए खतरा है। इसलिए उसे समाज से दूर कर अर्थात् उसका बहिष्कृत कर उपेक्षा की जायें। इस चरित्र की महिला को मारने से भी डरता है उसे भय है कि अपनी आने वाली पीढ़ी को खो देगा। इस परिस्थिति में बांयेन को गांव से दूर रखा जाता है। उसके आवास एवं दैनिक सामानों एवं जरूरतों की पूर्ति भी उसे मुख्यधारा से बाहर किये जाने वाला वर्ग ही करता है।

अंधविश्वासी समाज द्वारा बांयेन के किरदार को इस प्रकार परिभाषित किया गया है कि जब कोई सामान्य महिला बांयेन बन जाती है तो उसको मारने से पूरे गाँव का अहित हो जाता है। यदि कोई महिला डायन बन जाती है तो उसे जला कर मारा जाता है। परन्तु बांयेन का मारा नहीं जा सकता क्योंकि उसे मार दिया तो उस गाँव में एक भी मासूम जिंदा नहीं रहता है।

बांयेन जब कभी जाती है तो बीन बजाकर लोगों को सचेत करती जाती है। बांयेन अगर किसी छोटे बच्चे अथवा युवक को देखती है तो तत्काल अपनी आंखों से उसके शरीर का सारा खून चूस ले सकती है।

इसीलिए बांयेन को अकेली रहना पड़ता है। बांयेन को जाते देख कर बच्चे–बूढ़े सभी रास्ता छोड़ कर हट जाते है।

समाज से निकाली गई बांयेन महिला को जब कभी बाहर निकलना होता है तो उसे समाज द्वारा बताये अनुसार टीन बजाकर मुनादि करते हुए गुजरना पड़ता है और वह किसी को देख ले तो बच्चा हो या युवती उसके पूरे शरीर का खून अपने आँखों से ही चूस लेती है। लेकिन इस बांयेन चरित्र से पूरा समाज डरता है और उसकी मुनादि को सुनकर सब अपने घरों में चले जाते है या रास्ता बदल लेते है।

बांयेन कहानी का नकारात्मक पहलू है कि एक सामान्य महिला जो किसी की पत्नी, माँ, बहु, बेटी हो जो महिला अपने सामाजिक दायित्वों का ईमानदारी पूर्वक निर्वाहन कर रही है उसको रूढ़ीवादी अंधविश्वासी परम्पाओं की आड़ में प्रेत आत्मा की पदवी दे दी जाती हैं। बिना किसी प्रमाण के किसी भी एक अनहोनी घटना से उस महिला के किरदार को जोड़कर समाज से बाहर निकालकर अकेले में रहने को मजबूर कर दिया जाता है।

रांग नंबर

रांग नंबर कहानी में महाश्वेता देवी कहती है कि:

फिर नींद आती है। गहरी, फिर भी घबराहट और आतंक में डूबी हुई नींद। लगता है सविता अभी भी नहीं सोई। इसीलिए वे पूछती हैं, "किसका फोन है?"

"रांग नंबर है।"

"कहां से आया था?"

"अस्पताल से।"

"अस्पताल से? सुनो जी। कहीं हमारा ही फोन न हो?"

तीर्थ बाबू को नींद आने ही लगती है तभी फोन आने के बाद विचलित हो चुकी उनकी पत्नी सविता पूछती है। फोन किसका था। कहाँ से आया था तो भयभीत तीर्थ बाबू कहते है यह फोन अस्पताल से आया था इतना सुनते ही सविता के सब्र का बांध टूट जाता है। लम्बे समय से अपने एक मात्र पुत्र दिपंकर की कोई सूचना नहीं मिलने से परेशान सविता कहती है कि यह फोन जरूर हमारा ही होगा। लेकिन तीर्थ बाबू अपने संतान के किसी भी अनिष्ट की आशंका से दूर पत्नी को कहते है। मुझे पागल मत करो। तुम्हें पता है कि दिपंकर कलकत्ता से दिल्ली नीरेन के पास आगे की पढ़ाई के लिए गया हुआ है और यह सब जानते हुए भी तुम यह पागलपन कर रही हो।

"नीरेन के पास अगर होता, तो दीपू हमें चिट्ठी क्यों नहीं लिखता? नीरेन हमें चिट्ठी क्यों नहीं लिखता? क्या तुम लोग सोचते हो कि मैं रोऊंगी–गाऊंगी? दौड़ कर नीरेन के पास चली जाऊंगी?"

तीर्थ बाबू की बातें सुनकर उनकी पत्नी अपने इकलौते पुत्र की खोज खबर के लिए पुनः सवाल पूछती है कि दीपू नीरेन के पास यदि होता तो इतना समय गुजरने के बाद एक पत्र तो लिखता नीरेन हमें पत्र क्यों नहीं लिखता। अपको ऐसा लगता है दीपू की खबर के लिए मैं स्वयं ही कलकत्ता से दिल्ली चली जाऊंगी। रोते बिलखते हुए

नीरेन के पास जाऊंगी। पत्नी को परेशान होता देख तीर्थ बाबू उन्हें समझाइश देते हुए कहते हैं कि घबराओं मत अपना दीपू नीरेन के पास ही है और सुरक्षित भी है। अपने पुत्र की ममता से परिपूर्ण सविता पुनः सवाल करती है कि नीरेन जान बुझकर दीपू के संबंध में कोई जानकारी नहीं दे रहा है और रोने लगती है। तभी तीर्थ बाबू उन्हें चुप रहने और नहीं रोने की सलाह देते है और दिलासा देते है कि सब ठीक हो जायेगा तुम जानती हो दीपू बहुत ही समझदार और अच्छा लड़का है। इसलिए उसका कही चले जाने की कोई वजह नहीं है। लगातार पति द्वारा दी जा रही दिलासा समझाइश को माँ की ममता सिरे से नकार देती है। फिर कहती है कि मेरा दीपू सही सलामत है तो फिर आता क्यों नहीं है। उनके मन से अस्पताल के फोन आने के बाद की बनी भ्रांतियाँ दूर होने का नाम ही नहीं ले रही थी। तीर्थ बाबू जिस फोन को लगातार रांग नंबर कर रहे थे। उसे सोच कर सविता सच मान रही थी।

तीर्थ बाबू अपने पुत्र से अलगांव के बाद से टेलीफोन पर लगातार पुत्र की मौत की खबर से विचलित हो चुके थे और स्वयं को बीमार मानकर अपने मित्र डॉक्टर मनोरोग विशेषज्ञ मनोज के पास जाते है। डॉक्टर से अपने बीमारी के बारे में बताते हुए अचानक ही कुछ बड़बड़ाने लगते है। उनके घर पर कोई गलत पत्ते पर आ गया है और पुनः वह अपनी कल्पना में खो जाते है। पूरा शहर कलकत्ता वहीं रह गया है सब कुछ बदल गया है। यह पूरा शहर ही रांग सिटी है। उन्हें ऐसा महसूस होता था कि जो सच्चाई उनके सामने बार बार आ रही है और उन सूचनाओं को देने वाला ने जिस शहर में रह रहे है और सोच विचार कर रहे है वह सब कुछ गलत है। अपने पुत्र की सलामती को लेकर उनकी एक नकारात्मक सोच विकसित हो चुकी है वे सूचना से जुड़े हर पहलू को गलत मान रहे थे। इसी बीच मनोरोग विशेषज्ञ डॉ. मनोज ने उन्हें रोका और जानना चाहते है कि तीर्थ क्या सपना देख रहे थे। इस सपने को डॉ. के साथ सांझा करने से वे स्पष्ट इंकार कर देते है। इस कहानी का नकारात्मक पक्ष

दीपंकर के माता–पिता द्वारा दीपंकर की मौत की खबर को छिपाना रहा है। इस दर्द को अकेले ही सहन करने के कारण उनका स्वास्थ्य लगातार खराब होता जा रहा था।

मूर्ति

घर की ही एक कोठरी में दुलाली को रख दिया गया। नयी कोठरी में संसारियों का प्रवेश–निषेध। चावल–दाल, तेल–नमक, लकड़ी–किरासिन, पड़े–तौलिया–सबकी व्यवस्था कर दी गयी। तब से यही जीवन है। माँ जब तक जीती रही, आती थी, बाहर बैठती थी। माँ रोती थी। दुलाली में रोने की भी शक्ति नहीं। रात–दिन बस एक ही ख्याल आता था कि उसकी बात क्यों नहीं मानी, क्यों नहीं चली गयी मैं उसके साथ? छातिम के बाहर भी तो दुनिया है। सोचती थी, क्यों ..... किसके मान–सम्मान की बात सोच कर उसे 'नहीं' कह दिया था? दीनू नहीं है, फिर कभी नहीं लौटेगा– यह बात मानना संभव नहीं है।..... कितने दिनों तक असीम कष्ट हुआ था! फिर धीरे–धीरे वह कष्ट कम होता गया। सदानंद तब आठ वर्ष का था। आज सदानंद बासठ साल का बूढ़ा है। घर का मुखिया। कौन कहाँ गया? कहाँ थी ठाकुर–बाड़ी ? कब, कौन, दूर से उसे देखकर 'शादी नहीं करूँगा' कहते हुए उठ कर चला गया था? सब बीती बातें हैं। सब झूठ हो गया। रह गयी सिर्फ उदर की ज्वाला, समय काटने की ग्लानि।

दुलाली के पिता महानन्द गाँव के प्रमुख व्यक्ति थे। घर के पाप को दबाना था इसलिए रूढ़ीवादी परम्पराओं को जीवित रखने के लिए अपनी ही औलाद को एक कम उम्र की बच्ची को कालकोठरी में बन्द कर देते है और उससे मिलने पर रोक लगा देते है। आवश्यक खाद्य सामग्री की व्यवस्था भी उसी काल कोठरी में कर दी जाती है और उसे बता दिया जाता है कि यही तेरा वर्तमान और भविष्य है और इस कोठरी के बाहर निकलने की कोशिश भी मत करना उसकी माँ कोठरी के बाहर अपनी बेटी के लिए रोते हुए मन को शांत करने का प्रयास करती है। जब तक जिंदा रही तब तक कोठरी के बाहर

दरवाजे के पास बैठकर रोती रही। कालकोठरी में रहकर दुलाली के मन में उठ रहा तूफान दिन और रात दीनू को याद करता था। उसने सच ही कहा था ग्राम छातिम के बाहर भी दुनिया है किसके मान–सम्मान के बारें में सोचू उसी परिवार ने मेरे मान–सम्मान की कभी रक्षा नहीं की मेरी इच्छाओं को दफना दिया। उसी परिवार ने आज उसे भयानक दण्ड दिया। दीनू के साथ क्यों नहीं चली गई? आज का भविष्य कुछ ओर ही होता। दीनू नहीं है। और वह कभी नहीं लौटेगा। इस बात को लेकर आज पूरे 56 वर्ष हो गये है। कहाँ गई ठाकुर बाड़ी, दीनू का शादी न करना, उठकर घर छोड़कर चले जाना सब कुछ खत्म हो गया। अब केवल रह गया है तो केवल कष्ट ही कष्ट और समय काँटने की मजबूरी।

मूर्ति कहानी में बाल विधवा दुलाली को काल कोठरी मे बंद करके दंड दिया जाना एवं समाज में बदनामी एवं झूठी इज्जत के कारण दीनू एवं दुलाली के विधवा विवाह को नकारा जाना नकारात्मक पक्ष है।

शनीचरी

महाश्वेता देवी ने उल्लेखित किया है कि आदिवासियों पर चौतरफा हमले हो रहे थे। बिहार पुलिस घरों में घुस कर लूट एवं बलात्कार की घटना को अंजाम दे रही थी। सुरक्षित स्थान की तलाश में युवतियों ने जंगल की शरण ली लेकिन जंगल में बिहार मिल्ट्री फोर्स के द्वारा युवतियों की इज्जत को तार–तार किया जा रहा था। तन छुपाने की मजबूरी ने उन्हें जंगल पहुंची ईंट भट्टो की रखैल के सामने समर्पण कर दिया।

यहाँ होली के दिन तुममें आतंक छा जाता है, आँखों में डर। कलकत्ता से भट्टा–मालिक के दोस्त आते हैं। तुम्हें दारू पिला कर बेहोश कर देते है, कपड़े खोल देते है। फिर क्या होता है, अपने शरीर से पूछो।

शनीचरी यह नहीं जानती कि शरीर की कीमत होती है। वह

रहमत की जागीर थी।

ये अत्याचार केवल ईंट–भट्टो के अन्दर ही सीमित नहीं था। होली जैसे पर्व पर इन युवतियों पर शामत सी आ जाती है। अय्याशी के लिए कलकत्ता का धनाड़य वर्ग ईंट–भट्टो की राह पकड़ लेता है। यह भट्टे मालिकों के द्वारा कार्यरत रेजाओं की नीलामी की जाती है। बाहर से आयें इन राक्षसों के द्वारा महिलाओं के शरीर को नोचकर खाया जाता है। इन अय्याश लोगो के द्वारा इन युवतियों को निःवस्त्र कर नचाया जाता है। एक तरह से ये मजबूर महिलायें ईंट–भट्टो के मालिकों की निजी जागीर बन चुकी थी। जिसका वह अपने मन मर्जी से किसी भी समय इस्तेमाल कर सकते थे। पैसों के खातिर कभी भी किसी के आगे भी परोस सकता था। इन अत्याचारों को रोकने वाला कोई कानून, कोई सरकार नहीं थी।

ईंट बिठाओ, ईंट बिठाओ शनीचरी। कहाँ थी तू, किस देश में–कुछ समझ में आया?...यह बच्चा अगर चाँद तिरकी का होता तो समाज अंगीकृत कर लेता। एक घृणित हरामी का बच्चा लेकर घर लौटेगी?–नहीं।

शनीचरी जब ईट भट्टा मालिक रहमत के बच्चे की माँ बनने वाली थी, तब रहमत द्वारा उसे अपने घर से हटाकर ईंट भट्टे में रेजा कार्य में लगा दिया गया। गर्भवती होने पर रेजा कार्य करते हुए शनीचरी उदास रहने लगी। उसे यह बंधुआ पन खाये जा रहा था। उसके आंखो से आंसू लगातार बह रहे थे। लेकिन इन आंसूओं को पोछने वाला भी कोई नहीं था। उसे यह कैद खाना परेशान कर रहा था। इस कैद खाने में रहते हुए रहमत के अत्याचारों ने उसे अपने देश की भाषा व रास्ता दोनों ही भुला दिया। वह सोच रही थी। उसके गर्भ मे पल रहा शिशु उसके प्रेमी चांद का होता तो समाज उसे सहर्ष स्वीकार कर लेता लेकिन यह अनैतिक होने के कारण इसे कोई नहीं अपनायेगा। समाज इसे तिरस्कार की नजर से देखेगा। इसलिए वह भी सोच रही थी कि बेनाम संतान को लेकर अपने घर लौटे या नहीं।

कहानी का नकारात्मक पक्ष है कि ईंट भट्टों के मालिकों के अमानवीय करतूतों की जानकारी शासन को थी। इसके बाद भी आंखे मूंद कर ईंट भट्टों में होने वाले कृत्य की उपेक्षा की गई। साल दर साल कई शनीचरी बनती गई। उनके गर्भ में अजन्में बच्चों को समाज द्वारा कभी भी स्वीकार नहीं किया जाना नकारात्मक पक्ष है।

गाँव के समाज ने शनीचरी को जगह नहीं दी। समाज करे भी तो क्या करे, बोलो? गुंडों के अत्याचार से जीवन भस्म हो गया। उस हरामी का पिल्ला पेट में है। इस लड़की को समाज कैसे स्वीकार करे? बोलो 'नाइगा' पुरोहित?

ईंट भट्टा बंद होने के बाद शनीचरी अपने गर्भ में पल रहे शिशु को लिए गाँव पहुंचती है तब अविवाहित कन्या के गर्भ में शिशु होने के कारण उसे समाज स्वीकार नहीं करता समाज शनीचरी को ऐसे अपराध के लिए सजा दे रहा था। जिसे शनीचरी ने कभी किया ही नहीं था। समाज के ठेकेदार कह रहे थे कि शनीचरी का जीवन भस्म हो गया है। उसके गर्भ में हरामी का बच्चा पल रहा है। ऐसे में समाज कभी स्वीकार नहीं करेगा। शनीचरी के पिता जब प्रायश्चित का भोज करायेगे। तब शनीचरी के प्रेमी के भाई ने पूछा इसमें शनीचरी का क्या दोष है ? तब पुरोहित कहते है यह नियम है गरीब पिता ने प्रायश्चित का भोज भी दिया तब भी शनीचरी को स्वीकार नहीं किया गया।

महाश्वेता देवी के लेखन में परिलक्षित यह इतिहास–चेतना केवल उनकी नहीं, उनके चरित्रों की भी है, जिनके बीच व्यक्त होकर यह इतिहास–चेतना उनकी अपनी चेतना का अंग बन जाती है।

कहानियों में परिलक्षित नाकारात्मक चेतना समाज का वह दृश्य दिखलाती है जिससें सम्पूर्ण मानव जाति का अहित होता है। बुराई को चित्रित कर लेखिका अपने उदाहरण द्वारा उसके दुष्परिणाम बताती है। साथ ही समाज को स्वस्थ्य करने के लिए उनकों दूर करने का प्रण भी पात्रों द्वारा कराती है। ये सारे पात्र समाज के लिए

और बुराई फैलाने के लिए प्रयुक्त होते है। लेकिन पाठक उसके दुष्परिणामों को पढ़कर स्वयं पश्चाताप करता है और अपने को सुध ाारता है। कहीं–कहीं समाज द्वारा बहिष्कृत भी होती है। इस तरह कहानियों की नकारात्मक चेतना पाठकों को सामाजिक चेतना के विकास में मददगार साबित होती है।

————::::————

अध्याय 06 महाश्वेता देवी की कहानियों में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना का वैशिष्ट

महाश्वेता की लेखन शैली की विशेषता है कि समाज के उपेक्षित वर्ग की पीड़ा को कहानियों में समाहित करती है। लेखिका ने समाज में व्याप्त अंधविश्वास कुप्रथाओं को अपनी सशक्त कलम के माध्यम से कहानी के रूप में लिखा है। उनके द्वारा इन कहानियों के माध्यम से समाजिक चेतना जागृत कर समाज को कुप्रथाओं से उभारने का प्रयास किया गया है। उनके द्वारा रचित यह रचना केवल कहानी ही नहीं सत्य सी प्रतीत होती है। महाश्वेता देवी के लेखन शैली में इतनी प्रासंगिकता है उनके द्वारा लिखित उपन्यास 'अरण्ये अधिकार' (जंगल का अधिकार) के प्रकाशन के पश्चात् उनके अध्ययन से पश्चिम बंगाल की सरकार ने आदिवासी समुदाय को समाज की मुख्य धारा से जोड़ा और इसी पुस्तक की सत्यता के आधार पर महाश्वेता देवी को उनकी लेखनी के लिए पुरस्कृत भी किया गया।

बांयेन

लेखिका की दृष्टि डोम समाज तक पहुँचती है। बांयेन कहानी में अपने अनुवांशिक कार्य के कारण समाज से निकाले गये लोग श्मशान घाट में जाकर रहने को मजबूर है। मुख्य धारा से जुड़े परिवार का कौन सा बच्चा श्मशान घाट में जाकर खेलता है? लेकिन इस कहानी में समाज से बहिष्कृत, निर्वासित लोगों ने अपने ही बीच की एक महिला एवं एक मासूम की माँ को समाज से बाहर कर दिया। वह इसे अपनी नियति मानकर स्वीकार भी करती है और चण्डी से बांयेन बन जाती है। यही चण्डी बांयेन जो समाज द्वारा तिरस्कृत और निर्वासित है वह एक बहुत बड़ी रेल दुर्घटना का रोकती है वह भी स्वयं की जान देकर .....! चण्डी की इस आहूति से डोम आदिवासी समाज स्तब्ध रह जाता है। आदिवासी समाज से बांयेन

का अलंकरण प्राप्त चण्डी का पुत्र भागीरथ जब समाज, देश व प्रशासन के समक्ष अपना परिचय चण्डी बांयेन के पुत्र के रूप में देता है। यही कहानी का सबसे मार्मिक क्षण होता है। बांयेन कहानी में अपनी पत्नी को बांयेन घोषित कर समाज से बहिष्कृत करने में मलिन्दर को जरा भी संकोच नहीं होता। इस कहानी में लेखिका ने बताया है कि जो समुदाय समाज से बहिष्कृत है। वे भी अपने बीच किसी व्यक्ति अंधविश्वास एवं कुप्रथा के कारण उसका बहिष्कार कर सकता है और निष्कासित व्यक्ति उसे भी अपनी नियति मानकर स्वीकार कर लेता है। जिसे समुदाय से निकाला गया हों। वहीं महिला जिसे बांयेन का अलंकरण दिया गया हो अर्थात् जो मासूमों का जीवन हरने वाली हो वही औरत एक रेल दुर्घटना को रोकने के लिए अपने प्राणों की बलि दे देती है। यह केवल कहानी मात्र नहीं है। देश के अनेकों राज्यों में महिलाओं को लक्ष्य बनाकर बांयेन, डायन, डाकन, टोनही से आरोपित कर प्रताड़ित कर उनके हत्या करने का क्रम जारी है। इन कुप्रथाओं के खिलाफ महाश्वेता देवी जैसी अन्य महिलायें भी है जो संर्घष कर रही है जिसमें असम की बिरूबाला भी शामिल है।

असम, मेघालय की सीमावर्ती ठाकुर किला क्षेत्र की रहने वाली 62 वर्ष की बिरूबाला महिला के प्रयास से 20 अगस्त 2015 को डायन निषेध कानून बना है। इसे असम विधान सभा में पारित किया गया है। असम के मुख्यमंत्री तरूण गोगोई ने डायन प्रताड़न को संज्ञेय अपराध माना है और डायन निषेध कानून के तहत अपराधी को तीन से पांच साल का कारावास तथा पचास हजार से पांच लाख रूपये तक का जुर्माना दिया जाने का प्रावधान है। डायन कुप्रथा से प्रभावित राज्य राजस्थान की विधान सभा में भी विधेयक पारित कर डायन प्रताड़ना निवारण कानून बनाया गया है। जिससे की ग्रामीण आदिवासी महिलाओं को सुरक्षा मिल सके। विगत दस वर्षो में बारह सौ महिलाओं की हत्या डायन का आरोप लगाकर की गई है। 08 अगस्त 2015 को रांची में पांच महिलाओं की हत्या कर की गई थी।

इस प्रकार से देश के अनेक राज्यों में डायन प्रथा के कारण महिलाओं को प्रताड़ना देने का क्रम जारी है। जिसे महाश्वेता देवी के द्वारा 70 के दशक में डायन कहानी के माध्यम से शासन एवं प्रशासन के समक्ष इस गंभीर विषय को उठाया गया था। इसी दिशा में कार्य करते हुए दो राज्यो के द्वारा डायन प्रथा के प्रचलन को रोकने के लिए कानून बनाये गये है। अर्थात् महाश्वेता देवी के द्वारा उठाये गये इस विषय पर विगत 40 वर्षो से काम किये जा रहे है।

बांयेन कहानी का मूल विषय है कि केवल अंधविश्वास एवं कुप्रथाओं के संदेह के आधार पर महिलाओं को डाकन, डायन, डाकिनी घोषित कर दिया जाता है। प्रति वर्ष हजारों महिलाओं की बिना किसी ठोस प्रमाण के हत्या कर दी जाती है। उनकी कहानियों के विषय समाज को सच से सामना कराकर शोषक एवं शोषित दोनों ही वर्ग को अंधविश्वास एवं कुप्रथाओं की मिथ्या से बाहर लाकर सामान्य जीवन जीने के लिए प्रेरित करती है। महाश्वेता देवी के कहानियों की यही विशेषता है। वे समाज की खामियों को उजागर करने के साथ उसमें सुधार के लिए किये जाने वाले आवश्यक कार्य को दिशा दिखाकर चेतना जागृत करती है।

रांग नंबर

रांग नंबर कहानी वर्तमान भारतीय समाज के बुजुर्ग दम्पत्तियों की वह व्यथा है। जो एकल परिवार के बढ़ते प्रचलन की प्रथा के कारण घुटन महसूस करते है। जीवन के अंतिम पड़ाव में उनकी पूरी दुनिया सिमटकर एक मात्र सहारा संतान पर केन्द्रित हो जाती है और इस बुजुर्ग कालिन अवस्था में किसी भी पिता एवं माता के द्वारा अपने युवा पुत्र या पुत्री की देह को कांधा देना सर्वाधिक पीड़ादायक होता है। इस दृश्य को महसूस करके उनकी पूरी आत्मा कांपने लगती है। इस कहानी में मुख्य पात्र तीर्थबाबू और उनकी पत्नी अपने पुत्र को उच्च शिक्षा प्राप्ति के लिए अपने से दूर कर देते है। परंतु लम्बे समय तक उसके विषय में शुभ समाचार नहीं मिलने पर चिंतित एवं परेशान रहते है। रातों की नींद उड़ जाती है जिसके कारण उनके स्वास्थ्य में

लगातार गिरावट आती है। उनकी मानसिक स्थिति भी असामान्य होती जाती है। जो कि कहानी के इस अंश से स्पष्ट होता है।

तीर्थ बाबू ने रिसीवर उठाया ।

"फोर सेवेन ....नाइन ?"ठीक यही नंबर तीर्थ बाबू के सामने रखे टेलीफोन के ऊपर लिखा है। तीर्थ बाबू ने कहा, "नो"

"यह तीर्थकर चटर्जी का घर नहीं है?"

"नो!"

फोन की घंटी की आवाज सुनकर तीर्थ बाबू उठ कर बैठ जाते है। फोन की घंटी की आवाज भी उन्हें नागवार गुजरती है। किसी तरह वे फोन का रिसीवर उठाते है। दूसरे छोर पर बताये गये नम्बर सही होने के बाद भी तीर्थ बाबू सिरे से नकार देते हैं। पुनः कॉल करने वाला व्यक्ति कहता है क्या यह तीर्थकर चटर्जी का घर है? निश्चित तोर पर तीर्थकर चटर्जी का घर होने के बावजूद तीर्थबाबू द्वारा इंकार कर दिया जाता है। नो यह उनका घर नहीं है क्योंकि वह दीपंकर के संबंध में की किसी भी नकारात्मक सूचना को सुनना तक नहीं चाहते थे।

कहानी के इस अंश से स्पष्ट है कि बुर्जुग तीर्थ बाबू के युवा पुत्र की मौत हो चुकी थी। परन्तु अकेलेपन की दशा के कारण वह इस सत्यता को स्वीकार नहीं कर पा रहे थे। लेखिका ने यह बताने का प्रयास किया है कि यदि तीर्थ बाबू संयुक्त परिवार का प्रतिनिधित्व करे होते तो अपने जीवन काल की सर्वाधिक पीड़ा दायक परिस्थिति को वह सहन कर सकते थे। शोक की इस घड़ी में उनके बुढ़ापे का सहारा बनने उनका साथ देने के लिए उनके पास विकल्प अवश्य होते उन्हें भटकने की आवश्यकता नहीं होती और वे अपना स्वास्थ्य एवं मानसिक स्थिति को स्थिर रख पाते। संयुक्त परिवार के अस्तित्व की विशेषता के महत्व को समझाते हुए लेखिका ने यह संदेश देने का प्रयास किया।

मूर्ति

लेखिका ने मूर्ति कहानी में यह स्पष्ट किया है कि एक शोधकर्त्ता छात्र के कारण ही आजादी के तीस वर्षो के बाद सन् 1977 में दीनदयाल को शहीद का दर्जा प्राप्त हो सका और जो स्वतंत्रता संग्राम का परस्पर सम्बंध होना साबित करता है। प्रेम की असफलता से ही उसे स्वाधीनता की लड़ाई में शामिल होने की प्रेरणा मिली। फांसी के पूर्व प्रेमिका को दीनदयाल द्वारा लिखी चिट्ठी का अध्ययन करने के बाद शोधकर्त्ता छात्र के मन में दीनदयाल को जानने और समझने की इच्छा जागृत हुई। शोधकर्त्ता छात्र के अध्ययन से पता चलता है कि दीनदयाल ठाकुर दिसम्बर सन् 1923 में स्वतन्त्रता संग्राम की लड़ाई में शामिल हुआ। वह पूर्ण रूप से हिंसावादी सिपाही था। सन् 1924 अगस्त में पकड़े जाने तक दो पोस्ट ऑफिसों एवं ट्रेजरी गार्ड की बंदूक छीनने जैसी घटनायें की थी। शोधकर्त्ता की इस खोज के बाद ही दीनदयाल को शहीद का दर्जा प्राप्त हुआ और शासन ने उसके गृह ग्राम छातिम में उसकी मूर्ति स्थापना का निर्णय लिया। दीनदयाल के फांसी में चढ़ने के पूर्व दो युवाओं के प्रेम सम्बंध ा की बली चढ़ने को लेखिका ने पूरी कहानी में विस्तारपूर्वक लिखने का प्रयास किया। युवक दीनदयाल ब्राह्मण परिवार से था। उसके पिता ग्राम के जमींदार ठाकुर के घर पर उनके कुलदेवी की पूजा अर्चना किया करते थे। जिसके कारण ठाकुर की बाल विधवा दुलाली का ब्राह्मण परिवार के यहाँ आनाजाना लगा रहता था। इसी कारण दुलाली एवं दीनू एक दूसरे को पसंद करने लगे लेकिन जब यह प्रेम सम्बन्ध उजागर हुआ तो दोनों ही परिवार बरबादी के कगार पर पहुँच गये। दीनू की कार्य शैली ने उसे शहीद का दर्जा दिलवाया। ग्राम में लगने वाली दीनू की मूर्ति ने उसकी प्रेमिका को 78 वर्ष बाद असफल प्रेमगाथा की स्मृतियों की यादों को ताजा कर दिया।

पुरूष प्रधान भारतीय समाज में सदियों से ही महिलाओं की उपेक्षा की जाती रही है। इस सामाजिक व्यवस्था में महिलाओं को अपनी पहचान बनाने के लिए सदैव से ही संघर्ष करना पड़ता रहा है। इस

भारतीय सामाजिक ढ़ांचे में महिलाओं को पूर्णतः पुरूष वर्ग पर निर्भर रहने की व्यवस्था थी। सामाजिक ढ़ांचे की इस खामी के कारण उसकी दशा गौशाला में बंधी गाय की तरह रही है। इस से उभरने के लिए कई सदियाँ बीत गई। विवाह के उपरान्त महिलायें अपनी पहचान तक इस रूढ़िवादी परम्पराओं के कारण खो देती है और पति की मौत के पश्चात् कुल में सती प्रथा के तहत उसे भी आत्मदाह करने की मजबूरी थी। समाज सुधारकों के द्वारा चलाये गये आन्दोलन के पश्चात् इस कुप्रथा से महिला वर्ग को मुक्ति मिली परन्तु जीवन साथी की मृत्यु के पश्चात् विधवा विवाह के विकल्प को आज भी समाज पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं कर सका है और यह स्त्री के विध ावा होने की दशा बाल विवाह के कारण और भी अधिक वीभत्स रूप ले लेती है। पति की मौत के बाद कुंठित मानसिकता का परिचायक भारतीय समाज महिलाओ की स्वतन्त्रता ही छीन लेता है। उसका सम्पूर्ण सिंगार यहां तक के उसका व्यवहार, उठना–बैठना, पहनावा, खान–पान तक प्रतिबंधित कर दिया जाता है। एक प्रकार से समाज के निर्देशों का कढ़ाई से पालन करने के लिए एकांत जीवन जीने के लिए मजबूर कर दिया जाता है। उसे ऐसे अपराध की सजा दी जाती है जिसे उसने कभी किया ही न हो। भारतीय समाज की विधवा व्यवस्था अपराध बोध सी प्रतीत होती है। कई दशकों बाद महिला वर्ग की व्यथा को समाज सुधारको ने समझा और शिक्षा के साथ–साथ पुरूष के साथ बराबरी का दर्जा देने के लिए सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन भी किया। जहां महिलाओं को स्कूल देखने तक नहीं दिया जाता था। व्यवस्था परिवर्तन के पश्चात् महिलायें आसानी से शिक्षा प्राप्त कर शिखर पर पहुंच रही है। पृथ्वी से लेकर मंगल ग्रह तक पुरूषों के साथ खड़ी है। परन्तु विवाह के पश्चात् इस अनहोनी के लिए विकल्प विधवा–विवाह सामज में स्थापित नहीं है। समस्या ग्रसित जीवन जी रही है। पश्चिम बंगाल एवं बाल विवाह व्यवस्था का परिपालन करने वाल राजस्थान में विधवा महिला की संख्या ज्यादा है। पश्चिम बंगाल की विधवा हुई महिलायें, रिश्ते नातेदार के

बहिष्कार के पश्चात् वृंदावन, मथुरा में गुमनामी का जीवन व्यतीत कर रही है। विधवा होने पर महिलाये समाज में स्वयं को असुरक्षित महसूस करती है। सबसे ज्यादा उन्हें यौन प्रताड़ना का सामना करना पड़ता है। वृंदावन में व्यतीत करने वाली अभिशापित विधवा महिलाएं जीवन की आधी अधूरी ही दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाती है।

इन्हीं अभिशापित जीवन की व्याख्या लेखिका महाश्वेता देवी ने सन् 1970 के दशक में रचित कहानी मूर्ति में की है। उनकी पात्र दुलाली बाल विवाह के पश्चात् विधवा होती है विधवा होने पर उसके माता–पिता आगे का लालन पालन अपने घर पर करते है। किशोर अवस्था में आने पर दुलाली ग्राम के एक युवक से प्रेम करने लगती है। परन्तु बाल विधवा प्रेम विवाह में दोनो ही परिवार सहमत नहीं थे जिसके चलते कहानी के नायक दीन दयाल स्वतंत्रता संग्राम आन्दोलन में शामिल होकर शहीद हो जाते है और दुलाली एवं दीनू का प्रेम संबंध उजागर होने के कारण दुलाली को परिवार से अलग कर काल कोठरी में बंद कर सजायाफ्त अपराधी की तरह अकेले एवं गुमनामी का जीवन जीने के लिए मजबूर कर दिया जाता है। पूरी उम्र दुंलाली उसी काल कोठरी मे अकेले पन के साथ जीवन व्यतीत करती है। लेखिका इस कुप्रथा को कहानी के माध्यम से उजागर किया हैं तथा इसके दुष्परिणाम को भी व्यक्त किया।

कहानी से स्पष्ट होता है कि उपेक्षित जीवन जीने वाली दुलाली भी पुर्न विवाह करके समाज के मुख्य धार से जुड़ना चाहती थी परन्तु समाज में उसे सामान्य जीवन जीने से दूर रखा पुरूष के जीवनसंगिनी को खो देने पर पुर्नविवाह की व्यवस्था समाज ने दी है। परन्तु महिलाओं के विवाह को आज भी मान्यता दिये जाने के बावजूद इसका परिपालन सुनिश्चित नहीं हो पाया है। महिलाओं को भी पुर्नविवाह का अधिकार पुरूष की तरह दिया जाना चाहिए। वृंदावन में निवासरत हजारों विधवाएं उम्र के अंतिम पड़ाव में होने के बावजूद पुर्नविवाह कर मुख्य धारा से जोड़ने के लिए लालायित है। विधवा

विवाह के लिए वर्ष 2007–2008 में शासन द्वारा पुरस्कार के रूप में पंद्राह हजार रूपये दिये जाने की व्यवस्था दी है। परन्तु शासन के ऐसे प्रयास इस बड़ी समस्या के निराकरण के लिए पर्याप्त नहीं है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा जागरूकता लाने के लिए प्रतिवर्ष 23 जून को अंतर्राष्ट्रीय विधवा दिवस मनाया जाता है। लेकिन आज भी इन विधवाओं को असमय सब कुछ खोए हुए जीवन से ऊपर उठकर नई शरूआत करने की उम्मीद हैं। परंतु उन्हें सहारा देने वाला सरलता से नहीं मिल पाता है।

बीज

लेखिका ने तमाम सच्ची घटनाओं को अपनी इस बीज कहानी के माध्यम से बड़ी ही मार्मिकता एवं सजीवता के साथ प्रस्तुत किया है। जमींदार लक्ष्मण सिंह जिसके पास हजारों एकड़ भूमि थी। उन खेतों में आस–पास के सभी गाँव में रहने वाले निचली जातियों के लोगों को अपनी शर्तो पर जबरिया खेत में कार्य कराया जाता था। जमींदार लक्ष्मण सिंह का ही विश्वास पात्र नौकर दुलन जिसे कुछ एकड़ बंजर पत्थरीली जमीन मुफ्त में दे दी गई थी। जमीन देने के उपरान्त जमींदार की शर्त भी यह थी कि उसके आदेश तक वह उस जमींन पर फसल नहीं ले सकता। सभी निचली जाति के मजदूर में एक करण नाम के व्यक्ति द्वारा खेती हर मजदूरी को चार आने दी जाने वाली मजदूरी के स्थान पर आठ आने दी जाने की मांग करता है। इससे लक्ष्मण नाराज हो जाता है। स्थिति को भांपते हुए दुलन करण से कहता है कि बी.डी.ओ, एस.डी.ओ एवं दरोगा सभी लक्ष्मण सिंह के पीने–पिलाने के यार है। पूर्णतः मेंहनताना प्राप्त करने के लिए आदिवासी दफ्तर एवं हरिजन सेवा संघ से मिलो, लक्ष्मण सिंह बात बढ़ने पर आठ आना मजदूरी देने के लिए राजी हो गया और दूसरी ओर इधर दुलन से कहता है कि दान में दी हुई जमीन में रात में रहना, रात में करण, दुसाध के टोले में आग लगा दी जाती है। कई जिंदा जल जाते हैं। कईयों का पता नहीं चलता। देर रात लक्ष्मण सिंह एवं उसके गुंडे घोड़े पर लाद कर करण उसके भाई बुलाकी की

लाश लेकर पहुँचते है और दुलन को आदेशित करते है कि पत्थरी जमींन में दोनो ही लाशों को गाड़ दे। दुलन मालिक के आदेशानुसार कार्य करता है। उसने कार्य भी किया और जंगली जानवर उन लाशों को कब्र से निकाल न ले इसलिए वह रोज रात को पहरेदारी किया करता था।

एक प्रकार से लक्ष्मण सिंह ने दान में दी हुई जमींन को अपने कुकर्म को छुपाने के लिए अघोषित कब्रिस्तान बना दिया था। लापता निचली जाति के लोगों को करण उसके भाई की खोजबीन जारी रहती है। मीडिया जगत भी खोजता रहा। शंका के आधार पर पुलिस ने लक्ष्मण सिंह के कुछ गुंडो को गिरफ्तार किया। बाद में लक्ष्मण सिंह की पहुंच से सभी छुट गये। क्षेत्र में नया एस.डी.ओ आया। उसके घोषणा की सरकारी दर के अनुसार मजदूर पांच रूपये अस्सी पैसे मजदूरी प्राप्त करने के हकदार है। ग्राम पुरूडिया के ग्राम प्रधान का लड़का अशर्फी महतो बोला करण की बात याद है। तीन सालों से मिल नहीं पाया हूँ। यहाँ पाँच सौ से भी अधिक आदमी है तो फिर हम भला चालीस पैसे और भात में मजदूरी क्यों करे? हमें भात नहीं चाहिए। पाँच रूपये अस्सी पैसे लेकर ही मजदूरी करेंगे।

दुलन की आशंका सच्चाई में बदल जाती है। लक्ष्मण सिंह और अन्य जमींदारों ने मिलकर अशर्फी उसका भाई मोहर, चामा गांव के मधुवन कोचरी और बुरूडिहा के पारस धोबी चारो की लाश दुलन की पथरीली जमींन पर लेकर लक्ष्मण सिंह खड़ा था। पूर्व की तरह दुलन व लक्ष्मण सिंह के गुंडो ने करण, बुलाकी के बगल में ही चारों लाशों को गाड़ दिया। दुलन के ऊपर फिर से पहरेदारी का प्रभार दे लक्ष्मण सिंह चला गया। इस अघोषित कब्रिस्तान के डोम बने दुलन की छाती में दो से बढ़कर छः लाशों का बोझ आ चुका था। उसकी आत्मा बार–बार कोस रही थी। अपनी दिहाड़ी प्राप्ति के लिए इस बार संघर्ष के लिए दुलन का बड़ा बेटा धतुआ सामने आया। धतुआ ने ठेकेदार को चार आना दलाली देने से इंकार कर दिया। नतीजा लक्ष्मण सिंह के गुंडो ने इस बार धतुआ को मौत के घाट उतार दिया। इस बार

दुलन की जमीन में धतुआ के शव का गाड़ने वाले केवल लक्ष्मण सिंह के गुंडे थे। धतुआ के घर नहीं पहुँचने पर दुलन सीधे लक्ष्मण सिंह के पास पहुँचता है। तब लक्ष्मण सिंह के द्वारा दतुआ के मारे जाने की खबर देता है। बेटे की मौत ने दुलन को विचलित कर दिया था अब वह खेतीहर मजदूरों के संघर्ष करने वाले छः लोगों की मौत के बाद सातवी अपने बेटे की मौत के बोझ को किसी तरह सहन करने की स्थिति में नहीं था।

लक्षमण सिंह द्वारा बनाये गये अघोषित कब्रिस्तान की बंजर भूमि को सवारने के लिए उसके आदेश के विपरित भूमि पर लगे कांटे के पेड़ो को हटाता है। फसल उगाने के लिए दिन रात मेहनत कर जमीन को तैयार करता है ऐसा करतें देख सारा गाँव उसे पागल समझता है। परन्तु दुलन के मन में कब्रिस्तान में गाड़े सभी लोगों को अमर बनाने की योजना चल रहीं थी। जमींन पर उगाई गई फसल लहलहाते हुए देख पूरा गाँव अश्चर्यचकित होता है। दुलन सोचता है कि उसका काम सफल हुआ। आदेश का उल्लंघन करने के कारण जमींदार लक्षमण खेत में पहुंचते है। दुलन के सिर पर खुन सवार था। लक्षमण को देख क्रोधित होकर उसे जमीन पर पटकता है और उसी के बंदूक की बट से लक्ष्मण पर हमला कर दाहिना हाथ को तोड़ देता है। घायल लक्ष्मण किसी भी नीच जाति के व्यक्ति के सामने अपनी जान बचाने की प्रार्थना नहीं करना चाहता। घायल होकर भी वह दुलन को मारना चाहता है। इस पर दुलन लक्ष्मण द्वारा उठाये गये पत्थर से ही दुलन उसके सिर को कुचलकर हत्याकर देता है। लक्ष्मण सिंह की लाश को घोड़े से बांधकर घोड़े को दौड़ा देता है। घोड़े द्वारा लक्ष्मण सिंह की लाश को गड्ढे में गिराने के पश्चात् वह उसे पत्थरों से भर देता है और उस स्थान पर कटिले पेड़ लगा देता है। लक्ष्मण सिंह के अन्त के बाद पंचायत के स्थान पर पहुंचकर अपने दिल में छुपे बोझ को हलका करते हुए कहता है। मेरे खेत में लगी फसल को गाँव वाले अब कांट सकते है। लेकिन इस फसल का सेवन कोई नहीं करेगा बल्की बीज बनकर अन्न की पैदावार करेंगे।

पूरे ग्राम के समक्ष कहता है कि करण अशर्फी व धतुआ की कुर्बानी जाया नहीं जायेगी मैने उन्हें बीज बनाकर अमर बना दिया है। यही बीज हमारे पालनहार बनकर भविष्य को सवारेंगे।

स्पष्ट है कि जमींदार लक्षमण सिंह मजदूरों की हत्याओ के बाद संपूर्ण साक्ष्य को समाप्त करने के लिए स्वयं की एक बंजर भूमि में दुलन की सहायता से मजदूरों की लाशों को गाड़ दिया करता था और इस अघोषित श्मशान भूमि का पहरेदार भी दुलन को बना दिया था। स्वयं को परिवार सहित जिंदा रखने की लालसा दुलन को यह घृणित कार्य करने के लिए मजबूर करती है। लेकिन उसके पुत्र ध ातुआ को मजदूरों की मांग का समर्थन करने पर जमींदार द्वारा मार दिये जाने पर दुलन के सब्र का बांध टूट जाता है। उसकी छाती अब और मजदूरों के मौत का भार सहन नहीं कर सकती! प्रतिशोध वश दुलन जमींदार की हत्या कर देता है। अपने पुत्र सहित अन्य मजदूरों की लाशो को दफनाई गई बंजर भूमि में कड़ी मेहनत कर फसल उगाता है। गुजरते समय के साथ लहलहाती फसल को देखकर दुलन के मन में विचार आते है कि मजदूरो का बलिदान व्यर्थ नहीं गया। भूमि के अन्दर दफन उनके शरीर और अस्थियों के खाद से पोषित होकर फसल की पैदावार हुई है। इन्हीं मजदूरों को अमर बनाने के लिए इसी फसल को बीज बनाकर सम्पूर्ण गांव में फसल की पैदावार ली जायेगी। अर्थात् दुष्ट एवं अत्याचारी जमींदार लक्षमण सिंह का अस्तित्व समाप्त कर मजदूरो के विजय होने का संदेश देती है।

शनीचरी

शनीचरी कहानी प्राकृतिक आपदाओं से आहत शासन के साथ हुए संघर्ष के बाद पुलिस फोर्स की दमनात्मक कार्यवाही से प्रभावित लोगों की दास्ता है। जिनके पास अपनी जवान बहू, बेटियों के तन ढ़कने, दूध मुहे बच्चे को दूध न दे पाने, और सिर पर छत नहीं है। चौतरफा त्रास्दी की मार सह रहे विवश वर्ग पर ईंट भट्टे के मालिक कुदृष्टि गडायें फांसने का इंतजार करते हैं ताकि ईट भट्टों में रेजा का

कार्य करने के बाद रात्रि में उनकी इज्जत को नीलाम किया जा सके और इस अपराधिक कृत्य में उनके गांव से लेकर ईट भट्टों तक पहुंचाने वाले मार्ग के सुरक्षा तंत्र जिसमें जी.आर.पी, स्थानीय पुलिस प्रशासन एवं सरकरी तंत्र भी चंद रूपयों की लालच में साथ देता है। लेखिका महाश्वेता देवी लिखती है कि इस षड़यन्त्र में जब तक रहमत जैसे ईंट भट्टे के संचालक जीवित रहेंगे अपराध की पराकाष्ठा की श्रृंखला अनवरत जारी रहेगी। कहानी के इस अंश से स्पष्ट है किः

सिर्फ वह यह नहीं जानती की यह इंतजार कब पूरा होगा। शनीचरी की कहानी तो खत्म नहीं हुई। जितने दिन रहमत निर्बाधित होकर ईंटों का भट्टा चलायेगा, जितने दिन गोहुमन काटेगी, जितने दिन मातृभूमि शनीचरी को खाना–कपड़ा नहीं देगी उतने दिन तक शनीचरी का हाथ घुमाकर उँगली दिखाने का स्थिर चित्र सामने रहेगा।

समाज द्वारा निकाले जाने ने व्यथित शनीचरी हीरालाल भिखारी से कहती है कि ये कहानी अंतहीन है ये कभी खत्म नहीं होगी। जब तक समाज में रहमत जैसे लोग रहेंगे बिना बाधा के ईंट भट्टे चलते रहेंगें। गोहुमन बीवी रोज शनीचरी जैसी नवयुवतियों लाकर हवस के भूख को शांत करने के लिए परोस्ती रहेगी। जितने दिन प्राकृतिक आपदाओं के बाद से पीड़ितो को दैनिक आवश्यकताओं की वस्तु नहीं मिलेगी। उनकें मजबूरी का लाभ उठाकर दैहिक शोषण होता रहेगा। सरकार में शामिल नुमाइंदे रुपये लेकर तमाशा देखते रहेंगे। लेखिका ने एक ऐसे ज्वलंत मुद्दे को कहानी के माध्यम से उठाकर महिला के खिलाफ हो रहे अत्याचार को खत्म करने का रास्ता दिखाया है।

महाश्वेता देवी ने शनीचरी कहानी के माध्यम से बताने का प्रयास किया है कि परिस्थितियोंवश उत्पन्न होने वाली समस्याओं के बाद गरीब की विवशता का लाभ सम्पन्न एवं शक्तिशाली वर्ग के द्वारा उठाया जाता है। यह कृत्य केन्द्र एवं राज्य सरकार की उपस्थिति में कानून के रखवालों के साथ साँठ–गाँठ से करते है। ऐसे वर्ग की

किशोरियों एवं युवतियों का दैहिक शोषण किया जाता है। दुर्दशा के पश्चात् जो अपराध इन पीड़ित युवतियों के द्वारा नहीं किया जाता है बावजूद उन्हें समाज प्रायश्चित् के बहाने उन्हें बहिष्कृत कर देता है। ईट भट्टों में दी गई यातनाओं से घायल युवतियों को अपनाना तो दूर उनके साथ हुए अपराध पर मलहम तक नहीं लगाया जाता है और उन्हें जीवन की पत्थरीली राह पर संघर्ष करने के लिए अकेले ही छोड़ दिया जाता है। पेट की ज्वाला व तन को ढकने की मजबूरी उन्हें ईंट भट्टो के नरकीय जीवन का सफर कराती है। इस सफर में बंधुआ मजदूर बनकर कठिन परिश्रम कराया जाता है। रात में उनकी इच्छा के विरुद्ध रोजाना अस्मत लूटी जाती है। इस अपराधिक कृत्य को देखने एवं जानने के बाद भी सुरक्षा तन्त्र दोषियों के खिलाफ केवल आर्थिक लाभ मिलने के कारण कारवाई नहीं करता है। इस शक्तिशाली वर्ग के हाथों कानून व उसके रखवाले पूरी तरह बिक चुके है। रोजाना अस्मत को तार–तार होने से गर्भवती हुई इन महिलाओं द्वारा शिशु को जन्म दिये जाने पर अविवाहित मां और उसकी संतान को समाज अपनाने से परहेज करता है। महाश्वेता देवी द्वारा समाज एवं व्यवस्था के इस दोष को कहानी के माध्यम से सामने लाकर सामाजिक चेतना जागृत कर समाधान करने का प्रयास किया है। इक्कीसवीं सदीं में भी ईंट भट्टों, औद्योगिक क्षेत्रों, दिहाड़ी मजदूरी करने वाली महिलाओं के खिलाफ शारीरिक शोषण एवं अस्मत लूटे जाने का क्रम आज भी परिलक्षित होता है। महिलाओं के साथ रोजगार के इन स्थलों पर इज्जत के साथ खिलवाड़ करने का क्रम आज भी जारी है। शासन तन्त्र के द्वारा नियम एवं कानून का हवाला देकर भले ही महिलाओं की अस्मत बचाने के खोखले दावे किये जा रहे है। परन्तु सत्यता से इन्कार नहीं किया जा सकता है।

प्रेतछाया

प्रेतछाया कहानी सुन्दर काया का अनुभव कर घमण्ड से ओत प्रोत एक युवक की कहानी हैं जो अधूरे ज्ञान के सहारे स्वयं को सर्वश्रेष्ठ समझता है और उसकी यही भूल जीवन में असफल बना देती है।

उसका सारा ज्ञान धरा का धरा रह जाता है। स्कूल में अव्वल रहने वाला विजय मार्ग से भटकने के बाद सामाजिक जीवन के गर्त में चला जाता है। वही स्कूली मित्र उसकी बराबरी करना तो दूर उससे कोसो दूर रहते थे। वे विजय को पीछे छोड आगे निकल जाते है। गृहस्थ जीवन में प्रवेश कर परिवार को सहारा तक देते हैं परन्तु विजय अत्यधिक प्रेम करने वाले पिता को खो देता है। मां और भाईयों से दूर हो जाता है अपने आप को बड़ा समझने की भूल भविष्य निर्माण में मिले कई अवसरों को लगातार ठुकराने के कारण अस्तित्व बचाने के लिए संघर्ष करता है। उसकी यही गलती उसे जीवन के दोराहे पर लाकर खड़ा कर देती हैं उम्र के पैंतालिस बसंत पार करने के बाद उसे अपनी गलतियों का अहसास होता है। परन्तु बहुत विलम्ब हो जाने के कारण वह स्वयं को स्थापित नहीं कर पाता।

असफलता के रथ पर सवार विजय को अंततः आत्महत्या करनी पड़ती है। विजय का यह सम्पूर्ण चरित्र लेखिका ने युवा पीढ़ा के समक्ष एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया है जिससे युवा वर्ग प्रेरणा लेकर अपने सफल चरित्र का निर्माण कर सकता है उन्होने युवा वर्ग के लिए इस कहानी के माध्यम से चेतना जागृत करने का प्रयास किया है कि उन्हें प्राप्त गुणों पर घमण्ड किये बगैर उन्हीं अच्छाईयों के सहारे अपने भविष्य का निर्माण करना चाहिए क्योंकि यही गुण उन्हें बल प्रदान करता है। गुमराह होने से बचाते है और आत्महत्या जैसे गलत मार्ग में जाने से रोकते है।

बाढ़

चीनिवास को दादी द्वारा बाढ़ के दौरान सुनाई गई कहानी याद आती है। बाढ़ रूपी संकट के घड़ी में पूरे गाँव में ऊँच और नीच का भाव स्वमेव समाप्त हो जाता है। मानवता की जीत होती है। सवर्ण एवं नीची जाति के लोग एक ही सुरक्षित स्थान पर पनाह लेते है। यहां तक ही भोजन भी एक साथ ग्रहण करते है। सभी ग्रामीणों को संकट की इस घड़ी में गाँव के सभी समृद्धशाली वर्ग के जमींदार एवं

साहूकार वर्ग द्वारा विशेष पकवानों के साथ भोजन कराया जाता है।

कितना सुंदर लाल–लाल भूजा था ओर कितने बड़े–बड़े बताशे थे, मगर चीनिवास की आंखों से आंसू बहने लगे। वह जानता था कि सवेरे से ही मछलियां, साग–सब्जी, दूध–दही कितना कुछ बहंगी पर ढ़ोकर लाया जा रहा था। भगवान जाने किसके लिए। तब अचानक चीनिवास को अपनी मां रूपसी पर गुस्सा आया।

"क्यों इस बार तूने रसोई–पूजा नहीं की, चुड़ैल ? क्यों पेट भात खाने की मेरी इच्छा कभी नहीं मरती ?"

सन्यासियों के नहीं पहुंचने के बाद भी आचार्य के नौकरों ने स्थल पर पहुंचे सभी श्रद्धालुओं को प्रसाद के रूप में भुजा एवं बताशा वितरित किया। भोजन की आस में पहुंचे चीनिवास उससे संतुष्ट नहीं था उसका दुख आंसुओं के रूप में वह रहा था। वह मन ही मन सोचने लगा सुबह से ही मछलियाँ, साग–सब्जी, दूध–दही बड़ी मात्रा में परिवहन कर प्रसाद वितरण के लिए ही लाया गया था। लेकिन यह सभी खाद्य सामग्री कहाँ चली गई। सोचता रहा। इसी बीच उसे अपनी माँ रूपसी की याद आई उसे बहुत गुस्सा भी आ रहा था क्योंकि पूरे वर्ष माँ मनसा के पेड़ की पूजा कर उसे भरपेट भोजन कराती थी लेकिन इस बार नहीं कराने के कारण उसे गुस्सा आ रहा था। समारोह के बहाने भोजन प्राप्ति की आशा भी अब खत्म हो चुकी थी। मन ही मन अपनी माँ से रूक–कर बताशा और भूजा लेकर स्थल से दूर भाग जाता है। लेखिका महाश्वेता देवी भूख की पीड़ा को अपनी कहानी के माध्यम से इस तरह व्यक्त करती है किः

दोनों पानी में छपछप करते हुए चले जा रहे थे। घर की ओर जाते–जाते चीनिवास ने कहा,"गौरांग की बाढ़ से तो वह बाढ़ अच्छी थी, आजी। वैसी बाढ़ अब नहीं आयेगी क्या? वह बाढ़, जिसमें बरामन लोग खूब चूड़ा, भूजा–भात–दाल–तरकारी देते थे ? दूख दूर हो जाता था?"

कहानी का पात्र चीनिवास इस भूख की पीड़ा को सहन नहीं कर

पाता। इस अनुघ्च्छेद के माध्यम से लेखिका महाश्वेता देवी कहती है कि घना अंधेरा होने पर देर रात को उसकी दादी रूठे हुए चीनिवास को मनाकर घर ले जाने के लिए उसके पास पहुंचती है। अंधेरे से भयभीत चीनिवास दादी को देखकर उनसे लिपट जाता है। दोनों ही साथ–साथ घर जाने लगते है। घर लौटते हुए उसे दादी की बताई हुई, बाढ़ की कहानी याद आती है। और वह कहता है कि संन्यासी के पहुंचने पर आयोजित समारोह कि अपेक्षा गंगा की बांढ़ बहुत अच्छी थी आजी से प्रश्न पूछता हुआ कहता है कि क्या अब बाढ़ कभी नहीं आयेगी आजी? वह बाढ़ जिसके आने से ब्राह्मण लोग खुब चुड़ा, भूजा, दाल, तरकारी देते थे। जिसके कारण सारे दुख दूर हो जाते थे। अर्थात् लेखिका के भूख की पीड़ा को पूरजोर के साथ उल्लेखित करने का प्रयास किया है। कि पेट की भूख के आगें बाढ़ की आपदा से अज्ञान अबोध बालक भगवान से प्रार्थना कर उसे पुनः बुलाना चाहता है। इस बाढ़ से कितने ही पशु एवं मानव की जिंदगी खत्म हो जाती है। लेकिन उससे उस अबोध बालक को कोई मतलब नहीं है। वह अबोध बालक अपने पेट की ज्वाला को शांत करना चाहता है। अर्थात् पेट की भूख मौत से भी बढ़कर है। चीनिवास का बालक मन भोजन प्राप्ति के लिए ईश्वर से पुन बाढ़ लाने के लिए बारंबार प्रार्थना करता है। उसका यह बाल हट बाढ़ रूपी प्राकृतिक आपदा के साथ आने वाले मौत के तांडव से अंजान है। वह नहीं जानता की उसकी भूख मिटाने की लालसा अनजाने में कितने ही मनुष्यों और पशु पक्षियों की मौत के लिए प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तौर पर जिम्मेदार होगी।

गरीब, निर्धन और जरूरत मंद वर्ग को एक जून की रोटी प्राप्त करने के लिए लगातार संघर्ष करना पड़ता है। आज भी हमारे देश में रोज लगभग बीस करोड़ लोगो को भोजन प्राप्त नहीं होता। ऐसे अभागों को खाली पेट ही सोना पड़ता है हजारो लाखो बच्चे कुपोषण का शिकार है कुपोषण के शिकार मासूमो को बाल्यावस्था में भी शरीर के कई अंगो को खोना पड़ जाता है इस कहानी के माध्यम से

लेखिका देश की सरकार से पेट की इस ज्वाला कों शांत करने के लिए कारगार उपाय करने के लिए संदेश दे रही है ताकि चीनिवास जैसे भूखे बालक को मौत का तांडव लेकर आने वाली बाढ़ को पुनः आमंत्रित करने के लिए अपने अराध्य से प्रार्थना न करना पड़े। ये उन लोगो के लिए भी संदेश है जो वर्ग अपनी भूख से ज्यादा भोजन करते हैं। पेट की ज्वाला को बिना जाने समझे अत्यधिक मात्रा में भोजन या खाद्य सामग्री को बर्बाद करते है। इस देश का प्रत्येक नागरिक पुरजोर ध्यान दे कि यह बर्बाद किये जाने वाली खाद्य सामग्री हजारों लाखो, भूखे बच्चे बुजुर्ग महिलाओं की भूख को मिटा सकती है।

भारत वर्ष

लेखिका महाश्वेता देवी ने अटाई गाँव की परिस्थितियों से परिचित कराते हुए लिखा है कि सूर्योदय की रोशनी के साथ उठने एवं सूर्य देवता के डूबने के साथ गाँव सो जाता है। अत्यधिक पिछडेपन का शिकार अटाई गांव विकास की रोशनी से कोसो दूर है। भारत में यह परिस्थिति किसी एक गांव के साथ नहीं बल्कि हजारों गांव में इन्हीं हालातो का सामाना ग्रामीणों को करना पड़ता है। रात्रि के समय प्रकाश व्यवस्था के रुप में मिट्टी तेल की ढिबरी या लालटेन ही एक मात्र सहारा था। इस गाँव की आबादी आसपास के टोले को मिलाकर तीन सौ के लगभग थी। पलामू में जानवरों के रूप में सौ बकरियों के करीब और कुछ मुर्गियाँ थी। इस अभाव ग्रस्त गाँव में आदिवासियों को एक गाय तक नसीब नहीं थी। पूरे गाँव में तीन लोगों के पास ही टार्च था। वस्त्रों में फूल पेन्ट या पतलून केवल चार लोगो के पास ही थी। इतनी कम मात्रा में सामानों को देखकर अंदाज लगाया जा सकता था। अटाई गाँव बेहद पिछड़ा हुआ। सरकारी उपेक्षा का शिकार गाँव था। एक तरह से कहा जा सकता था कि भारत के मानचित्र में ही शामिल नहीं है। यहां जीविकोपार्जन के लिए कोई साधन नहीं था। झील में पानी तो बहुत था लेकिन जमीन पथरीली होने के कारण निवासियों ने फसल लगाने का दुःसाहस नहीं किया था।

हमारे देश में 70 फीसदी आबादी ग्रामीण अंचलों में रहती है। यह आकड़ा सरकारी है परन्तु सुविधा देने की योजना जब भी बनती है तब शहर में रहने वाली 30 प्रतिशत आबादी को प्राथमिकता दी जाती है। सर्वविदित है कि किसी भी देश की अर्थ व्यवस्था का सम्पूर्ण भार गांव के किसान के कांधे पर होता है। इसके बाद भी गांव को विकास से दूर रखने की शासन की नियती समझ से परे है। आखिर किन कारणों से विकास के मार्ग को गांव तक पहुंचने नहीं दिया जाता है। मानवीय दृष्टिकोण के अनुरूप मूलभूत सुविधाओं में पीने का शुद्ध पानी, आवागमन के लिए सड़क, रोशनी के लिए बिजली की सुविधायें, पढ़ाई के लिए अच्छे शिक्षण संस्थाएं और इलाज के लिए सर्वसुविधायुक्त अस्पताल उपयुक्त नहीं होते है। गांव के नागरिक आज भी मूलभूत सुविधाओं के लिए तरस रहे है। शासन की और आशाभरी नजरों से देख रहे है ताकि सरकार उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति शीघ्र कर सके। जिससे भविष्य में किसी भी ग्रामीण की इलाज के अभाव में मौत न हो सके। ग्रामीण बालक पढ़ाई के अभाव में अनपढ़ न रहे।

लेखिका ने अटाई गांव का उदाहरण देकर एक पिछडे हुए गांव की सच्चाई से सरकार को अवगत कराने का प्रयास किया है। व्यवस्था में शामिल प्रत्येक सरकारी कर्मचारी भी अटाई गांव की वस्तुस्थिति से परिचित था। इसीलिए सरकारी सेवाकाल के दौरान वह अटाई गांव में एक भी पल नहीं रहना चाहता था। सरकारी कर्मचारी की इस सोच से स्पष्ट होता है कि अटाई गांव की दुर्दशा से सरकार भली भांति जानती थी। फिर भी इस स्थिति को सुधारने के लिए सरकार द्वारा पहल नहीं करना अटाई गांव के निवासियों के साथ घोर अन्याय था।

छुक–छुक, छुक–छुक आ गेल गाड़ी.....

लेखिका ने छुक–छुक, छुक–छुक आ गेल गाड़ी..... कहानी के माध्यम से कोल्हाटी समाज में व्याप्त सामाजिक बुराई की ओर शासन तन्त्र का ध्यान आकर्षित कराते हुए उल्लेखित किया है कि घर की

बेटी जो अपने घर, मोहल्ले, कस्बे, समाज, राज्य व देश की इज्जत होती है। उसी बेटी को खेलने कूदने की, पढ़ने लिखने की ननिहाल जाने की कच्ची उम्र में सरेआम हवस का शिकार बनने के लिए नीलाम कर दिया जाता है। नीलाम करने वाले बच्ची को जन्म देने वाले माता–पिता ही होते है जो अपनी दैनिक आवश्यकताओ की पूर्ति एवं भोग विलासिता के वस्तुओं की खरीदारी के उददे्श्य की पूर्ति के लिए करते है। जब उसका शरीर इस अवस्था के लिए तैयार नहीं होता है। खरीदार द्वारा दिये जाने वाले रूपयों पर नीलाम हो रही लड़की के माता पिता, भाई, समाज की नजर होती है। खरीदार के लिए कोई पैमाना नहीं होता है। खरीदने वाले का आचरण, व्यवहार और उम्र कोई मायने नहीं रखता है। चन्द रूपयों में अबोध बालिकाओं को पाकर खरीदार, हैवान की भांति लड़की के तन व मन के साथ खेलता है। इसकी पीढ़ा अबोध बालिका सदियों से सहन करती आयी है। यह पूरा तमाशा कोल्हाटी समाज पुरानी परम्परा का हवाला देकर उस अनैतिक रीति को मानता आ रहा था। एक खरीदार द्वारा छोड़े जाने के बाद माता–पिता लड़की को रूपयों की मशीन समझ कर कई– कई बारा बेचते रहते है जब तक बाजार में खरीदार उपलब्ध है। भले ही वह युवती अलग–अलग पुरूषों से होने वाली संतान को जन्म देती रहे। इस नई पौध को भी मां की ममता से दूर रखा जाता है ताकि युवती की खरीद फरोख्त में उसका बच्चा बाधा उत्पन्न न कर सके। उसकी बाजार में बोली लगती ही रहती है। इस बोली से प्राप्त आमदनी से पूरा परिवार फलता फुलता है।

कमलेश भट्ट ने युवतियों की व्यथा को बड़े ही कोमल स्वर में व्यक्त किया है। उन्हीं के शब्दों में:

"भाइयों के घर में जब बेकारियाँ बढ़ती गई
इक बहन के सर पे जिम्मेदारियाँ बढ़ती गई।
बँट गई माँ–बाप भाई के भी किरदारों में वो
इस तरह से नौकरी की पारियाँ बढ़ती गईं।
दिन ब दिन मरने लगे शहनाइयों के ख्वाब भी

जैसे–जैसे पेट की दुश्वारियाँ बढ़ती गईं।
और तन्हा और तन्हा रोज वो होती गई।"

जाने किस जमाने में, किस राजा ने कोल्हाटिनों को खरीद–फरोख्त की सामग्री बनायी थीय सरे बाजार नीलाम कर देने की परंपरा शुरू की थी। मंदा हीरामन ने उन्हें हरा दिया। उन्हें जबर्दस्त मात दे डाली।

कहानी की नायिका छाबू के सशक्त विरोधी स्वर ने कोल्हाटी समाज की बेटियों के खरीद फरोख्त की रूढ़ियों पुरानी परम्परा को अपने दृढ़ संकल्प के माध्यम से हरा दिया था। सरे बाजार में बेटियों को नीलाम करने की परम्परा पर अंकुश लगाने में छाबू सफल रही छाबू एक ऐसी रेल गाड़ी पर सवार थी जिससे समाज की कई लड़कियों को नीलाम होने से बचा सके। और वह इस रेलगाड़ी को गंतव्य के स्टेशन तक पहुंचने में सफल रही। एक प्रकार से जीवन की पटरी पर उसकी यह गाड़ी वापस लौटते हुए दौड़ पड़ी थी।

अन्ततः लेखिका की नायिका छाबू दो बार बाजार में नीलाम होने के बाद तीसरी बार बेचे जाने के पूर्व फुंकारते हुए माता–पिता द्वारा तीसरे मर्तबा बेचे जाने की प्रक्रिया या इस परम्परा को रोकते हुए ध वस्त कर देती है। विरोध के उभरे सशक्त स्वर को कुचलने के लिए पंचायत छाबू को मौत की सजा सुनाती है। परन्तु विमुक्त आन्दोलन की उपस्थिति बचा लेती है। इस प्रकार नायिका समाज के इस गलत वर्चस्व को तोड़ने में कामयाब होती है।

गहराती घटायें और ईंट के ऊपर ईंट दोनों ही कहानियों में सामाजिक व्यवस्था में रहते हुए बाहुबली मानव समाज द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों का चित्रण किया गया है। साथ ही लेखिका ने ईंट के ऊपर ईंट व कृष्ण द्वादशी कहानियों में नारी वर्ग के शारीरिक शोषण की पीड़ा को मार्मिक ढ़ंग से उजागर किया है। ईंट के ऊपर ईंट कहानी में उन्होंने उल्लेखित किया है कि अकाल पीड़ित गाँव में जहाँ पेट की आग को शान्त करने के लिए महिलायें पलायन कर ईंट

के भट्टों में अपने परिवार रिश्ते, नातेदारों से दूर होकर आधी अधूरी मजदूरी पर दिन भर कठिन परिश्रम करती हे। रात का अंधेरा होते ही बाहुबली मालिकों द्वारा उनकी अस्मिता को प्रतिदिन तार–तार किया जाता है। गर्भवती हो चुकी महिलाएं किसी तरह अपने घर पहुंचती है तो उन्हें परिजन, रिश्ते–नातेदार, समाज तक नहीं अपनाता। उनसे होने वाली उन संतानों को जीवन भर कोई नाम नहीं मिल पाता है।

————::::————

अध्याय 06 समकालीन कथालेखन में महाश्वेता देवी का महत्व और अवदान

महाश्वेता देवी के कहानियों में सामंती ताकतो के शोषण उत्पीड़न, छल प्रपंच के विरूद्ध सताये हुए लोगों के संघर्ष अनवदत जारी है। पीड़ित वर्ग हमेशा मार खाता है और उसको धुतकारा जाता है। इतनी उलाहना के बावजूद वह नहीं थकता। क्रूरता एवं बर्बरता के सामने वह टिका रहता है। महाश्वेता देवी ने आदिम जनजातियों के अलावा समाज के अन्य ज्वलंत मुद्दो में भी लिखा है। युवा वर्ग का अश्लीलता एवं नशे में डूबने जैसे मुद्दों पर भी अपनी लेखनी के माध यम से संदेश दिया है। महिलाओं की अस्मिता और आत्मरक्षा के मुद्दों पर भी लिखती रही। निर्मल घोष के साथ मिलकर उन्होंने भारत के बंधवा मजदूर नामक पुस्तक लिखी थी। वे स्वयं के साहित्य के अलावा पत्र–पत्रिकाओं में भी लिखती रही है। लेखन शैली उनकी जीविका का एक मात्र साधन होने के कारण वे पेशेवर लेखिका है लेकिन उन्होंने लघु पत्रिकाओं में भी लिखा है। उन्होंने अपने जीवन का अनुशासन शांतिनिकेतन से ही सीखा था और उनके यह संस्कार उम्र के आखरी पढ़ाव में भी कायम है। महाश्वेता देवी हमेशा से ही अपने लेखनी को लेकर सचेत रही है ताकि उनकी लेखनी से किसी का अहित न हो।

दूर पक्षों में उनका व्यक्तित्व लेखिका, सामाजिक कार्यकर्त्ता, रिपोर्टर और छोटे–छोटे वंचित शोषित समूहों का संगठक है। लेखिका के रूप में उनका अवदान विस्तृत है। संख्याहीन नहीं साहित्य की दृष्टि से उनका योगदान महत्वपूर्ण है उन्होंने निचली जाति के युवकों को मानव अधिकार हासिल करने के लिए वाणी दी। दक्षिण बिहार, बंगाल, उड़ीसा, गुजरात एवं महाराष्ट्र की जनजातियों के बीच वर्षो तक काम करने के अनुभव ने महाश्वेता देवी को ऐसी

शक्ति दी कि आधुनिक भारतीय जीवन की पीढ़ा नामक मुद्दों का अनुभव कर अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त कर सके। आदिवासियों के जीवन और वृतांत के माध्यम से इतिहास और वर्तमान राजनैतिक परिदृश्य के सहारे सामाजिक परिवेश के मानवीय दर्द को परिभाषित किया। भारतीय आदिवासी समाज उपेक्षित, वंचित वर्ग महिलाओं एवं युवाओं के बारे में भी लिखा है। ढ़ाई सौ से भी ज्यादा पुस्तकों के माध्यम से मानवीय जीवन के हर पहलुओं को समझने एवं समझाने का प्रयास किया। तीन दशकों से भी ज्यादा समय तक आदिवासियों के साथ रहते हुए भौतिक कार्य किये है। आदिवासियों में पालूम के बंधवा मजदूरों, मेदनी पुर के लोधा, पुरूलिया के खेड़िया, शबर आदिवासियों के मध्य रहकर उनके जीवन पर खूब लिखा तीन दशक तक आदिवासियों के मध्य गुजारे गये समय से यह प्रमाणित होता है कि उनके कर्म एवं कथा में अन्तर नहीं प्रमाणिक किया जा सकता हैं।

महाश्वेता देवी की कृतियों का अध्ययन कर उनके सामाजिक सरोकार को समझा जा सकता है। साहित्यतिक जगत के लोग अकसर कहते सुने गये है–'अच्छा महिलाएँ भी लिखती हैं।' यह एक और चेतना है कि क्या नारी लेखिका हो सकती है इस 'समाज' में ? वैसे तो महिला लेखन और पुरुष लेखन में कोई अन्तर नहीं। साहित्यकार का कोई लिंग नहीं होता। नारी लेखन आज सामाजिक चेतना का वाहक बन गया है। वह घर से बाहर आकर खुला संसार खुली आँखों से देख चुकी है। अब उसमें इतनी सामर्थ्य है कि स्वयं कहानी अपने शब्दों में बयान कर सकती है। अब और शोषण उसे पसन्द नहीं। स्वतन्त्रता के बाद स्थिति में अभूतपूर्व बदलाव आया। स्त्रियों के लिए जो नैतिक मर्यादा पहले अनिवार्य समझी जाती थी, वह विभाजन के एक ही झटके में टूटकर बिखर गयी और सारी संस्कारशील मान्यताएँ एक चुनौती बन गयीं। विभाजन का भयानक शिकार स्त्री जाति बनी। यह निर्ममता का व्यवहार मानव जाति के लिए कलंक था। नारी जागृत हुई नैराश्य के वातावरण में उसके

अन्दर एक व्यक्तिवादी दृष्टिकोण उभरना स्वाभाविक था। इसी से मानव सम्बन्धों की व्याख्या बदली और बदल गये हमारे जाने–पहचाने सन्दर्भ।

महाश्वेता देवी नें नारी की पीड़ा को उकेरा है। बदलाव को समझा और महसूस किया है। अचानक परिवर्तन का दौर आया जनमानस उसके लिए तैयार नहीं थे। संघर्ष जोरों पर था। स्वातंत्र्योत्तर युवा नारी की महज छटपटाहट और अलग–अलग संघर्षो को महाश्वेता देवी ने अपने कहानियों में अलग–अलग प्रकार से अभिव्यक्त किया है। सामाजिक भूमिका में नारी की चेतना आज जरुर पुकारती है–'तू पुरुष का खिलौना नहीं है। 'पर कम, क्योंकि श्रद्धा, सहानुभूति, सौजन्य, करुणा यह गुण स्त्री में सहज, सुलभ हैं उनकी अभिव्यक्ति में वे सफल हैं। यह भी सच है कि कार्यानुभूति का अवसर भी उन्हें कम मिला है।

बांयेन

लेखिका ने बांयेन कहानी के माध्यम से यह संदेश देने का प्रयास किया है कि अंधविश्वासी, रूढ़िवादी परम्पराओं के कारण किसी भी महिला को जो किसी की पत्नी, माँ, बहु, बहन होती है उसे जबरदस्ती टोनही, डायन या बांयेन जैसे नामों से अलंकृत किया जाता है। समाज उसे दिक्कार कर बहिष्कृत कर देता है। लेकिन वह महिला सामान्य लोगों से भी बढ़कर मानवता की सबसे बड़ी मिसाल होती है। महाश्वेता देवी ने ऐसे ही पात्र चण्डी को दर्शाया है, जो कि डोम प्रजाति से है। जिनका मूल कार्य मृत्यु उपरान्त शवों का कफन दफन करना होता है। जिन्हें स्वयं समाज एक अलग नजरिये से देखता है और डोम प्रजाति को मुख्यधारा से अलग कर जिसे सदैव ही बहिष्कृत किया जाता है। ऐसे ही प्रजाति के लोग चण्डी को बिना प्रमाण के हत्यारिन बताकर बांयेन बना देते है और उसे बहिष्कृत कर रहने के लिए मजबूर करते है लेकिन मूलरूप से इस सामाजिक महिला चण्डी के द्वारा सामाजिक बहिष्कार के बाद भी मानवीय धर्म को सर्वोपरी मानते हुए अपने प्राणों की बलि देते हुए एक भयानक ट्रेन हादसे को

बचाया जाता है जिसमें चण्डी हजारों लोगों के प्राण को बचाती है। जो कि मानवता का सबसे बड़ा उदाहरण है। सम्पूर्ण डोम वर्ग समाज, राष्ट्र तथा सम्पूर्ण मानव जाति को उन्होंने यह समझाने का प्रयास किया है कि बांयेन, डायन, डाकिनी, डाकन जैसे किरदार केवल शैतानी मस्तिष्क की उपज है जो महिलाओं को प्रताड़ित करने का साधन मात्र है। इस भ्रमजाल में फंस कर सामान्य महिलाओं को उनकी समय से पूर्व मृत्युद्वार तक पहुंचा देते है। अतः इस प्रकार की अंधविश्वासी प्रथाओं को ग्राह करने की अपेक्षा इसका तिरस्कार किया जाना चाहिए। समाज एवं राष्ट्र को चाहिए की ऐसी कुप्रथाओं से गुमराह हुए बिना इन प्रथाओं के भ्रम जाल से उभर कर पीड़ित एवं प्रताड़ित महिलाओ को उन्हें उचित स्थान देकर आश्रय देना चाहिए।

डायन पर फिल्म बनाने वाले निर्देशक मनीष श्रीवास्तव ने भी कहा है कि डायन प्रथा को खत्म करने की तत्काल जरूरत है। जिस प्रकार की देश में सती प्रथा को खत्म किया गया था। उसी प्रकार से डायन प्रथा को भी खत्म करना आवश्यक है। संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के मुताबिक सन् 1987 से लेकर सन् 2003 तक 256 महिलाओं की डायन बताकर हत्या कर दी गई। राष्ट्रीय महिला आयोग के अनुसार झारखण्ड, असम, गुजरात, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, बिहार, पश्चिम बंगाल और महाराष्ट्र के पचास जिलों में डायन बताकर महिलाओ पर अत्याचार किये जाने का क्रम जारी है। अंधविश्वास एवं रूढीवादीता के जरिए महिलाओं को डायन, डाकन, टोनही आदि का नाम दिया जाता है। महिला आयोग के अनुसार अकसर महिलाओं को संपत्ति से बेदखल करने, यौन शोषण का विरोध करने, पत्नी को तलाक देने के कारणों से डायन बना दिया जाता है।

लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से बताने का प्रयास किया है कि यह मानवीय समाज अंधविश्वास रूप परम्पराओं के माध्यम से किसी भी एक पारिवारिक महिला का जीवन उजाड़ देती है। एक पालन हार महिला को आरोपित कर समाज में उसे यमराज की संज्ञा दे दी जाती है। इसके बावजूद उसके हृदय में छिपी ममता को

विलुप्त नहीं कर पाते समाज द्वारा दी गई पीड़ा, प्रताड़ना से ऊपर उठकर एक माँ निर्दोष लोगों की जान स्वयं के प्राण त्याग कर बचा लेती है। अंत में इस महान कार्य के लिए शासन द्वारा उन्हें मृत्यु उपरान्त चण्डी के सम्मानित किया जाता है। अर्थात् लेखिका ने समाज द्वारा स्थापित अंधविश्वास परम्पराओं को झूठा प्रमाणित किया है।

रांग नंबर

महाश्वेता देवी के द्वारा रचित कहानी रांग नंबर सन् 1972 में लिखी गई। इस कहानी के माध्यम से यह ज्ञात होता है कि आज के युग में प्रचलित एकल परिवार की व्यवस्था में पूर्व कालीन संयुक्त परिवार की सामाजिक प्रथा श्रेष्ठ है। क्योंकि संयुक्त परिवार में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के पास संपूर्ण जीवन काल में विकल्प मौजूद रहते है और किसी भी मुसिबत की घड़ी में स्वास्थ्य के साथ में उसका मानसिक संतुलन बना रहता है। जो कि उसे भटकने नहीं देता और किसी भी परिस्थितियों से परिवार में मौजूद विकल्प के आधार पर लड़ सकता है और उनका सामना कर सकता है। वह उम्र के अंतिम पड़ाव मे मजबूर नहीं बल्कि मजबूत रहता है।

लेखिका ने रांग नंबर कहानी के माध्यम से यह संदेश देने का प्रयास किया है कि संयुक्त परिवार की पुरातन व्यवस्था हमें एकता के सूत्र में बांधे रखते है। जिस समाज में रहने वाले व्यक्ति संगठित होगे उनका समाज भी संगठित होगा। यदि समाज संगठित है तो राज्य भी संगठित होगा और जिस देश का राज्य संगठित है। निश्चित रूप से वह राष्ट्र भी संगठित होगा अर्थात् महाश्वेता देवी की इस रांग नंबर कहानी से एकता में बल है का नारा चरितार्थ होता है।

बीज

आजादी के 30 वर्षो बाद महाश्वेता देवी द्वारा लिखित बीज कहानी जमींदारों के शोषण के खिलाफ मजदूरों के प्रतिशोध की कहानी है। खेतिहर मजदूरों को श्रम के एवज में जमींदार शासन द्वारा तय

न्यूनतम मजदूरी से बहुत ही आंशिक राशि का भुगतान प्रतिवादी चेतना के कारण किया करते थे। अधिकार प्राप्ति के लिए संघर्ष करने वाले कई मजदूरों की हत्या जमींदार लक्षमण सिंह एवं उसके गुण्डों द्वारा कर दी जाती है। इस सम्पूर्ण घटनाक्रम से परिचित होने के बावजूद जिम्मेदार शासनतंत्र की कार्यवाही से स्वयं को दूर रखता है। शासन तंत्र की इस घोर लापरवाही व अपने पुत्र तथा साथियों के मारे जाने के गम में कहानी के मुख्य पात्र दुलन को प्रतिशोध के लिए प्रेरित करता है। दूलन के प्रतिशोध की यह ज्वाला जमींदार लक्षमण का अंत कर देती है। कहानी के इस अंश से स्पष्ट हैः

"मेरा धान तुम लोगों के लिए बीज है। तुम लोग यह बीज लो।"

"तुम अपना धान दे रहे हो?"

"हां। काट ले जाओ। ऐसा क्यों हुआ इसके पीछे लंबी कहानी है।"

"खाद दिया था?"

"खाद? हां दिया था। बहुत दामी खाद दिया था....."

लछमन सिंह की मौत के बाद पूरे गाँव को इस समस्या से छुटकारा मिल चुका था तब दूलन ने कहा कि अब सभी लोग मेरे खेत का धान कांट सकते है। लेकिन इसका उपयोग अनाज के रूप में नहीं किया जायेगा बल्कि बीज बनाकर सभी अपने–अपने खेतो में फसल की पैदावार करेंगे। ऐसा क्यों? पूछने पर कारण वश दूलन ने कहा कि इसके पीछे लम्बी कहानी है। परन्तु मैने बहुत ही बहुकिमती खाद का प्रयोग इस फसल उगाने में किया इसलिए यह धान नहीं बीज है। अंत में दूलन खेत की मेड़ में खड़ा होकर धान को देखते हुए स्वयं से बाते करता है। करन, बुलाकी, धतुआ, पारस, मधुबन के शवों की खाद से ये फसल लहलहा रही है। इस फसल में भी एक आश्चर्य जनक खुशी एवं दूलन के आंखो में चमक दिखलायी पड़ती है क्योंकि ये फसल भी सदैव बीज बनकर जीवित रहेगी। उसके मन में एक खुशी थी कि मैंने संघर्ष के बाद मारे गये सभी मजदूरों को बीज के रूप में जीवित रखा है। उनके अस्तित्व को आज भी समाज में बनाये रखा है। जबकि लछमन सिंह जैसे अत्याचारी के अस्तित्व

को समाप्त कर दिया है। उसकी कब्र के ऊपर उगने वाली नागफनी के कंटीले झाँड़ियाँ मनुष्य को तो क्या ? जानवर तक को भी काम नहीं आयेगी।

महाश्वेता देवी इस कहानी के माध्यम से ध्यान आकर्षित कराते हुए कहती है कि लक्ष्मण सिंह जैसे सामाजिक बुराई जो स्वहित के लिए पूरे समाज में अराजकता की स्थिति पैदाकर निचली जाती के खेतीहर मजदूरो का शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, शोषण कर अपने पैरों के तले वर्षो तक अत्याचार करते है परन्तु दुलन जैसे संघर्षशील व्यक्तित्व अपनी चतुराई से बलिदानी मजदूरों का अस्तित्व कायम रखते हुए लक्ष्मण सिंह द्वारा बनाये गये दलदल में सभी को बहार निकाल लेते है अर्थात् अत्याचार, शोषण एवं दमन जैसी सामाजिक बुराईयों का दृष्टि निश्चित एवं संकल्प के माध्यम से खातमा किया जा सकता है। दुलन पात्र ने भी इस कहानी में लक्ष्मण सिंह जैसे बाहुबलियों का अन्त कर गाँव के लोगो को शोषण से मुक्ति दिलाई। आज वह गाँव अर्थात् कुरूडा और हेसाडी ग्राम स्वतंत्रतापूर्वक अपना जीवन निर्वाह कर रहा है। कहानी के माध्यम से जमींदारी प्रथा को समाप्त करने की प्रेरणा मिलती है। जहाँ पूर्व में जमींदारों द्वारा सम्पूर्ण गांव के लोगो का शोषण किया जाता था। समय के साथ शोषण का स्वरूप परिवर्तित हो गया लेकिन आज भी जारी है। पूर्व में सरकारी अफसर द्वारा जमींदारो के माध्यम से आर्थिक आकांशाओं की पूर्ति की जाती थी वर्तमान समय में बड़ी–बड़ी सरकारी योजनाओं में मास्टर रोल में हेराफेरी करके मजदूरों के हक को रूपयों का गबन करने का क्रम जारी है।

बाढ़

देश की स्वतंत्रता के साथ सबसे बड़ी समस्या सम्पूर्ण आबादी को भूख रूपी तृष्णा को शांत करने की चुनौती शासन तंत्र की रही है। परंतु छः दशक बाद भी इस समस्या पर विजय प्राप्त नहीं कर सके है। प्रतिवर्ष देश में भूखे सोने वालो में वृद्धि होती रही है। इसी को ध्यान में रखकर चालीस वर्ष पूर्व लेखिका महाश्वेता देवी द्वारा इस

गंभीर विषय को अपने रचना संसार में स्थान दिया। उनके द्वारा आदिवासी समुदाय के मध्य रहते हुए भोजन की व्यवस्था के लिए किये जाने वाले कठिन प्रयासों को देखा है। भोजन के लिए चीनिवास की तड़प को कहानी के माध्यम से दर्शाया है। भूख की मजबूरी के कारण उसे मौत रूपी बाढ़ अच्छी लगती है। इस कहानी के महत्व को संयुक्त राष्ट्र संघ की वार्षिक रिपोर्ट से स्पष्ट किया जा सकता है। इस रिपोर्ट के मुताबिक भारत देश भूखमरी का शिकार है।

संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन ए.एफ.ओ ने अपनी रिपोर्ट में द स्टैट आफ फुड इनसिक्युरिटी द वर्ल्ड 2015 में विश्व स्तर पर भूखे लोगों की संख्या घट कर 79 करोड होना बताया है। जबकि वर्ष 1990–92 में भूखे लोगों की संख्या विश्व स्तर पर एक अरब थी अर्थात् यह कहा जा सकता है कि पच्चीस वर्षो में विश्व स्तर पर व्यापक पैमाने पर कार्य किया गया। जिसके कारण 20 प्रतिशत की गिरावट आई है परन्तु भारत में 1990–92 में भूखे लोगों की संख्या 21 करोड़ थी। 2014–15 में घट कर 19करोड़ 46 लाख है। सम्पूर्ण विश्व के 79 करोड़ में से 20 करोड़ लोग भारतीय है।

लेखिका इस कहानी के माध्यम से यह बताना चाहती है कि भूख और गरीबी के सामने मौत भी कोई मायने नहीं रखती। वरना वह बालक चीनिवास अपनी भूख शांत करने के लिए बांढ़ को कभी भी आमंत्रण नहीं देता। लेखिका यह कहना चाहती है कि मानवीय समाज की सर्वाधिक अनिवार्य आवश्यकता पेट की भूख को मिटाना होती है। सूर्योदय एवं सूर्यअस्त तक मानव के सम्पूर्ण कर्म मानवीय आवश्यकता के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थो के पूर्ति के लिए ही गुजार देता है। उसके सम्पूर्ण जीवनकाल का अधिकांश समय रोटी की व्यवस्था में गुजरता है। चालीस वर्ष पूर्व देश के सबसे बड़े ज्वलंत विषय को उठाते हुए महाश्वेता देवी ने शासन को इस दिशा में कार्य करने के लिए प्रेरित किया। आजादी के 68 वर्ष के बाद भी ये समस्या आज भी कायम है। यह चुनौती शासन तन्त्र के लिए बनी हुई है। प्रति दिन इस देश का पांचवा नागरिक भूखे रहता है। भूख

के कारण प्रतिवर्ष लाखों लोगों की मौत का सिलसिला बरकरार है। इस कहानी के मुख्य पात्र चीनिवास की भूख इस देश के हर बच्चे की भूख की तृष्णा के समान है। इसलिए शासन तंत्र को पूरी ताकत के साथ इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए प्रेरित करती है।

मूर्ति

महाश्वेता देवी की मूर्ति कहानी भरतीय सामाजिक व्यवस्था की इस खामियों के कारण आज भी महत्वपूर्ण है। समय–समय पर हुए परिवर्तनों के कारण पुरूष प्रधान समाज में महिलायें अपने अस्तित्व को स्थापित कर पाई है। परन्तु विधवा विवाह जैसी खामी को दूर करने के लिए समाज आज भी व्यवस्था नहीं दे पाया है। विधवा विवाह की कल्पना केवल विचारों, सम्मेलनों तक सीमित है। सामाजिक समस्या विधवा के मुख्य कारणों में बाल विवाह प्रमुख है। आज से 155 वर्ष पूर्व सन् 1860 में बाल विवाह को अंग्रेज शासन काल में गैर कानूनी घोषित किया गया था। परंतु मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, एवं पश्चिम बंगाल राज्य में आज भी बाल विवाह हो रहे है। सरकारी रिपोर्ट के मुताबिक भारत में होने वाले विवाह में 47 प्रतिशत बाल विवाह होते है। पूरे विश्व में यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार दुनिया भर में होने वाले बाल विवाह में भारत का हिस्सा 40 प्रतिशत है। यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार भारत में होने वाले बाल विवाह में से 82 प्रतिशत राजस्थान से होते है। बाल विवाह अर्थात् 18 वर्ष से कम उम्र की लड़कियों की शादी के किये जाने को माना गया है। महिला सशक्तिकरण महिला शिक्षा महिला आरक्षण जैसे विषयों को लेकर जोर शोर एवं उत्साह के साथ कार्य किये जा रहे है। परन्तु विधवा विवाह को लेकर आज भी व्यापक पैमाने पर कार्य नहीं किये जा रहे है। ऐसे में महाश्वेता देवी के द्वारा इस विषय को उठाकर समाज के लिए महत्वपूर्ण कार्य किया। कहानी के माध्यम से विधवा होने के बाद उसके हिस्से में अकेलेपन एवं गुलामी ही आती है। ऐसी ही बाल विधवा विवाह के दुख को कहानी के माध्यम से व्यक्त कर महाश्वेता देवी ने समाज को इस दिशा में कार्य करने के लिए

निर्देशित किया है ताकि देश के करोड़ो विधवाओं को अभिशप्त गुलामी भरे जीवन से आजाद कराकर समाज की मुख्य धारा से जोड़ा जा सके। महाश्वेता देवी के द्वारा गंभीर विषयों में लिखी गई कहानियाँ आज भी प्रासंगिक है। इसी प्रकार से कहानी मूर्ती में भी असफल प्रेम की दास्ता के मुद्दों को महाश्वेता देवी ने उठाया है जो आज का ज्वलंत मुद्दा है। रूढ़िवादी परम्पराओं के कारण अंतरजातीय वैवाहिक संबंधों को समाज द्वारा स्वतन्त्रता पूर्वक स्थान नहीं दिया गया। हरियाणा की खाप पंचायते फतवा जारी कर प्रेमी युगलों को प्रताड़ित करती है। प्रेम विवाह आज भी भारत के कई रूढ़िवादी क्षेत्रों में अस्वीकार्य है। विधवा विवाह को भी भारतीय समाज खुले मन से अपना नहीं पाता। मूर्ति कहानी में पश्चिम बंगाल के पिछड़े गाँव में ठाकुर समाज में दुलाली नामक बालिका का दूसरे गाँव के ठाकुर के घर मात्र छः वर्ष की उम्र में बाल विवाह होता है। लेकिन दो वर्ष पश्चात् दुलाली के पति की मौत हो जाती है और इस ना समझ नन्हीं बालिका को विधवा का आवरण धारण कर विधवा बना दिया जाता है।

महाश्वेता देवी मूर्ति कहानी के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर करने का प्रयास करना चाहती है। जो बीसवीं सदीं की सर्वाधिक रूढ़िवादी परम्पराएं रहीं है। मूर्ति स्त्री की उपेक्षा, प्रताड़ना, असफल प्रेम की कहानी पर आधारित है। मूर्ति कहानी के माध्यम से लेखिका ने समाज के ज्वलंत समस्याओं को पुरजोर के साथ उठाया है। लेखिका का यह प्रयास इक्कीसवीं सदी के समाज सुधारकों जैसे राजा राम मोहन राय, महात्मा गांधी, बाल गंगाधर तिलक, गोपाल कुष्ण गोखले, सरोजनी नायडू आदि के साथ किए गए प्रयासों के कारण कारगर साबित हुआ है। जिन अर्न्तजातिय विवाह को बेमेल माना जाता था। विधवा का समाज परित्याग कर देता था। उसे पूरा जीवन प्रताड़ना स्वरूप बिना श्रंगार एवं पारिवारिक खुशीयों से दूर कर एकांत वास की सजा दी जाती थीं। महाश्वेता देवी जैसे साहित्यकारों के कारण समाज ने चेतना वश ऐसी परम्पराओं का

21वीं सदीं में त्याग किया है। पूर्व में अर्न्तजातिय विवाह को केवल मानने वाला समाज साहित्यकारों की चेतना के कारण हर्ष के साथ आज आसानी से अपना रहा है। मान्यता दे रहा है। पति की मौत के बाद एकांत वास की सजा व्याप्त महिलाएं आज आसानी से पुर्नविवाह कर समाज के मुख्य धारा से जुड़ रही है परन्तु मूर्ति कहानी से स्पष्ट होता है कि 20 वी सदीं ने इन रूढ़ीवादी परम्पराओं के कारण असीम प्रेम करने वाल दीनू एवं दुलाली को परिवार एवं समाज ने कभी मिलने नहीं दिया। जिसके कारण दीनदयाल वीरगती को प्राप्त हुआ, जबकि दुलाली पुरी उम्र अकेलेपन की यातना के साथ जीती रही।

महाश्वेता देवी की कहानियों में सामंती ताकतो के शोषण एवं उत्पीड़न का संघर्ष अनवरत जारी है। पीड़ित वर्ग हमेशा से ही धुतकारा जाता है। उसे इतनी उलाहना दी जाती है कि वह कभी भी सामंती ताकतों के समक्ष खड़ा न हो सके केवल जिंदा लाश बनकर उनकी सेवा करता रहे और शोषण का शिकार होता रहे। सामंती ताकतो की क्रूरता एवं बर्बरता के सामने वह हमेशा ही कमजोर बना रहे है। आधी आबादी को प्रताड़ित करने का क्रम जारी है। महाश्वेता देवी की कहानियाँ महिला उत्पीड़न, शोषण के खिलाफ कार्य करने का, समाज को शिक्षित करने के लिए प्रेरित करती है।

प्रेतछाया

प्रेतछाया कहानी में लेखिका ने इस अनुच्छेद के माध्यम से स्पष्ट किया है किः

मारे खौफ और दुःख के, कुमुद ने अनुनय किया,'भाई जी .....!'

'मेरे पैरों को काटकर बराबर कर देना, रे कुमुद । तब मैं छःफुट तीन इंच का नहीं रहूंगा । मैं भी सबकी तरह, पांच फुट के ऊपर, आठ या छः इंच का हो जाऊंगा। समझा, कुमुद?'

विजय सीढ़ियों से गिरने के बाद सिर पर गहरी चोट लगने के बाद तथा माधवी के प्रेम विषय की बात सोचकर पागल हो चुका था

और उसे पागल खाने ले जाने के लिए ट्रेन में बिठाकर उसका भाई ले जा रहा था। उसी दौरान जीस ऊंचे कद ने उसे असाधारण व्यक्ति बनाया था उसी ऊंचे कद की लम्बी छाया को देखकर वह अपने भाई से पूछता यह क्या है? उसका भाई कहता है यह आपकी ही परछाई है तब वह अपने भाई से कहता है कि मेरे पांव को कांट देना जिससे मैं सामान्य व्यक्ति की तरह नजर आने लगू। चलती ट्रेन में दोबारा उठ बैठता है और अपने भाई से चर्चा करते हुए अचानक ही ट्रेन की खिड़की से कूदकर आत्म हत्या कर लेता है।

असफलता एवं घोर निराशा के दौर से गुजरने वाला प्रत्येक व्यक्ति विकल्प के रूप मे आत्महत्या को ग्राहय कर लेता है। दुनियां में मानव मृत्यु के लिए आत्महत्या दसवा कारण है। सम्पूर्ण विश्व में प्रतिवर्ष दस लाख से ज्यादा लोगों के द्वारा आत्महत्या की जाती है। आत्महत्या की दर पुरूषों में महिलाओं की अपेक्षा ज्यादा है। डब्ल्यूएचओ के दक्षिण पूर्वी एशियाई जोन के क्षेत्रीय निर्देशक डॉ पूनम खेत्रपाल सिंह के अनुसार–विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार दक्षिण पूर्वी एशियाई जोन में आत्महत्या का सम्पूर्ण विश्व में 40 प्रतिशत हैं। जिसमें ज्यादातर 15 से 29 वर्ष आयु के युवा आत्महत्या करते है। प्रेतछाया कहानी में महाश्वेता देवी ने उल्लेखित किया है कि कहानी के मुख्य पात्र विजय समयानुसार समाज में स्वयं का अस्तित्व कायम नहीं कर पाता है। इसी असफलता एवं घोर निराशा के उपरान्त अंतत उसे आत्महत्या करनी पड़ती है। अंतिम समय में उसकी शारीर की विशाल काया की छाया भी प्रेत स्वरूप लगती है। लेखिका ने युवा वर्ग को मार्ग दर्शन देते हुए जागरूक करने का प्रयास किया है कि बिना विचलित हुए निश्चित समय पर अपने चरित्र का निर्माण कर लेना चाहिए। यही सफलता ने आत्महत्या जैसे अवसाद से दूर रखेगी।

शनीचरी

शनीचरी कहानी समयकाल एवं परिस्थितियों के कारण महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत ही नहीं अपितु विश्व में पुरूष वर्ग द्वारा मानवता का

त्याग कर महिलाओं के साथ जानवरों की तरह व्यवहार किया जाता है। इसके लिए नाना प्रकार के हत्थकण्डे अपनाये जाते है। ताकि स्त्री के शरीर को हासिल कर हवस पूरी की जा सके। मानवजाति के अस्तित्व में आने के बाद से ही स्त्री वर्ग के साथ अत्याचार कर सिलसिला शुरू हुआ था जो आज पर्यंत तक जारी है प्राचीन काल में शरीरिक शोषण के लिए दक्षिण भारत में देवदासी, उत्तर भारत में पर्दा प्रथा का सहारा लिया जाता था। वहीं राजपूताना शासन काल में युद्ध में हुई हार के बाद बंधक बनाये गये सेना को छुड़ाने के लिए विजय शासक के समक्ष भेंट स्वरूप स्त्रियां भेजी जाती थी जो जौहर प्रथा के नाम से प्रचलित थी। वर्तमान में स्त्री के शारीरिक शोषण के माध्यम समय अनुसार परिवर्तित हो गये है। आधुनिक काल में महिलाओं ने अपनी कार्य शैली को परिवर्तित किया है। गृहस्थ जवाबदारी के साथ–साथ वे बाहरी कार्यो में भी शामिल हो गई है लेकिन कार्य स्थल आज भी यौन उत्पीड़न का केन्द्र बन हुआ है। यात्रा के दौरान स्थानीय परिवहन के साधन बस, आटो, टैक्सी, ट्रेन कतारों में ,सार्वजनिक स्थलों में, सिनेमा घरों में, बाजारों में ,भीड़ –भाड़ के स्थलों पर अवसर पाकर अपराधिक प्रवृत्ति के पुरूष वर्ग शारीरिक शोषण का शिकार बनाते है। ईंट भट्टे हो या अन्य कार्य स्थल प्रत्येक कार्य करने वाली महिला को यौन उत्पीड़न का सामना करना ही पड़ता है। महाश्वेता देवी द्वारा महिलाओं की सबसे बड़ी कठिनाई की अनुभूति करते हुए सम्पूर्ण मानवीय समुदाय को अवगत कराने के लिए शनीचरी कहानी को माध्यम बनाया है। शनीचरी कहानी कार्यस्थल पर पुरूष वर्ग से प्रताड़ित हर महिला की कहानी जिन्हें परिस्थितियों वश शरीरिक यातनाएं देकर सताया गया हो। ऐसी महिलाओं की संख्या हमारे देश में लाखों में है। हवस पूर्ति के लिए पुरूष वर्ग द्वारा दिये गये दाग से पीड़ित महिला सम्पूर्ण जीवन भर उभर नहीं पाती हैं।

महाश्वेता देवी द्वारा बीसवीं सदी में लिखी गयी कहानियों की प्रासंगिकता 21 वी सदीं में भी बरकरार है। विशेषकर दुनिया की

आधी आबादी के शोषण, अस्मिता, चारित्रिक हनन, अपमान, अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, प्रेम संबंध, रूढ़िवादी परम्पराओं के आधार पर प्रताड़ित हो रही है। महिलाओं में अत्याचार, हरपल–हरक्षण लूटी जा रही अस्मिता पर असुरक्षा की भावना आज भी बनी हुई है। वर्ष 2014 में दिल्ली में एक चलती बस में पुरूष दरिंदो द्वारा दिल्ली की छात्रा के साथ उसके छात्र दोस्त की उपस्थिति के दौरान उसकी अस्मिता को तार–तार किया गया बल्कि दानवीय रूप धारण कर उसे मरनासन्न स्थिति में पहुंचा दिया गया। एक सप्ताह तक जीवन और मृत्यु के लिए संघर्ष के पश्चात् निर्भया की मौत हो गई। इस गंभीर मामले ने न केवल भारत वर्ष बल्कि पूरे विश्व को हिला कर रख दिया। सम्पूर्ण मीडिया जगत के प्राथमिकता के आधार पर महिला अस्मिता की रक्षा के लिए समाज को सोचने के लिए मजबूर कर दिया। इस घटना के बाद पूरे देश भर में चले महिना भर चौक चौराहे सार्वजनिक स्थलों पर महिला अस्मिता की रक्षा के लिए केंडल मार्च, मौन प्रदर्शन, रैली, धरना आन्दोलन चलाये गये। बुद्धजीवियों एवं कानूनविदों को नये एवं सख्त कानून बनाने के लिए प्रेरित किया गया। महिलाओं द्वारा पुलिस थानों में दर्ज कराई जाने वाले मामलों में पचास प्रतिशत यौन उत्पीड़न से संबंधित होते है।

कहानी के माध्यम से महाश्वेता देवी ने समाज को शिक्षित करने का प्रयास किया है कि इन यौन प्रताड़नाओं के कारण हताश, निराश महिलाओं को समाज द्वारा सहारा देकर उनके जीवन को सामान्य बनाने के लिए प्रयास करना चाहिए इन आहत महिलओं को दुबारा जी उठने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए ताकि वह इस सदमें से उभर कर पुन स्थापित होकर दूसरा जीवन शुरू कर सके। उन्होंने इस प्रकार की घटनाओं को नियंत्रित करने के लिए भी व्यवस्था तंत्र को सख्त कानून बनाने व समाज में चेतना जागृत करने का संदेश भी दिया।

भारतवर्ष

हमारे देश में कुल गांव की संख्या 5,93,731 के लगभग है। देश

की कुल आबादी का 72.7 प्रतिशत लोग गांव में रहते है। अर्थात् शहरी जनसंख्या केवल 27 प्रतिशत है। यह एक तिहाई से भी कम आबादी को केन्द्र, राज्य एवं स्थानीय सरकारों के द्वारा सर्वसुविधाएं उत्पलब्ध कराई जाती है। दूसरी ओर तीन चौथाई जनसंख्या वाला देश का हिस्सा जहां देश की आत्मा बसती हो उसे मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आजादी के 68 वर्ष का सफर तय करने के बाद भी प्रतीक्षा करनी पड़ रही है।

महाश्वेता देवी ने भारत वर्ष कहानी में भी देश के करीब 6 लाख गांव के आधे–अधूरे विकास की गाथा को उल्लेखित किया है। वह व्यवस्था तंत्र से कहना चाहती है कि शहर की तरह प्रत्येक गांव में भी पीने के लिए शुद्ध पानी, शिक्षा के आधुनिक संस्थाएं, रौशनी के लिए चौबीस घंटे बिजली मिलनी ही चाहिए। गांव के द्वारा उत्पादित खाद्यान तथा व्यवसायिक फसलों के माध्यम से ही देश लगातार प्रगति के पथ पर अग्रसर है। यह प्रगति ग्रामीणों के परिश्रम एवं मेहनत का प्रतिफल है परंतु उनके हिस्से की सुविधाएं उन्हें नहीं मिल पाती है। देश के हजारों गांव पिछड़े हुए जिन्हें संवारने के लिए प्रयास किये जाने की आवश्यकता है।

छुक–छुक, छुक–छुक आ गेल गाड़ी

महश्वेता देवी छुक–छुक, छुक–छुक आ गेल गाड़ी कहानी लिखते समय यह कहती है किः

मंदा हीरामन, उसकी चाबुक, मोटर साइकिल, पंच के खिलाफ उसकी बगावत, प्राचीर तोडने में गायकवाड़ की भूमिका–इन्हीं सब घटनाओं ने तो उसे सामाजिक कार्यकर्त्ता और बाद में, उस अंचल की जननेता बनाकर, सामाजिक बंधनों को चीरकर, धज्जी–धज्जी कर डालने का साहस दिया। लक्ष्मण के संगठन में ऐसी अनगिनत औरतें, आज अपने–अपने अंचलों का नेतृत्व कर रही हैं। जिन कार्यों को लेकर राजनीतिक–बौद्धिक महिला नेताओं में जोर–शोर से बहस–मुबाहसा छिड़ा हुआ है, वे कार्य, यह नॉन–मैट्रिक नौजवान

वर्ग गहरे आत्मविश्वास से किए जा रहा है। सेल्फ फ्लैजेलेशन का प्रसंग मैंने उठाया है। मन्दा हीरामन के लिये (अन्याय लाखों–करोड़ों लोगों की तरह मैं अम्मा और आई (मराठी में मां–आई) वगैरह–वगैरह हैं। नियोजनहीन परिवारों में संख्यातीत बच्चे। इस एक कहानी के जरिए कोल्हाटी आदिवासी लड़कियों और औरतों की कथा भी कही गई है। आज अनगिनत कोल्हाटी औरतें, समाज की पुरानी–धुरानी दीवारें, तोड़–फोड़कर चली आई हैं और मन्दा हीरामन के तमाशा थियेटर में शामिल हो गई है। दुर्गादास बन्द्योपाध्याय कृत विद्रोह में बंगाली नाम किताब पढ़ें, तो उसमें पूरी–पूरी जानकारी मिल जायेगी।

बेटियों को बेचने वाले इस घृणित समाज, अमानवीय परम्परा को ढोने की इस तिलस्म के टूटने पर समाज को सही राह दिखाने वाली छाबू को समाज से निकाल दिया जाता है छाबू इस आन्दोलन को आगे बढ़ाते हुए समाज द्वारा बेटी को बेचने की परम्परा को तोड़ते हुए बेटी बचाव आन्दोलन खड़ा करती है और अपने ही जैसे कई लड़कियों को सरे आम निलामी से बचाने में सफल हो जाती है।

दुष्यंत कुमार जी अपनी गजल के माध्यम से यह बताना चाहा है कि–उन्हीं के शब्दों में:

"कैसे आकाश में सुराख नहीं हो सकता
एक पत्थर तो तबीयत से उछालो यारो।"

————::::————

उपसंहार

इक्कीसवी सदी के बढ़ते विकास के चरण के साथ जहाँ आज मंगल ग्रह में बसने की तैयारी चल रही है। सूचना एवं क्रांति का अंबार लगा है उसकी निरंतर उन्नति के कारण दुनिया हमारी मुठ्ठी में आ चुकी है। ऐसे में इस सदी की कुछ समस्याएं भी उन्नति के साथ हमारी पीढ़ी को मिल रही हैं। इन समस्याओं में भ्रष्टाचार, कालाधन, अस्वच्छता, नारी उत्पीड़न, नक्सलवाद, दलित आदिवासियों का शोषण, अमीर एवं गरीब के मध्य की खाई, भूख, बंधुआ मजदूर, किसानो की जमीनों का अधिग्रहण, युवाओं में बढ़ता आत्महत्या का प्रचलन, विधवा विवाह, संयुक्त परिवारों के विघटन, कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ होने वाले यौन उत्पीड़न आदि ज्वलंत समस्याएं है। ये ज्वलंत समस्याएं समाज राष्ट्र एवं मानव जाति के लिए खतरा उत्पन्न कर रही है। इन्हीं सामाजिक समस्याओं को केन्द्र बिन्दु बनाकर महाश्वेता देवी लिखती रही है। उनके द्वारा विगत छह दशकों से रचित साहित्य सामाजिक चेतना जागृति के लिए महत्वपूर्ण है। उनकी कहानियां शासन तन्त्र को सुधार हेतु निरंतर प्रेरित कर रही है।

महाश्वेता देवी की कहानियों में और उनके पात्रों के चरित्र चित्रण में आज के समय के साथ महाश्वेता देवी खड़ी है। सामाजिक समस्याओं को हल करने में उनकी कहानियाँ और उनके विषय यथा महिला उत्पीडन, आदिवासियों के हितो की लड़ाई, सर्वहारा वर्ग की समस्याएं, ईट भट्टों में काम करने वाली महिलाओं का दैहिक शोषण आदि समस्याएं उनकी कहानियों में मुखरित हुए है। 30 वर्षो के सतत संधर्ष के साथ आदिवासियों के साथ रहकर उन्होंने जो कार्य किये और उनके हितों के लिए जो आन्दोलन चलाये यह उनका सराहनीय कार्य है। महाश्वेता देवी बंगाल तक सीमित न रहकर, उन्होंने आम जनता तक पहुंचाने का प्रयास किया। महाश्वेता देवी की कहानियां आज के समय में प्रासंगिक है। इक्कीसवीं सदी की समस्या के

निराकरण में महाश्वेता देवी का साहित्य एक कारगार उपाय है। महाश्वेता देवी कहती है कि उनका लेखन मानवीय पीड़ा का अंतहीन स्रोत्र है।

महाश्वेता देवी द्वारा कहानियों में से एक बांयेन कहानी में अन्ध विश्वास पर आधारित परंपरागत रूढ़िवादी कुरूतियों को झूठा साबित करने का प्रयास किया उन्होंने इस कहानी के पात्र चण्डी जो कि शमशान घाट मे लाशों का कफन–दफन का इंतजाम कर रखरखाव करने वाली परिवार की प्रतिनिधि की दिनचर्या को उल्लेखित करते हुए समझाने का प्रयास किया है कि वह कोई बांयेन (डायन) जैसी मिथ्या नहीं है बल्कि उसके हृदय में भी ममता है।

कोल्हाटी की मन्दा हीरामन की कहानी विशुद्ध सत्यकथा है, जो दुःसाहसी और सुन्दरी होने के साथ–साथ, संगठन के पुरूष कार्यकर्ताओं के साथ कदम से कदम मिलाकर चलती है और आत्मसम्मान की हिफाजत में साक्षात् बाघिन बनी रहती है। इन सब कबीलों में पुराने जमाने से ही, परिवार की बड़ी बेटी, देह–विक्रय के लिये क्यों लाचार होती है? अगर हिसाब लगायें, तो पता चल जायेगा, इसकी असली वजह तत्कालीन सुरक्षा, रोटी और आचार–व्यवहार के क्रय–विक्रय से जुड़ी हुई थी। बाद की समाज–व्यवस्था ने इसे रोटी–रोजगार के तौर पर प्रतिष्ठा प्रदान की। जो बात सीने पर चोट करती है, वह है उनका निर्भय, निष्पाप सौंदर्य। महाराष्ट्र के जामखेड़ा, नागौर, फालटन, डिकशूला, डोका आदि क्षेत्रों में कोल्हाटी समाज परिवार की सबसे बड़ी बेटी को सदियों से विक्रय करता आ रहा था। महाश्वेता देवी ने क्षेत्र के समाजसेवी लक्ष्मण गायकवाड़ से मिलकर आन्दोलन चलाया। माता पिता द्वारा तीन बार विक्रय की गई मन्दा हीरामन छाबू दो बच्चों की मां बनने के कारण पीड़ित थी। समाज की इस कुप्रथा को समाप्त करने का प्रण कर चुकी थी। लक्ष्मण गायकवाड़ एवं महाश्वेता देवी के आन्दोलन से प्रभावित होकर कुवारी बेटियों के विक्रय के इस कुप्रथा को समाप्त करने का संघर्ष शुरू कर दिया जिसे सफलता भी प्राप्त हुई। महाश्वेता देवी ने इसी सत्य कथा को कहानी छुक..छुक

आ गेल गाड़ी के माध्यम से लिखा है ताकि इस दर्द से पीड़ित अन्य महिलाएं भी समाज के इस घिनौने कृत्य को समाप्त कर सके। महाश्वेता देवी कहती है कि इस कहानी का लिखा जाना असंभव था। मैंने उन लोगों को जितना–जितना देखा, उससे कहीं ज्यादा, अनुभवों की गहराई में उतरकर, मैंने यह कहानी पढ़ी, लेकिन इतना–इतना देखकर, देखने के बाद कभी–कभी सीधा लिखना भी जरूरी होता है। मैंने भी लिख डाला।

विश्व स्वास्थ्य संगठन विश्व की साढ़े छह अरब आबादी में से प्रतिदिन भूखे सोने वाले अस्सी करोड़ लोगो को इस विकराल समस्या से उभारने के लिए पूरे विश्वे में योजनाएं चलाई जा रही है। हमारे भारत देश में यह समस्या का स्वरूप बहुत ही खतरनाक है। विश्व का हर चौथा भूखा व्यक्ति भारत से है। महाश्वेता देवी का साहित्य भी इस समस्या से अछूता नहीं रहा है। उनके द्वारा लिखीत बाढ़ कहानी भी भूख से संबंधीत है। उन्होंने भी इस कहानी के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति के लिए भोजन की अनिवार्यता का संदेश देने का प्रयास किया है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि खाद्य पदार्थ ही ऐसा माध्यम है जो समाज में व्याप्त ऊंच नीच के भाव को समाप्त करता है। उनकी बीज कहानी भी 'श्रम मेव जयते' के नारे का समर्थन करती है। बीज कहानी मजदूर एवं श्रमिक वर्ग को अधिकारों की प्राप्ती के लिए संघर्ष करने हेतु प्रेरित करती है।

ईंट भटट्ों में संचालको के द्वारा पुलिस एवं प्रशासन के साथ साँठ–गाँठ करके महिला श्रमिकों का शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक शोषण किया जाता था। शनीचरी कहानी में ईंट भटट्ों में कार्यरत महिलाओं के साथ हो रहे अत्याचार को उजागर किया। भारतवर्ष कहानी में देश की पिछड़े गांव की दुर्दशा का खुलासा किया है। उनकी मंशा थी कि शासन तन्त्र गांव की दुर्दशा से अवगत होकर गांव वालों को मूलभूत सुविधाएं प्रदान कर सके। प्रेतछाया कहानी युवा वर्ग को भविष्य निर्माण के लिए प्रेरित करती है। जबकि रांग नंबर कहानी वृद्धावस्था की अवदशा को व्यक्त करती है।

दरअसल दक्षिण बिहार, बंगाल, उड़ीसा, गुजरात व महाराष्ट्र की जनजातियों के बीच वर्षो काम करने के अनुभव ने महाश्वेता को पैनी दृष्टि और ऐसी शक्ति दी जिससे वे आधुनिक भारतीय जीवन के पीड़ा दायक मुद्दों का अनुभव कर सकीं और अपनी कृतियों में अभिव्यक्त कर सकीं। आदिवासियों के जीवन और वृतांत के माध्यम से उन्होंने इतिहास, मिथक और वर्तमान राजनैतिक यथार्थ के ताने–बाने को सँजोते हुए सामाजिक परिवेश की मानवीय पीड़ा को स्वर दिया। भारतीय अदिवासी समाज और दूसरे उपेक्षित–वंचित तबकों के बारे में ही उन्होंने ज्यादा लिखा है। अपनी ढाई सौ पुस्तकों के जरिए उन्होंने जीवन के विविध रंगो को उकेरा। और तीन दशकों से ज्यादा समय से उन्होंने आदिवासियों के बीच फील्ड वर्क ही नहीं बल्कि पलामू के बंधुआ मजदूरों, मेदिनीपुर के लोधा और पुरूलिया के खेड़ियर शबा आदिवासियों के जीवन को अपनी लेखनी के जरिए वाणी भी दी। जाहिर है महाश्वेता के कर्म और कथा में रती भर फर्क नहीं हैं। महाश्वेता की कृतियाँ पढ़कर ही रचना कर्म के महत्व और लेखक के सामाजिक सरोकार को समझा जा सकता है।

महाश्वेता देवी की कहानियों में निष्कर्ष बड़ा ही स्पष्ट है कि पुरूष प्रधान समाज के द्वारा वह किसी भी काल परिस्थिति में अपने वर्चस्व को बनाये रखना चाहता है। इस वर्चस्व को कायम रखने के लिये किसी भी स्तर तक जा सकता है। भले ही उसके द्वारा बनाई गई योजनायें षड्यंत्र जन्मदात्री वर्ग या दुनियां की आधी आबादी महिलाओं को भारी नुकसान क्यों न हो पुरूष के षड्यंत्र की शिकार ये महिलाये युगों से पार पाने के लिए संघर्ष करती आ रही है। लेकिन उन्हें अब तक मुक्ति नहीं मिली है। समय के अनुसार योजना एवं षड्यंत्र भी घातक होते जा रहे है। पूर्व में जहां महिलाओं को केवल चार–दीवारी में कैदकर केवल उपभोग की वस्तु बनाकर रख दिया गया। समाज सुधारकों के द्वारा किये गये प्रयासों के पश्चात् शिक्षित होकर महिलायें घरेलू जवाबदारियों के साथ–साथ देश के निर्माण में भी व्यवसायिक होकर सहयोग करने लगी है। लेकिन इन काम काजी

स्थलों पर भी उसे अस्मिता की रक्षा के लिए परेशान होना पड़ता है। विभिन्न प्रकार के प्रतिबन्ध ही केवल महिलाओं पर लागू किये जाते है। चाल ढ़ाल पहनावे–ओढ़ावे पर टिप्पणियां भी महिलाओं पर ही होती है। पति की मौत के पश्चात् विधवा होने की त्रासदी भी अकेली महिलाओं को ही झेलनी पड़ती है। वही दूसरी ओर जीवन संगिनी की मौत के बाद भी पुरूष वर्ग के लिए विवाह का विकल्प खुला रहता है। प्रताड़ना के लिए महिलाओं के लिए डायन, डाकिनी, टोहनी, बांयेन, भूतनी आदि व्याखया भी पुरूष वर्ग समाज ने ही दी है। दूसरी ओर पुरूषों पर इस प्रकार के चारित्रिक आरोप लगाने के लिए कोई भी शब्द समाज के पास नहीं है।

दुष्यंत कुमार ने चारों और मौजूद दुनिया को समझने की ही नहीं बल्कि उसे बदलने की कोशिश की है। दुष्यंत कुमार के ही शब्दों में:

"तेरे सीने में ना सही, मेरे सीने में सही
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।
कोई हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं
मेरी कोशिश है कि यह सूरत बदलनी चाहिए।"

————::::————

Dr. SUREKHA JAWADE (born at Nagpur, Maharashtra, 1976) is Head of Department (Hindi), Assistant Professor& Associate NCC Officer at St. Thomas College, Bhilai (C.G). She has been contributing in the development of Higher Education from past 23 years. She has done M.A.(Hindi), M.A. (Economics), M.A. (Psychology), M.Ed and M.Phil (Education).

She was Awarded Ph.D. in Hindi in 2017 for her specialization is on Mahashewta Devi Ki Kahaniyo Main Samajik Chetna. She has also completed one Minor Research Project funded by UGC.

She has been awarded Rajyapuraskar (Bharat Scouts and Guides) in 1991. Exceptional Talent award in NIAP (Commandant Certificate of Merit) in 2014 and Chief Minister Award for Best ANO at NCC events in 2019.

She has published more than 20 Research Papers in Various Journals. She has also published two books and one chapter in Women's Hindi book.She has conducted two National Webinars, more than five Community development programs and one 10 days Certificate Program.

9 788195 180097

₹ 350

ADITI PUBLICATION

Near Ice Factory, Opp. Shakti Sound,
Service Gali, Kushalpur, Raipur (C.G.)
Mob. 91 94252 10308
E-mail:shodhsamagam1@gmail.com,
www.shodhsamagam.com